कृषि-ज्ञान-कोष

खेती-संबंधी सब प्रकार की जानकारी देनेवाली पुस्तक

डा० नारायण दुलीचंद व्यास

•

१९५५

सत्साहित्य-प्रकाशन,

प्रकाशकीय

हमारा देश कृषि-प्रधान देश है। उसकी जन-संख्या का बहुत बड़ा भाग खेतीबारी पर निर्वाह करता है लेकिन खेद की बात है कि हिन्दी में ऐसे साहित्य का बड़ा अभाव है, जो खेती के विषय में वैज्ञानिक ढंग से पूरी जानकारी दे सके। हमारे अधिकांश किसान वैसे आज भी अपढ़ हैं, लेकिन यह जानने के लिए वे बड़े ही उत्सुक हैं कि खेती में किस प्रकार उन्नति हो सकतीं है और उत्पादन किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक इस विषय का बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है। खेती से संबंधित प्रायः सभी आवश्यक जानकारी इसमें आ गई है। सामग्री को चार खण्डों में विभाजित किया गया है। पहले खण्ड में कृषि-संबंधी विषयों की जानकारी है, दूसरे में विभिन्न फ़सलों की खेती, तीसरे में साग-भाजी की खेती और चौथे में फलों की खेती के बारे में बड़े ही विस्तार से प्रकाश डाला गया है। अंत में कई परिशिष्टों में बहुत-से ज्ञानवर्द्धक आंकड़े दिये गये हैं। इस प्रकार अपने विषय की यह बड़ी ही उपयोगी पुस्तक बन गई है।

लेखक ने व्यावहारिक अनुभव के आधार पर इस पु तक को लिखा है। बहुत वर्षों तक वह हमारे देश की एक सुविख्यात कृषि-अनुसंधान-शाला से सम्बद्ध रहे हैं। चूंकि यह पुस्तक अनुभव के आधार पर लिखी गई है, इसलिए खेती-बारी में संलग्न व्यक्तियों के लिए तो लाभदायक सिद्ध होगी ही, साथ ही इस विषय के अजानकार लोगों में भी खेती के प्रति जिज्ञासा और रुचि उत्पन्न करेगी।

हम चाहते हैं कि राष्ट्र की समृद्धि में रुचि रखनेवाले प्रत्येक पाठक के हाथ में यह पुस्तक हो।

—मंत्री

प्रस्तावना

वर्तमान वैज्ञानिक युग में अनेक देशों ने कृषि-कला में बहुत जल्दी उन्नति की है, परन्तु हमारा कृषि-प्रधान भारत बहुत धीमी गति से चल रहा है। इसके मुख्यतः दो कारण हैं। एक तो यह कि हमारे कृषक, जिन्होंने सदियों के अनुभव के आधार पर कृषि-कला की जिन पुरानी बातों को अपना लिया है, उन्हें छोड़ना नहीं चाहते। दूसरी बात यह है कि उन्हें ऐसी सामग्री भी नहीं मिलती, जिसपर पूर्णरूप से भरोसा करके नई रीतियों को अपनावें। ऐसे पात्रों का भी बहुत-कुछ अभाव है, जो निजी अनुभव के आधार पर हमारे कृषकों को निश्चित रूप से उन्नति का मार्ग दिखलावें। जो प्रचारक अथवा ग्रामसेवक सरकार की ओर से भेजे जाते हैं उन्हें एक बताये हुए कार्य-क्रम के आधार पर चलना पड़ता है। उन्हें न तो तर्क-वितर्क का अवसर मिलता है और न अधिकांश के पास कोई ऐसा संचित साहित्य या जानकारी होती है, जिसके द्वारा कृषि के कई जटिल पहलुओं को हल कर सकें।

अन्य अनेक देशों के कृषक काफी शिक्षित हैं और उन्हें उनकी आवश्यकता की पूर्ति करनेवाला कृषि-साहित्य भी मिल जाता है फिर भी वहां प्रचारक रक्खे जाते हैं, जिनसे कृषकों को काफी सहायता मिलती है। हमारे यहां तो अपनी राष्ट्र-भाषा में कृषि-साहित्य का अभाव-सा ही है और अधिकांश कृषक अशिक्षित हैं। ऐसी स्थिति में हमारे यहां योग्य प्रचारकों तथा ग्राम-सेवकों का होना अत्यन्त आवश्यक है, चाहे वे सरकारी कर्मचारी हों अथवा सेवाभावी युवक। ऐसे सज्जन के हाथ में कोई ऐसा साहित्य होना अत्यन्त आवश्यक है, जिसके आधार पर वे कृषकों को लाभप्रद परामर्श देकर कृषि को उन्नत करें और हमारे देश को कम-से-कम इस कला में तो स्वावलम्बी बनावें।

अनेक बार मेरा ऐसा विचार हुआ कि एक छोटी-सी पुस्तक लिखी

जांय जिसमें कृषि-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण बातों का संक्षिप्त लेकिन स्पष्टरूप से समावेश हो ताकि शिक्षित कृषक, तथा नवयुवक कृषि-जैसे स्वतन्त्र मार्ग को अपनाना चाहें तो अपनाकर अपने देश का गौरव बढ़ावें। ऐसा विचार आता तो रहा, परन्तु कार्यान्वित अनेक कारणों से न हो सका। कुछ मित्रों के आग्रह से अब यह पुस्तक 'कृषि-ज्ञान-कोष' लिखी गई। गागर में सागर भरने का प्रयत्न किया गया। इसमें मुझे कितनी सफलता मिली, इसका अनुमान इसकी उपयोगिता द्वारा ही हो सकेगा।

इस पुस्तक की तैयारी में मुझे समय-समय पर भारतीय कृषि अनुसंधान-शाला के अध्यक्ष डाक्टर बी. पी. पाल से योग्य सलाह मिलती रही और श्री कालीदास साहनी, अन्य विशेषज्ञों तथा विकास योजना के कृषि-सलाहकार ने विषय-निर्माण तथा कुछ विषयों पर विशेष प्रकाश डालने की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया जिसके लिए में उपर्युक्त सज्जनों का विशेष ऋणी हूं।

बीज की उन्नत जातियों के नम्बर तथा नाम के चुनाव में केंद्रीय कपास कमेटी के सेक्रेटरी श्री पी. डी. नायर (लेखक के सहपाठी), केन्द्रीय चावल अनुसंधानशाला के अध्यक्ष डा. यू. पार्थसारथी, उत्तर प्रदेश के कृषि-विभाग के बनस्पति-विशेषज्ञ डा० त्रिभुवनराम मेहता, बनस्पति-विशेषज्ञ श्री आर. बी. देशपांडे तथा एक गन्ना-फार्म के संचालक श्री सुब्बाराव से विशेष सहायता मिली, इसलिए मैं उपर्युक्त सज्जनों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

अन्तिम आभार मैं उन सज्जनों के प्रति प्रकट करता हूँ जिन्होंने मेरी अन्य कृषि-सम्बन्धी पुस्तकों का अध्ययन कर इस पुस्तक के लिए तैयार किया और इसकी तैयारी में समय-समय पर योग्य सलाह देते रहे।

फसलों के वैज्ञानिक नाम श्री चटर्जी[१] और श्री रन्धावा के सुझावानुसार दिये गए हैं और कोष्टक में पुराने नाम भी दे दिए हैं।

---

(१) Chatterji D., Randhawa G. S. 1952.
The Indian Journal of Horticulture vol. ix No. 4 Dec. 1952.

खाद्य तत्वों के रासायनिक नाम केन्द्रीय शिक्षा-मंत्रालय द्वारा प्रकाशित शब्द-कोष के आधार पर दिये गए हैं। लेखक की पहली पुस्तकों में नाइट्रोजन का नाम नत्रजन, फोसफोरस पेन्टाक्साइड (P_2O_5) का नाम स्फुर तथा पोटेशियम आक्साइड का नाम पोटाश था, उन्हें बदलकर अब नाइट्रोजन, फासफोरस पेन्टाक्साइड और पोटेशियम आक्साइड रक्खा गया है और सांकेतिक चिह्न नाइट्रोजन का ना., फोसफोरस पेन्टाक्साइड का फा. पे. और पाटेशियम आक्साइड का पो. आ. रक्खा है।

—नारायण दुलीचन्द व्यास

विषय-सूची

पहला खंड

दूसरा खंड

तीसरा खंड

चौथा खंड

परिशिष्ट

कृषि-ज्ञान-कोष

कृषि-ज्ञान-कोष

पहला खंड

कृषि-संबंधी विषयों की जानकारी

१—जन-संख्या और अन्नोत्पादन

भारत की जन-संख्या सन् १९५१ की गणना के आधार पर ३५६,८२९-४८५ [१] है, जिनमें १८३,३०५,६५४ पुरुष और १७३,५२३,८३९ स्त्रियां हैं। कृषि पर निर्भर रहनेवाले २४९,१२२ ४४९ लोग हैं।

साधारणतः जनसंख्या का ७० प्रतिशत भाग स्त्री-पुरुष और शेष ३० प्रतिशत दस साल या उससे कम उम्र के बच्चों का माना जा सकता है। यदि दो बच्चों को एक पुरुष के बराबर माना जाय तो इस हिसाब से वयस्क व्यक्तियों के रूप में ७०+१५=८५ प्रतिशत जन-संख्या हुई। पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या का ८६ प्रतिशत [२] वयस्क व्यक्तियों के रूप में माना गया है। यदि हम ८६ प्रतिशत से गणना करें तो हमारी जन-संख्या ३०.६९ करोड़ होती है।

यदि हम प्रति व्यक्ति ८ छटांक धान्य और १.५ छटांक दाल की आवश्यकता समझ कर गणना करें तो सारे भारत के लिए ४९३ लाख टन धान्य और लगभग ९२ लाख टन दाल चाहिए।

---

१. Census of India Paper No. 1. P. 6,10, 1954. **उपर्युक्त जनसंख्या में जम्मू और काश्मीर की अनुमानित जनसंख्या ४४ लाख शामिल नहीं है।**

२. The First Five Year Plan 1951 P. 68

इस पुस्तक की परिशिष्ट संख्या १३ में दिये गए १९५२-५३ के अंक देखें तो ज्ञात होगा कि हमारी उपज लगभग ४७६ लाख टन धान्य की और ८५ लाख टन दाल की है, अर्थात् वर्तमान स्थिति में हमारे पास ४९३-४७६=१७ लाख टन धान्य और ९२-८५=७ लाख टन दाल कम है।

स्मरण रहे कि उपर्युक्त उपज में से कुछ भाग हमें बीज के लिए छोड़ना होगा और दालों का कुछ भाग पशुओं को खिलाने के काम भी आता है। ऐसी स्थिति में हमारी उपज जनसंख्या को खिलाने के लिए १७+७=२४ लाख टन ही नहीं, बल्कि और भी कम होगी।

पशुओं के खाने में जितना अन्न खर्च होता है इसकी गणना करना कुछ कठिन है; परन्तु बीज की आवश्यकता की गणना उपर्युक्त परिशिष्ट में दी गई सारणी के १९५२-५३ के आंकड़ों के आधार पर प्रति एकड़ उपज निकालकर तथा बीज की गणना प्रति एकड़ गिनकर निकाल सकते हैं—

	उपज मन प्रति एकड़	बीज की दर सेर प्रति एकड़	बीज के लिए उपज का प्रतिशत
गेहूं	७.६४	४०	१३
चावल[1]	८.५४	१५	४.४
जौ	९.६६	३०	७.८
जुवार	४.३६	१५	२.९
बाजरा	३.१६	५	३.९
मक्का	८.०५	५	१.५
रागी	६.२३	३	१.२

१. धान छींट कर या रोपकर बोते हैं। छींट कर बोने में कई स्थानों में एक मन प्रति एकड़ पड़ता है। रोपकर बोने में बीस-पच्चीस सेर लगता है। जापानी रीति से लगभग दस सेर धान काफी होता है।

छोटे धान्य	४.३५	३	१.७
उड़द	२.८२	६	५.४
कुलथी	१.८५	१०	१३.५
खिसारी	३.७५	१५	१०.०
चना	५.९३	२०	८.४
तूर	७.४३	६	२.०
मटर	७.४३	२०	६.७
मसूर	४.७३	५	२.६
मूंग	१.९६	५	६.४
मोथ	२.३७	४	४.२
अन्य	३.७५	१०	६.७

उपर्युक्त गणना से ज्ञात होगा कि विभिन्न अन्नों की उपज का १.२ प्रतिशत से लेकर १३.५ प्रतिशत तक बीज के लिए रखना होगा। ऐसी स्थिति में हमें अपनी उपज काफी बढ़ानी है जो या तो नई जमीन जोत कर या जुताई, खाद, सिंचाई में सुधार करके और चुने हुए बीज बोकर अथवा कीट-व्याधि से फसलों की रक्षा करके वर्तमान जोत वाली भूमि से बढ़ानी होगी।

इसके साथ अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या का भी विचार रखना है, उन्हें भी भोजन देना है और ऐसी संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है।

२—मास, ऋतु, नक्षत्रादि चक्र

अधिकांश स्थानों में कृषक-गण अपना कार्यक्रम नक्षत्रों के आधार पर करते हैं और चूंकि हमारे नवशिक्षित पाठकों में से कई को नक्षत्र, हिन्दी-अंग्रेजी मास तथा ऋतुओं का पारस्परिक संतुलन का ज्ञान पूरा-पूरा नहीं होता। इसलिए यहां पर इस चक्र द्वारा समझाने का प्रयत्न किया गया है। चूंकि तिथियां घटती-बढ़ती रहती हैं, इसलिए कुछ ही दिनों का अन्तर हो सकता है। देखिए पृष्ठ सं. १८, चित्र सं० १

उपर्युक्त चक्र से ज्ञात होगा कि मौसम तीन गर्मी, बरसात और सर्दी
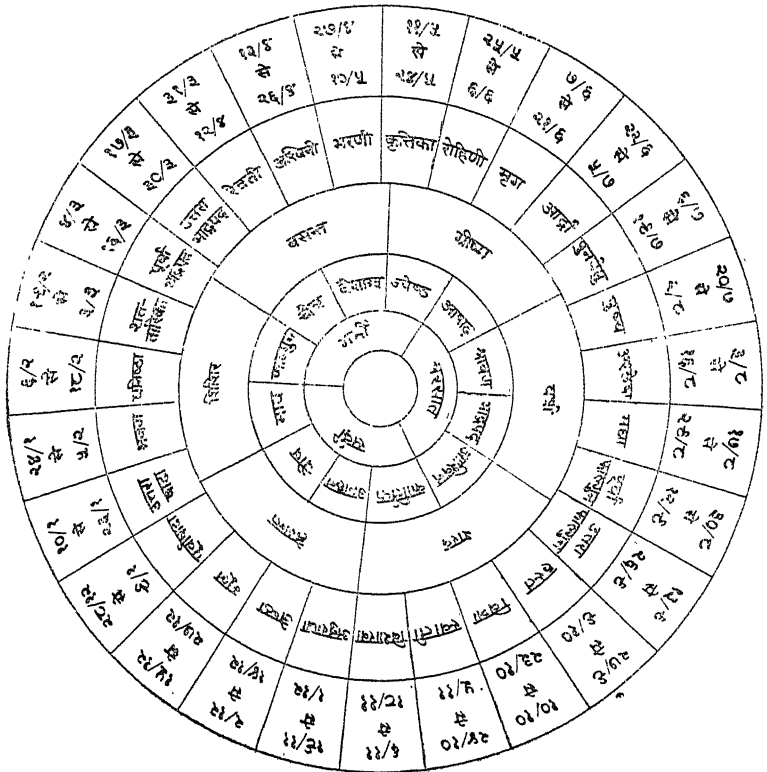
चित्र नं० १

और ऋतु छह ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर और वसन्त होती हैं। प्रत्येक मौसम में चार महीने और प्रत्येक ऋतु में दो महीने पड़ते हैं। नक्षत्र साल भर में २७ होते हैं। बहुधा अश्विनी से गणना की जाती है। उपर्युक्त चक्र से इन सबका अंग्रेजी महीने और तारीखों से भी संतुलन हो जाता है। इसी चक्र से यह भी ज्ञात होगा कि बरसात का मौसम आधे मृगशिर से प्रारम्भ होकर आधे चित्रा तक रहता है। इसलिए खेती-सम्बन्धी कहावतें अधिकतर उपर्युक्त नक्षत्रों की मिलती हैं।

३—कृषि-सम्बन्धी कुछ कहावतें

नक्षत्र-सम्बन्धी :

चढ़ते वर्षे आद्रा उतरे वर्षे हस्त
कितने राजा डांडले आनन्द रहे गृहस्थ।
जो कहुं मघा में बरसे जल, सब नाजों में होगा फल।
हस्त बरसे तीन होय शाली सक्कर मास
हस्त बरसे तीन जाय तिल कोदों कपास।
हथिया पूंछ डोलावे, घर बैठा गेहूं आवे।
चित्रा गेहूं स्वांति भूसा, अनुराधा में नाज न भूसा।
चना चित्रा चौगुना स्वांति गेहूं होय।

मास-सम्बन्धी :

आषाढ़ मास पूनो दिवस बादल घेरे चन्द
तो भड्डर जोशी कहे होवे परमानन्द।
सावन केरे प्रथम दिन उगत न दीखे भान
चार महीना बरसे पानी याको है परमान।
सावन बदली चौथ की जो मेघा बरसाय
घाघ कहे घाघिन से साल सबाई जाय।
सावन शुक्ला सप्तमी उगत जो दीखे भान
या जल मिलि है कूप में या गंगा अस्नान।

सावन शुक्ला सप्तमी उभरे निकसे भान
हम जाये पति माइके तुम जाओ गुजरात ।
सावन पहली पंचमी चन्दा धिरक करे
की जल देखे कूप में की सुन्दरी नीर भरे ।
सावन सूखा सियारी भादों सूखा उन्हारी ।
आसौजा यदि मावसा जो आवे शनिवार
होवै समया किरकिरा जोसी कहे विचार ।
पूस उजाली सप्तमी आठै नवमी गाज
मेह होय तो जानि लौ अब सरि है सब काज ।
माघ मास जो पड़े न सीत मंहगा नाज जानियो मीत ।
माह उजारी तीज को बादल बिजुली देख
गेहूं जो संचय करो मंहगो होवे पेख ।
फागुन माही बहे पुरवाई तब गेहूं में गेरुई धाई ।

दिन-सम्बन्धी :

बुध बृहस्पति दोनों भले शुक्र न भले बखान
रवि मंगल बोनी करे द्वार न आवे धान ।
पांच मंगल होवे फाल्गुनो पूस पांच शनि होय
काल पड़े कह भड्डरी बीज बोओ मति कोय ।

जुताई-सम्बन्धी :

मेढ़ बांध दस जोतन करे दस मन बीघा मोसो लें ।
दो हल खेती एक हलवारी एक बैल से भली कुदारी ।
दस हल राव आठ हल राना चार हलों का बड़ा किसाना ।
एक हल हत्था दो हल काज तीन हल खेती चार हल राज ।
जो कपास न गोड़ी उनके हाथ न लगे कौड़ी ।
जोते खेत घास न टूटे ताकर भाग सांझ ही फूटे ।

खाद-सम्बन्धी :

वही किसानी में है पूरा जो छोड़े हड्डी का चूरा ।

गोबर मैला नीम की खली इनते खेती दूनी फली ।
सन के डठंल खेत छिटावे तिनते लाभ चौगुनो पावे।

सिंचाई-सम्बन्धी :

गेहूं आवे बाल खेत बनाओ ताल ।

बोआई-सम्बन्धी :

आलू बोये अंधेरे पांख खेत में डारे कूढ़ा राख।
समय समय पर करे सिंचाई दूना आलू घर में आई।
कदम कदम पर बाजरा मेढ़क कूदे जुवार।
ऐसो जो बोवे कोई घर घर भरे कोठार ।

अन्य :

धान गिरे सौभागे का गेहूं गिरे अभागे का।
बिन बैलन खेती करे बिन भैयन के रार
बिन महरारू घर करे चौहद साख लबार।
तीतर, पंखी, बादरी बिधवा काजल रेख
यह बरसे वह घर करे यामें मीन न मेख।

पशु-सम्बन्धी :

सींग मुढ़े माथा उठा मुंह का होवे गोल
रोम नरम चंचल करण तेज बैल अनमोल।
नीले कन्धा बैगन खुरा कबहुं न निकले कंथाबुरा ।
छोटा मुंह एंठा कान यही बैल की है पहचान।
हिरन मुतान और पतली पूंछ बैल बसाही कंत बेपूछ ।

कटाई-ओसाई :

चना अधपका जौ पका काटे गेहूं वाली लटका।
पछिया हवा ओसाये जोई घाघ कहे घुन कबहु न होई।

चना पूरा पकने पर काटा जाय तो फल बहुत गिर जाते हैं। जौ का डंढल बड़ा मजबूत होता है, सो पूरा पकने पर काटने से हानि नहीं होती । गेहूं

को प्रातःकाल में जब वातावरण में नमी रहे तब काटना चाहिए, नहीं तो दाना झड़ जाता है ।

पछिया हवा सूखी होती है । इससे बीज अच्छे सूख जाते हैं और घुन नहीं लगता । अनाज में १० शतांश से अधिक पानी नहीं होगा तो घुन नहीं लगेगा ।

४—मौसम की सूचना और उससे लाभ

मौसम की सूचना आकाशवाणी के देहाती प्रोग्राम में तथा अखबारों में निकलती रहती है, जिससे आगामी एक-दो दिन में कैसी स्थिति होगी, यह दिया रहता है । इन सूचनाओं पर भी कृषकों को ध्यान देना चाहिए । यदि ऐसी सूचना से यह ज्ञात हो जाय कि तापमान बहुत गिरेगा अथवा वर्षा की सम्भावना है तो उसी भांति कृषकों को फसल अथवा खलिहान में माल पड़ा हो तो उसे, जलवायु के बुरे प्रभाव से बचाने का प्रबन्ध करना चाहिए । उदाहरण के लिए लीजिए कि पाला गिरने की संभावना है तो पाले से बचाने के उपचार द्वारा रक्षा हो सकती है । यदि माल खलिहान में पड़ा है और वर्षा की सम्भावना है तो उसे जल्दी तैयार कर या ढककर बचाया जा सकता है । यदि सिंचाई की आवश्यकता हो और एक-दो दिन में वर्षा आने की सूचना मिल जाय तो उस कार्य को स्थगित किया जा सकता है ।

कुछ प्राकृतिक घटनाएं भी ऐसी हैं जिनका जलवायु से सम्बन्ध होता है जैसे—(१) अतिवृष्टि (२) अनावृष्टि (३) ओले (४) हिमपात (५) आंधी (६) आग इत्यादि ।

अतिवृष्टि खेतों को सब जगह हानि पहुंचाती है । इससे रक्षा के लिए यह हो सकता है कि खेतों में पानी ठहरने न दिया जाय । वर्षा के बन्द होते ही खेतों को देखकर जिधर से पानी निकलने की सुविधा हो, निकाल देना चाहिए । अथवा यह भी हो सकता है कि खरीफ की फसल के बीच रबी की फसल बो दी जाय, जैसे कपास की कतारों के बीच चना ।

अनावृष्टि से हानि वहां पहुंचती है, जहां सिंचाई का अभाव हो । यदि पहले से ज्ञात हो जाय तो कुछ प्रबन्ध किया जा सकता है, जैसे खेतों के

आसपास मेढ़ बांधना, जिससे जो भी पानी गिरे खेतों में ही रह जाय। फसल भी ऐसी चुनी जाय जो कम वर्षा में हो जाय, जैसे बाजरा कम वर्षा में हो सकता है और जुवार को अधिक पानी चाहिए।

ओले—इनसे बचाना तो वैसे ईश्वराधीन है; परन्तु यदि पहले पता लग जाय और फसल थोड़ी हुई तो उसे काट सकते हैं।

हिमपात—सर्दी के दिनों में कभी-कभी रात को वातावरण का तापमान इतना गिर जाता है कि पाला गिरने लगता है जिससे कई फसलें नष्ट हो जाती हैं। फलों के वृक्षों को भी काफी हानि पहुंचती है। हिमपात या पाले का अनुमान दिन के वातावरण से किया जा सकता है। जब सर्दी के दिनों में बहुत जोर की ठण्डी हवा चले तब समझना चाहिए कि उस रात को पाले की सम्भावना है।

इससे बचाने के लिए नर्सरी में तो पौधों पर साया करवा देना चाहिए। फलों के नये-नये पौधों पर पहले से ही सर्दी के दिनों में घासपात या चटाई से छाया करानी चाहिए। बड़े खेतों में जहां ऐसा करना असम्भव है, लेकिन सिंचाई की सुभिता हो तो उन्हें दिन में सींच देना चाहिए। ऐसा करने से उन खेतों का तापमान अपेक्षाकृत कम गिरता है और फसल बच जाती है।

दूसरा उपाय यह है कि रात को मध्य रात्रि के समय खेतों के आसपास कुछ धुंआ कर देना चाहिए, ताकि खेतों पर धुंआ मंडराने लगे। पाले की मार बहुधा रात्रि के तीसरे या चौथे प्रहर में होती है। उस समय यदि धुंआ खेतों पर मंडराता रहे तो तापमान उन खेतों में इतना नहीं गिरता कि पाला हानि पहुंचाए। खेतों की मेढ़ों पर छोटी-छोटी ढेरियां घासपात की लगा और उनपर थोड़ा पानी छींट देना चाहिए ताकि जल्दी से न जल जाय, बल्कि धीरे-धीरे जल कर धुंआ बनता रहे। ऐसी ढेरियों में मध्य रात्रि में आग लगानी चाहिए।

आंधी—जहां-जहां आंधी की सम्भावना हो, ऐसे स्थानों में 'आंधी-रोक' वृक्ष लगाना चाहिए, जो हवा को रोक कर उनके पीछे लगी रहने वाली फसलों को बचा सके।

आग—अधिकतर गर्मी के दिनों में लगती है। इसके लिए प्रत्येक फार्म पर गैस बुझाने वाली औषधि के पीपे रखना चाहिए। जंगलों में घास की गंजी लगाई जाय तो उसके लगाने के पहले उस जगह के घासपात और उनके डंठलों को जला देना चाहिए। कम-से-कम इतना क्षेत्रफल जला देना चाहिए कि गंजी से बीस-पच्चीस फुट तक का घेरा घासपात-रहित रहे।

५—ताप-परिमाण, जलवायु और उनका खेती पर असर

ताप-परिमाण और जलवायु का कृषि से घनिष्ट सम्बन्ध है। इन्हीं पर फसलों का चुनाव और उनकी बाढ़ निर्भर है। अनुकूल जलवायु और ताप-परिमाण मिलने पर ही कृषक अपनी फसलों को इच्छानुसार उत्पन्न कर लाभ उठा सकते हैं। हमारे देश में सब प्रकार की जलवायु और तापमान पाये जाते हैं। इससे जहां जैसी अनुकूलता हो, वैसी फसलें उपजाई जा सकती हैं।

तापमान :—

वर्तमान समय में उष्णता की नाप दो प्रकार के तापमापक यन्त्रों से की जाती है। एक का नाम "सेंटीग्रेड थर्मामीटर" और दूसरे का "फेहरनहीट थर्मामीटर" है। वैज्ञानिक रसायन-शाला में बहुधा पहले का उपयोग होता है और शरीर तथा वातावरण की गर्मी नापने के लिए दूसरा यन्त्र काम में लाया जाता है। बहुधा एक के अंक को दूसरे के अंकों में परिवर्तन करना पड़ता है, जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र काम में लाये जाते हैं।

सेन्टीग्रेड के मान को फेहरनहीट में बदलना

$$\frac{\text{डिग्री सेन्टीग्रेड} \times ९}{५} + ३२ = \text{डिग्री फे. हीट}$$

फेहरनहीट के मान को सेन्टीग्रेड में बदलना

$$\frac{(\text{डिग्री फेहरनहीट} - ३२) \times ५}{९} = \text{डिग्री सेन्टीग्रेड}$$

तापमान के न्यून, औसत और अत्यधिक ऐसे तीन अंक जलवायु की रिपोर्ट में पाये जाते हैं। बीज का उगना एक सीमित तापमान में होता है। उससे कम होने से बीज नहीं उगते और अधिक होने से अंकुर तो पैदा हो जाते हैं; पर बाढ़ ठीक नहीं होती और अंकुर मर भी जाते हैं।

उत्तमोत्तम तापमान पौधों की जाति के अनुसार पृथक्-पृथक् होता है। साधारणतया २८°-२९° से लेकर ३४°-३५° सेन्टीग्रेड ठीक होता है। बरसात में बोये जाने वाले बीज के लिए तापमान कुछ ऊंचा होता है। स्मरण रहे कि बहुत ऊंचा ५०° से ऊपर का तापमान ठीक नहीं होता। इससे बीज अंकुरित होकर मर जाते हैं। दूसरी ओर १०°-१२° से. ग्रे. से कम होने पर मरते तो नहीं; परन्तु बीज देरी से अंकुरित होते हैं और बाढ़ भी धीरे-धीरे होती है।

६—वर्षा

वर्षा के जल का नाप इंच और उसके दशमलव के रूपों में होता है। जो अंक वर्षा की रिपोर्टों में इंचों में दिये जाते हैं, उनका यह अर्थ होता है कि भूमि की सतह पर इतनी मोटाई की तह का जल गिरा। अर्थात् यह कहा जाय कि २.२५" वर्षा हुई तो उसका यह अर्थ हुआ कि सवा दो इंच मोटी तह जितना जल गिरा। कभी पूर्णांक को इंच और दशमलव को सेन्ट में भी लिखते हैं। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त अंकों को दो इंच पच्चीस सेन्ट कहेंगे।

वर्षा का जल नापने का जो यन्त्र होता है, वह एक टीप (Funnel) होती है और उसे एक बोतल पर खुले मैदान में रख देते हैं। टीप का व्यास ५ इंच का होता है। इस टीप के द्वारा जल बोतल में इकट्ठा होता है। उसे नाप लेते हैं। नापने का कांच का यंत्र होता है जिसपर एक इंच पानी के सौ भाग तक पढ़े जा सकते हैं और प्रत्येक भाग को सेन्ट कहते हैं। बोतल और टीप को खुले मैदान में ऐसे रखना चाहिए कि टीप का मुंह सीधा हो और वह भूमि से एक फुट से अधिक ऊंचा न हो। यदि अकस्मात नाप का यन्त्र टूट जाय तो पानी की घन इंच में गणना करके उसमें १९.६४ का भाग देने से

इंचों में वर्षा निकल आयेगी। पांच इंच व्यास वाली टीप के मुंह का क्षेत्रफल १९.६४ वर्ग इंच होता है।

उपर्युक्त यन्त्र के अभाव में एक सीधी किनार वाला बड़ा बर्तन रख कर भी नाप सकते हैं। लेकिन इस बर्तन को ऐसे रखना चाहिए कि इसका मुंह जमीन की सतह से एक फुट ऊंचा हो ताकि बाहर से उछल कर पानी उसमें न गिरे। इसे पक्की फर्श पर न रखकर छोटे-छोटे घांस वाली भूमि पर रखना चाहिए ताकि पानी फर्श से उछल कर बर्तन में न गिरे। वर्षा बन्द होते ही पानी की गहराई इंचों में नाप लेनी चहिए ताकि उसमें से पानी उड़कर कम न हो जाय। यदि सीधी किनार वाला बर्तन न हो तो बाल्टीनुमा वर्तन से भी निम्नलिखित सूत्र से वर्षा का नाप किया जा सकता है—

(१) $$\frac{\text{पानी का नाप घन इंचों में}}{\text{बाल्टी के मुंह का क्षेत्रफल वर्ग इंच में}} = \text{इंच वर्षा}$$

(२) बाल्टी के पानी का घनफल निकालने का सूत्र—

$$\frac{२२}{७} \times \frac{\text{पानी की ऊँचाई इंच में}}{३} \times \left\{ \left(\frac{\text{बाल्टी के पेंदे का व्यास}}{२}\right)^{२} + \left(\frac{\text{पानी की ऊपरी सतह का व्यास}}{२}\right)^{२} + \frac{\text{बाल्टी के पेन्दे का व्यास}}{२} \times \frac{\text{पानी की सतह का व्यास}}{२} \right\}$$

(३) बाल्टी के मुंह का क्षेत्रफल—

$$\frac{२२}{७} \times \left(\frac{\text{बाल्टी के मुँह का व्यास}}{२}\right)^{२}$$

उपर्युक्त नाप इंच में होने चाहिए।

कई स्थानों पर बरफ गिरता है। वहां बरफ की तह मोटाई में नापी जाती है। साधारणतः ८-१० इंच बरफ की तह १ इंच वर्षा के बराबर मानी जाती है।

भारतीय कृषि अधिकतर वर्षा पर निर्भर है। परिशिष्ट नं. १ को देखने से ज्ञात होगा कि २९ करोड़ एकड़ भूमि में से ५.६ करोड़ एकड़ सींची गई अर्थात् १९ प्रतिशत भूमि में जल दिया गया और शेष ८१ प्रतिशत भूमि में वर्षा के आधार पर ही फसलें उपजाई गईं।

वर्षा के जल से भूमि को सिर्फ पानी ही नहीं मिलता, बल्कि वातावरण पर भी असर पड़ता है। जब फसल खड़ी हो, उस समय वर्षा आती है तो पत्ते वगैरा सब धुल जाते हैं, जिससे उनकी रासायनिक क्रियाएं बढ़ जाती हैं। तापमान और वातावरण की तरी वर्षा से घट-बढ़ जाती है। वायुमंडल से कुछ अंश तक नाइट्रोजन के पदार्थ भी गिरती हुई वर्षा के साथ भूमि में पहुंच जाते हैं।

वर्षा का असर खेतों की तैयारी तथा निंदाई पर भी काफी पड़ता है। लगातार वर्षा से जुताई-निंदाई में काफी बाधा आती है। यदि बहुत

२० इंच से कम	२०-४० इंच	४० से ८० इंच	८० इंच से ऊपर
बाजरा मोठ मूंग ज्वार चरी छोटे धान्य	गेहूं जव जुवार बाजरा धान मक्का दलहन व तिलहन की फसलें कपास बरसाती सब्जियां गन्ना फल	धान गेहूं मक्का तिलहन दलहन की कुछ फसलें गन्ना अधिकांश सब्जियां फल	धान पाट गन्ना तिलहन की कुछ फसलें धान के बाद होने वाली कुछ दलहन की फसलें फल कुछ सब्जियां

जोरों की वर्षा हो तो भूमि-कण बह जाते हैं। वर्षा का असर फसलों के चुनाव पर भी पड़ता है। जैसे कि पिछले पृष्ठ पर दी गई सारणी में दिया गया है।

सिर्फ वर्षा के आधार पर उपजाई जाने वाली फसलों के हम चार भाग कर सकते हैं।

७--वातावरण की तरी

वातावरण की हवा में कुछ अंश तक जलकण रहते हैं, जो वर्षा ऋतु में अधिक और गर्मी में बहुत कम रहते हैं। जब वातावरण में तरी अधिक रहती है तो कहते हैं हवा में नमी कुछ विशेष है। जब बहुत कम रहती है तो कहते हैं हवा सूखी है। समुद्र के किनारे अथवा पानी-भरे स्थानों के निकट तरी विशेष रहती है। कुछ फसलें अधिक तरी वाली हवा में अच्छी होती हैं तो कुछ ठीक नहीं होती। अधिक तरी और ठंडे वातावरण वाले स्थानों के फल अधिक रस वाले तथा पतले छिलके के होते हैं। जब तरी बहुत अधिक होती है और तापमान गिर जाता है तो बरफ या पाला गिरने लगता है। जहां की हवा में तरी अधिक रहती है वहां सिंचाई भी कम करना पड़ती है। यही कारण है कि कई स्थानों में गन्ना-जैसी फसल बिना सिंचाई के उपजाई जा सकती है। कपास-जैसी फसल के लिए उनके फलों के फटते समय ठंडा और सूखा वातावरण अच्छा होता है। मक्का-जैसी फसल के लिए उष्ण और तर वातावरण चाहिए।

वातावरण की तरी 'हाइग्रोमीटर' नाम के यंत्र से जानी जाती है। जब यह कहा जाय कि आज हवा में ५० प्रतिशत नमी थी तो उसका अर्थ यह होगा कि उस समय के तापमान में जितनी नमी हो सकती है, उससे आधी है।

८--वायु

वायु की गति नापने का एक यंत्र होता है जिसे 'एनेमोमीटर' कहते हैं। इसम एक धुरी पर चार छड़ लगे होते हैं, जिनके छोर पर चार छोटी कटोरियां लगी रहती हैं। हवा के बहाव से

कटोरियां ढ़केली जाती हैं और धुरी घूमती है। धुरी के नीचे एक यंत्र रहता है जिसपर हवा की गति के चिन्ह बनते रहते हैं। वायु की चाल के आधार पर उसके नाम रक्खे गये हैं।

नाम	गति प्रति घंटा	पहचान के चिन्ह
शान्त	एक मील से कम	वृक्षों के पत्ते शान्त, धुंआ सीधा ऊपर की ओर जाता है।
हलकी	१ से ७ मील	पत्ते खड़खड़ाते हैं।
हलकी से कुछ तीव्र	८ से १२ ,,	पत्ते और छोटी टहनियां हिलती हुई दिखलाई देती हैं।
साधारण	१३ से १८ ,,	धूल उठती है और टहनियां डोलती हैं।
साधारण से कुछ तेज	१९ से २४ ,,	छोटे वृक्ष हिलने लगते हैं।
तेज़	२५ से ३८ ,,	बड़ी टहनियां और पेड़ हिलते हैं।
आंधी	३९ से ५४ ,,	पेड़ टूटने लगते हैं।
तेज आंधी	५५ से ७५ ,,	पेड़ उखड़ जाते हैं।
तूफान	७५ से अधिक	बहुत हानि करता है छप्पर उड़ जाते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से यह अनुमान किया जा सकता है कि किस-किस प्रकार की वायु से किस प्रकार की हानि की सम्भावना है। फलों के पेड़ों को कैसी हानि हुई होगी अथवा फसलें गिरी होंगी या खड़ी होंगी। इसका अनुमान हो जाता है।

वायु की दिशा—

वायु की गति के सिवाय वायु की दिशा जानने का भी एक यंत्र होता है।

यह कार्य कपड़े की झंडी से भी किया जा सकता है।

तूफान, वायु और जल के आवागमन की सूचना—

'बेरोमीटर' नाम के यंत्र से जिस स्थान पर वह होता है वहां वातावरण में दबाव कैसा है यह मालूम होता है। जब दबाव कम होता है तो यह मालूम हो जाता है कि कहीं से उस स्थान पर वायु आयेगी और यदि वह जल वाली हुई तो उसके साथ-साथ वर्षा की सम्भावना रहती है। यदि दबाव बहुत कम हो जाय तो तूफान आने की सूचना मिलती है।

९—मौसम के मानचित्रों का महत्व

मौसम विज्ञानी उसके मान चित्र छापते रहते हैं जिन के अध्ययन से वातावरण में हलचल तथा वर्षा का अनुमान किया जा सकता है।

इन चित्रों में जो तीर के चिन्ह होते हैं उनसे वायु की दिशा का ज्ञान होता है। तीर की पूंछ पर जो चिन्ह होते हैं, उनसे वायु की गति जानी जाती है। मानचित्रों में कुछ रेखाएं होती हैं, जिन्हें आइसोबार्स कहते हैं, ये ऐसे स्थानों पर से जाती हैं जहां हवा का दबाव समान हो। उसी भांति समान तापवाले स्थानों पर से 'थर्मोबार्स' नाम की रेखाएं जाती हैं। मानचित्रों में कुछ चिन्ह ऐसे होते हैं, जो बादलों की हलचल को दिखाते हैं।

ऐसे चिन्ह निम्नलिखित हैं :

○ साफ — ● बादल
Ⓡ वर्षा हो रही है — Ⓜ रिपोर्ट नहीं मिली
Ⓕ धूंधल — R तूफान
⊖→ पश्चिमीय वायु
↙Ø बादल : हवा उत्तर पूर्व की है
Ⓢ→ बरफ पड़ रही है और हवा पश्चिम की है
(LOW) हवा का दबाव कम है, तूफान आने की संभावना है
(HIGH) हवा का दबाव अधिक है। हवा बाहर जायगी
◐ कुछ बादल

१०—स्थानों की ऊंचाई

समुद्र की धरातल से स्थान की ऊंचाई का असर भी फसलों के चुनाव पर पड़ता है। कुछ फसलें या फल ऐसे हैं, जो पहाड़ों पर ही होते हैं। यदि मैदानों में वे बोये जायं तो वे फलेंगे नहीं; उदाहरण के लिए लीजिए सेव। अच्छे बढ़िया सेव मैदानों में नहीं होते, पहाड़ों पर ही होते हैं। स्थानों की ऊंचाई 'बेरोमीटर' अथवा 'आल्टीमीटर' द्वारा जानी जाती है। कृषकों के लिए इन यंत्रों की आवश्यकता नहीं। परिशिष्ट नं. ३ में मुख्य स्थानों की ऊंचाई और वहां की वर्षा तथा तापमान का विवरण दिया है।

११—भूमि

कृषि के योग्य भूमि का वर्ग-निर्माण कई रीतियों से किया जा सकता है, जिनमें कुछ निम्न लिखित हैं—

१. स्थाई या स्थानान्तरित ;

२. मिट्टी के रंग के आधार पर, जैसे काली, भूरी, लाल, इत्यादि ;

३. मिट्टी की उपज-शक्ति पर, जैसे उपजाऊ या ऊसर ;

४. मिट्टी में अम्ल या क्षार की मात्रा पर, जैसे अम्लदार या क्षारवाली;

५. कुछ विशेष नाम, जैसे गांव के पास वाली को गहुंआ या सींची जाने वाली को आबी इत्यादि ;

६. मिट्टी के कणों के आधार पर—जैसे बलुआ, मटियार इत्यादि ;

स्थायी मिट्टी वह होती है जो भूमि की चट्टानों के ऋतु-क्षरण या छीजन (Weathering) से बनी हो और उसी स्थान पर स्थापित हो।

स्थानान्तरित—उसे कहते हैं, जो विशेषत: जल द्वारा, कुछ अंश तक हवा द्वारा या अन्य प्राकृतिक अथवा कृत्रिम युक्तियों द्वारा एक स्थान से लाकर दूसरे स्थान में छोड़ दी गई हो।

साधारणत: स्थाई की अपेक्षा स्थानान्तरित मिट्टी विशेष उर्वरा होती है, क्योंकि उसमें कई स्थानों की मिट्टी और कुछ कार्बनिक पदार्थ आकर जमा हो जाते हैं।

स्थायी मिट्टी में कुछ खास-खास फसलें अच्छी होती हैं ; जैसे काली मिट्टी में कपास, जुवार, इत्यादि। इसके विपरीत स्थानान्तरित मिट्टी में कई प्रकार की फसलें उपजाई जा सकती हैं।

स्थानान्तरित मिट्टी के हम दो विभाग कर सकते हैं। एक वह जो जल के प्रवाह द्वारा बनी हो। ऐसी को कछार या जल-स्थानान्तरित भूमि कहेंगे। जो वायु के वेग से बनी है, जैसे राजस्थान में बनती रहती है, उसे वायु-स्थानान्तरित कह सकते हैं। वायु-स्थानान्तरित की अपेक्षा जल-स्थानान्तरित भूमि विशेष उपजाऊ होती है।

मिट्टी के रंग के आधार पर—रंग के आधार पर हम भारत की भूमि को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—काली, भूरी और लाल। कहीं-कहीं पीली मिट्टी भी पाई जाती है, परन्तु बहुत कम। काली मिट्टी मध्य प्रदेश, मध्य भारत, गुजरात, हैदराबाद, आंध्र देश और कहीं-कहीं मद्रास में पाई जाती है। ऐसी मिट्टी में कपास, जुवार, मूंगफली अच्छी होती है। सिंचाई का प्रबन्ध अच्छा हो तो गन्ना और कन्द को छोड़ कर साग-भाजी और फल भी अच्छे होते हैं।

भूरी मिट्टी पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल में पाई जाती है। ऐसी मिट्टी बहुधा जल-स्थानान्तरित होती है और इस कारण अच्छी उपजाऊ होती है, और उसमें सभी प्रकार की फसलें, सागभाजी और फल अच्छे होते हैं।

लाल मिट्टी आसाम, बंगाल, दक्षिण बिहार, उड़ीसा, उत्तर पूर्वीय मध्य प्रदेश तथा मद्रास में अधिक पाई जाती है। उपर्युक्त दोनों की अपेक्षा यह कम उपजाऊ होती है। इसमें जहां जल का अभाव न हो वहां धान (चावल) की फसल अच्छी होती है।

मिट्टी की उपज-शक्ति के आधार पर—जिस भूमि से कई फसलें ली जा सकती हैं वह उपजाऊ और जिसमें बहुत कम या कुछ नहीं उपजता, वह ऊसर कहलाती है। ऊसर भूमि दो प्रकार की होती है। एक वह जिसमें लवणों की मात्रा अधिक होने के कारण पौधों का पोषण ठीक नहीं हो

पाता। दूसरी वह जिसमें क्षार पैदा करने वाले लवण जैसे सोडियम कार्बोनेट, इत्यादि लवण अधिक हों। ऐसी भूमि में पौधों की जड़ें कट जाती हैं या सड़ जाती है। ऊसर भूमि को सुधारने के विवरण में इसका अधिक वर्णन किया गया है।

मिट्टी में अम्ल या क्षार की मात्रा के आधार पर—मिट्टी अमल्दार, बुझी हुई या क्षार वाली हो सकती है। इसके लिए वैज्ञानिक आधार पर १४ अंक माने गये हैं और उन्हीं अंकों से इसका संकेत होता है। ऐसे संकेत का नाम पी-एच (pH) रक्खा है। वैज्ञानिक रीति से जांच करने प र जिस भूमि का पी-एच ७ आता है वह बुझी हुई—सात से अधिक वाली क्षार की ओर और कम वाली अम्ल की ओर मानी जाती है। जिस भूमि का पी-एच. ६ से कम हो, उसमें धान, पाट, आलू जैसी फसलें अच्छी हो सकती हैं, दूसरी ओर पी-एच८.५ से अधिक वाली मिट्टी अच्छी नहीं होती। जिस-का पी-एच नौ-दस तक पहुंच जाय, उसमें कोई भी फसल नहीं होगी।

कुछ विशेष नामों के आधार पर—भिन्न-भिन्न प्रान्तों में भूमि के नाम उसकी बनावट, उपयोगिता, स्थान तथा रंग के अनुसार रख लिये जाते हैं जैसे—जो मिट्टी नदी से बनी हो उसे 'कछार', जिसपर बरसात में नदी का पानी फिर जाता है उसे दियार, दियारा, खादड़ या सैलाबी, गांव के नजदीक वाली उपजाऊ को 'बाड़ा' या 'गहुंवा', बस्ती से दूर वाली, जिसमें बिना सिंचाई के फसलें उपजाई जाती हैं उसे 'बरानी' "गैर आबपाश" या "मालेतरू", नहर से सींची जाने वाली को "नहरी", कुओं से सींची जाने वाली को 'चाही', तालाब से सींची जाने वाली को 'आबी', जिसमें रेह अधिक हो उसे 'रेहली', जिन खेतों में बरसात का पानी बांधा जाता हो उसे 'बधिया' कहते हैं।

उपर्युक्त नामों के अलावा कुछ नाम ऐसे भी होते हैं जिनसे कुछ अंश तक मिट्टी की भौतिक स्थिति का कुछ ज्ञान हो जाता है; जैसे पंजाब और उत्तर-प्रदेश के पश्चिमी भागों में 'डाककर', 'रसौली', 'भूर' 'बलुआ' नाम पाये जाते हैं। इनमें से पहली महीन कण वाली और आखिरी वाली में मोटे कण अधिक

होते हैं। इसी भांति बुन्देलखण्ड में उपर्युक्त मिट्टी के नाम 'मांड', 'काबर', राकड़ और मध्यप्रदेश में काली अव्वल, कन्हार, मोरडं और राकड़ हैं।

मिट्टी के कणों के आधार पर––इनके आधार पर हम मिट्टी को मटियार, मटियार-दुमट, दुमट, बलुआ-दुमट और बलुआ कहते हैं। इस कार्य के लिए ५ नाम के कण माने गये हैं।

जिस मिट्टी के कण ०.००२ मम (milimeter) व्यास से कम के हों, उसकी गणना मटियार (clay) में होती है। ०.००२ से ०.०२ मम वाली 'सिल्ट' कहलाती है। ०.०२ से २.० मम वाली बालू या रेत होगी। २.० मम से मोटे कण कंकर माने जाते हैं।

पूर्ण वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए २ मम वाली छलनी से मिट्टी छान कर उसे रासायनिक पदार्थों द्वारा ठीक करके भौतिक विश्लेषण करते हैं। उपर्युक्त कणों की मात्रा की जांच करके भूमि का नामकरण करते हैं। जिस मिट्टी में ८५% से अधिक बालू हो, उसे बलुआ कहते हैं और जिसमें ३५ से अधिक भाग 'क्ले' का हो, उसे मटियार कहते हैं। इनके बीच वाली को दुमट कहते हैं। इसमें १५ प्रतिशत तक 'क्ले' और ६५ प्रतिशत से अधिक बालू नहीं होनी चाहिए।

मोटे तौर पर कृषकों के लिए लेखक की 'खेती की रीति'[१] में दी हुई रीति से विश्लेषण कर मिट्टी को ५ भाग में विभाजित कर सकते हैं। जिसमें ८० प्रतिशत से अधिक बालू हो, उसे बलुआ, ६० प्रतिशत से ८० प्रतिशत तक हो उसे बलुआ-दुमट, ४० प्रतिशत से ६० प्रतिशत वाली को दुमट, २० प्रतिशत से ४० प्रतिशत वाली को मटियार और जिसमें २० प्रतिशत से कम बालू हो उसे मटियार कहेंगे। इस रीति में मिट्टी के कणों का जल-द्वारा भौतिक विश्लेषण किया जाता है। कोई रासायनिक पदार्थ काम में नहीं लाया जाता। इस रीति से विश्लेषण करने से भूमि में पानी रोकने की शक्ति का ज्ञान हो जाता है, जो व्यावहारिक दृष्टि से विशेष उपयोगी है।

---

१ खेती की रीति भाग पहला (१९४९) पृष्ठ ३

अम्लवाली भूमि का सुधार :

अधिक अम्ल वाली भूमि का सुधार चूने से किया जाता है। कौन-सी भूमि के लिए कितना चूना चाहिए यह रसायनिक परीक्षा से जाना जाता है। मोटे तौर पर हम यहां पर हेस्टर[1] महोदय के सुझाव के अंक दिये देते हैं ताकि कृषक कुछ लाभ उठा सकें।

नीचे एक सारणी देते हैं जिसमें चूने की जाति, और प्रति एकड़ चूने की मात्रा दी गई है, जिसके डालने से जमीन की किस्म पी-एच ६-७ तक आ जाय।

भूमि का पी-एच	बलुआ भूमि	बलुआ-दुमट भूमि	दुमट भूमि
	मन	मन	मन
४.५	१२	२४	४८
५.०	९	१८	२४
५.५	६	१२	१८
९.०	३	६	९

अगर चूना बुझा हुआ (Slaked lime) हो तो उपर्युक्त मात्रा में एक तिहाई और बढ़ा देना चाहिए।

ऊसर भूमि का सुधार––भूमि ऊसर कैसे हो जाती है?

१ जब भूगर्भ जल (Sub soil water) की सतह बहुत ऊपर आ जाती है तो उसमें के घुले हुए लवण भी ऊपर आ जाते हैं और जब पानी गर्मी में सूख जाता है तो ऊपर की भूमि में लवणों की मात्रा बढ़ जाती है। वह मात्रा इतनी अधिक हो जाती है कि फसलें नहीं हो पातीं। भूगर्भ जल की सतह कम-से-कम आठ दस फुट गहरी होनी चाहिए।

२ जहां सिंचाई आवश्यकता से अधिक की जाती है।

३ जहां सिंचाई का जल खारा हो।

४ जिस भूमि में नितार (Drainage) अच्छा न हो।

ऊसर भूमि लवणों की जाति अनुसार दो प्रकार की होती है—एक काली ऊसर और दूसरी सफेद ऊसर—सफेद की अपेक्षा काली ऊसर विशेष

1. Hester J. B. and Shelton F. A. 1939. The soil side of tomato growing. Campbell Scop Co. Res. (Bull.) No I.

हानिप्रद होती है। ऐसी भूमि में सोडियम कार्बोनेट और सोडियम बाई-कार्बोनेट की मात्रा अधिक होती है। इससे पौधे की जड़ें कट जाती हैं और भूमि की भौतिक स्थिति बिगड़ जाती है। सफेद ऊसर में सोडियम सलफेट, मेग्नेसियम सलफेट इत्यादि अधिक होते हैं। किसी-किसी में खाने का लवण (सोडियम क्लोराईड) अधिक हो जाता है। ये तीनों लवण एक न्यूनतम मात्रा से अधिक होने पर हानिप्रद होते हैं।

जिस भूमि में सोडियम कार्बोनेट ०.२५ शतांश से अधिक हो तो उसमें फसल नहीं होती। सोडियम क्लोराईड ०.५ शतांश और सोडियम सलफेट १ शतांश तक हो सकते हैं। तीनों का मिश्रण ०.२५ प्रतिशत से कम ही होना चाहिए।

कभी-कभी ऐसा होता है कि उपकारी लवण भी अधिक मात्रा में होने से हानिप्रद हो जाते हैं, क्योंकि भूजल (Soil water) का घोल इतना गाढ़ा हो जाता है कि पौधों की जड़ें उसे नहीं ले सकती। बल्कि ऐसा होता है कि गाढ़ा घोल पौधों की जड़ों का पानी बाहर खींच लेता है और उन्हें सुखा देता है या कमजोर कर देता है। मेक जार्ज[1] महोदय लवण वाली भूमि के क्षारात्व को निम्न भागों में विभाजित करते हैं—

०.०७ प्रतिशत नहीं के बराबर; ०.०७ प्रतिशत से ०.१५ प्रतिशत साधारण; ०.१५ से ०.३ प्रतिशत अधिक; ०.३ प्रतिशत से ०.८ प्रतिशत बहुत अधिक ०.८ प्रतिशत से १.५ प्रतिशत अत्याधिक—कोई फसल नहीं होगी। ऊसर तथा क्षार वाली भूमि निम्नलिखित युक्तियों से सुधारी जा सकती है—

(१) खेतों में बांध बांधकर उनमें पानी भरा जाय ताकि लवण उसमें घुल जाय और बाद में उस पानी को बहा दिया जाय।

(२) भूमि से पानी के नितार (drainage) का प्रबन्ध करना जो या तो खुली नालियों द्वारा हो या भूमि के अन्दर झिरझिरे नलों द्वारा।

(३) गंधक या केलशियम सलफेट डालकर। लगभग ६०-७० मन

1. Mc George W. T. Arizona Expt Sta. Circ. 108.

केलशियम सलफेट डालना चाहिए। इसके और सोडियम कार्बोनेट के मेल से सोडियम सलफेट और केलशियम कार्बोनेट बन जाते हैं जो विशेष हानि नहीं करते।

(४) जब कोई साधन न हो तो क्षारत्व या ऊसरत्व की न्यूनाधिक मात्रा को सहन करने वाली फसलें बोनी चाहिए। ऐसी फसलों में धान, बरसीम, और शलजम जैसी कंद वाली फसलें होती हैं।

(५) वीज बोने के पहले भूमि को सींच देना चाहिए ताकि लवण का घोल हानिकारक मात्रा से कमज़ोर हो जाय। जब बीज अंकुरित होकर पौधे जम जाते हैं तो फिर उनमें ऊसरत्व सहन करने की शक्ति बढ़ जाती है।

१२—खाद

उचित मात्रा में जल और यथोचित तापमान में बीज अंकुरित हो जाते हैं। जो बीज भूमि में बोये जाते हैं उन्हें जल भूमि से ही मिलता है। तापमान ठीक रहा हो वे अंकुरित होकर पौधे और अन्त में पेड़ तक हो जाते हैं। बीज से उपजने वाले पौधों का प्रारम्भिक पोषण बीज के संचित द्रव्यों से होता है। जब जड़ें निकल आती हैं तो पौधे अपना भोजन भूमि से प्राप्त करते हैं और यदि भोजन का कोई अंश पूरी मात्रा में नहीं होता तो पौधे जैसी चाहिए वैसी बाढ़ प्राप्त नहीं कर सकते और उपज कम हो जाती है। खाद द्वारा हम ऐसे पदार्थों की पूर्ति करते हैं, जिनके ऊपर पौधों की बाढ़ निर्भर है और जिनकी मात्रा भूमि में आवश्यकतानुसार नहीं होती।

पौधों को किन तत्वों की आवश्यकता है, यह उनके विश्लेषण से जाना जा सकता है। ऐसे तत्व दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। एक वे जो अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में चाहिए और दूसरे वे जिनकी मात्रा बहुत कम चाहिए। उदाहरण के लिए यहां गेहूं के विश्लेषण के अंक देते हैं।

अधिक मात्रा में पाये जाने वाले तत्व[१]	शतांश	कम मात्रा में पाये जाने वाले तत्व[२]	प्रति दस लाख भाग में
जल	१०.००	जस्ता	१००
कार्बन } हाइड्रोजन } ऑक्सिजन }	८६.०० लगभग	निकेल	३५
		लोहा	३१
		बोरान	१६
		मेगेंनीज़	२४
नाइट्रोजन	१.९३	तांबा	६
फासफोरस	०.८३	एल्युमिनियम	३
पोटेशियम	०.५४	ब्रोमीन	२
कैलशियम	०.०६	आयोडीन	.००६
सोडियम	०.०४	संख्या	.१
मेग्नेशियम	०.२१	कोबाल्ट	.०१
गंधक	०.१६	फ्लोरीन	सूक्ष्म
क्लोरीन	०.००६	वेनेडियम	,,
सिलिकॉन	०.०४०	सेलेनियम	,,

उपर्युक्त सूची में से पहले तीन तत्व वायुमंडल तथा जल द्वारा पौधों को मिल जाते हैं। साधारणतः नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटेशियम की विशेष मांग होती है। इनमें भी भारत की अधिकांश भूमि में पोटेशियम की आवश्यकता नहीं होती। अम्लदार भूमि में चूने की और ऊसर के लिए केल-

१ Hand-book for farmers & dairy men by woll 1914 p. 80 **पर जो अंक दिये हैं वे वारिंगटन महोदय के हैं और गणना १५% जल पर की गयी है। उपर्युक्त मात्रा १० शतांश जल पर गणना करके दी है, क्योंकि हमारे यहाँ गेहूं में जल की मात्रा १०% तक रहती है।**

२ Swanson C.O., Wheat and flour quality p. 25.

शियम सलफेट की आवश्यकता होती है। शेष तत्व आवश्यकतानुसार भूमि से मिल जाते हैं; और यदि किसी की कमी हुई तो उसके पहुंचाने का प्रबन्ध करना चाहिए। ऐसे तत्वों की कमी पौधों की बाढ़ और उनके रूप-रंग या उनकी व्याधियों से जानी जाती है। जो इस विषय के माहिर हों उनकी सम्मति से काम करना चाहिए; क्योंकि जिन तत्वों की वहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है वे यदि कुछ अधिक मात्रा में हो जायं तो भी हानि करते हैं।

विभिन्न तत्वों का गुण-धर्म—

कार्बन—पौधों के ढांचे की बनावट में इसका बहुत हाथ है। प्रत्येक कोष्ठ का कोष्ठज इसके तथा आक्सीजन और हाइड्रोजन के मेल से बनता है। पौधों के रस में शर्करायुक्त पदार्थ, आमिष-जातीय पदार्थ, स्नेह और तन्तु-युक्त पदार्थ में यह पाया जाता है।

ऑक्सीजन और हाइड्रोजन—जल के रूप में पौधे इन्हें लेते हैं और सब अंगों में पाये जाते हैं।

नाइट्रोजन—इससे आमिषजातीय पदार्थ बनते हैं। इसके अभाव में पौधे पीले पड़ जाते हैं और धीरे-धीरे मर जाते हैं। बीज पतले और सिकुड़े हुए रह जाते हैं। इसकी वहुत अधिक मात्रा भी ठीक नहीं होती। अधिक होने से पत्ते और टहनियों की बाढ़ अधिक हो जाती है। फल कम आते हैं और व्याधियां भी अधिक हो जाती हैं।

फासफोरस—इससे जड़ों की बाढ़ अच्छी होती है। वे स्वस्थ और मज़बूत होती हैं जिससे भूमि से खुराक अच्छी खींचती हैं। फसल पकती भी जल्दी है और बीज पुष्ट होते हैं। उपज भी अधिक होती है। पौधे हरे लेकिन छोटे रह जायं तो समझना चाहिए कि इस खाद की कमी है। दलहन की फसलों के लिए और फलों के लिए इसका खाद बड़ा अच्छा होता है।

पोटेशियम—शर्करायुक्त पदार्थों की बनावट के लिए इसकी आवश्यकता होती है। पौधों के अम्ल की शांति इससे होती है। नहीं तो

बाढ़ ही रुक जाय। फलों के सुन्दर आकार तथा उनके अच्छे स्वाद के लिए इसकी आवश्यकता होती है।

केलशियम—इसकी उपस्थिति में पौधों के कोष अच्छे बनते हैं। कुछ अम्लों की शांति भी इसी से होती है। अम्ल वाली मिट्टी की शांति के लिए इसे काम में लाते हैं। भूमि में नाइट्रीकरण की क्रिया भी इसके रहने से अच्छी होती है।

मेग्नेशियम—इसके अभाव में कोष की बाढ़ अच्छी नहीं होती और पत्तों में क्लोरोफिल नाम का पदार्थ अच्छा नहीं बनता, जिसके द्वारा पत्तों में होने वाली रासायनिक क्रिया अच्छी नहीं होती और पौधों का भोजन ठीक से तैयार नहीं होता।

सिलिकॉन—एक दल वाली वनस्पति, जैसे गेहूं, जौ इत्यादि, में वह अधिक पाया जाता है। इससे भी पौधों की बाढ़ अच्छी होती है और फसल एकसाथ पकती है।

लोहा—इसके अभाव में पौधे पीले और अस्वस्थ हो जाते हैं। वायु-मंडल से जो कार्बन लिया जाता है, उसका उपयोग लोहे के अभाव में ठीक नहीं हो पाता।

इसी भांति शेष तत्व भी काम के हैं; परन्तु मुख्य तत्व नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटेशियम हैं। कहीं-कहीं चूने की आवश्यकता होती है इसलिए यहां इनपर विस्तार से विचार करेंगे।

खाद के वर्ग और उनमें तत्वों की मात्रा—

खाद का विभाजन निम्नलिखित वर्गों में हो सकता है।

(१) कार्बनिक (Organic) और अकार्बनिक (Inorganic)

(२) फसलों पर असर के आधार पर—जल्दी लाभ पहुंचाने वाले या देरी से लाभ पहुंचाने वाले।

(३) तत्वों के आधार पर जैसे नाइट्रोजन-पूर्ता, फासफोरस-पूर्ता अथवा पोटेशियम-पूर्ता इत्यादि

कार्बनिक खाद से हमारा अभिप्राय उन खादों से है, जिसमें

वनस्पति या जीवधारियों के अङ्गों का अंश किसी-न-किसी रूप में हो।

अकार्बनिक खाद बहुधा खनिज और कृत्रिम होते हैं। कार्बनिक की अपेक्षा इनमें मुख्य तत्वों की मात्रा अधिक रहती है। पहले प्रकार के खादों में मात्रा भले ही कम हो; परन्तु वे विशेष उपयोगी और सस्ते होते हैं, यदि काफी मात्रा में मिल सकें। इतना भेद अवश्य है कि अकार्बनिक, कार्बनिक की अपेक्षा जल्दी लाभ पहुंचाने वाले होते हैं।

कार्बनिक—

नाइट्रोजन-प्रधान—जिन खादों में फासफोरस[1] और पोटेशियम[2] की अपेक्षा नाइट्रोजन की मात्रा अधिक हो—

नाम खाद	खाद के तत्वों की मात्रा (लगभग)			
	शतांश जल	शतांश नाइट्रोजन	शतांश फा. पे.	शतांश पो. आ
पशुओं का मलमूत्र	%	%	%	%
गाय का गोबर	८०	०.३	०.१७	०.१५
गौ मूत्र	९०	०.८	०.०१	१.४०
घोड़े की लीद	७५	०.५	०.४	०.३
मूत्र	९०	१.५	—	१.३
भेड़ों की मींगणी	६०	०.७	०.६	०.३
" का मूत्र	८५	१.५	०.०१	१.८

(१)–(२) फासफोरस के मात्रा फासफोरस पेन्टाक्साईड के रूप में दी जाती है और पोटाश की पोटेशियम आक्साईड के रूप में। इस पुस्तक में जहां फा. पे. लिखा हो वहाँ फासफोरस पेंटाक्साईड और जहां पो. आ. लिखा हो, पोटेशियम आक्साईड मानना चाहिए। जहां फासफोरस से ही मतलब होगा वहां केवल फा. अक्षर लिखा रहेगा।

(३) ये मात्राएं उपर्युक्त दिये हुए अंगों के लगभग होती हैं। इन्हें

गोबर का सड़ा हुआ खाद (पशु-शालाओं का मलमूत्र तथा वहां का बिगाड़ा हुआ भूसा इत्यादि)	४०	०.५	०.३	०.६
मनुष्यों का मल	७०	१.०	१.१	०.२५
,, मूत्र	९५	०.६	०.२	०.२
स्लज--सूखी हुई	—	३ से ५	२ से ३	०.५से१.०
चमगादड़ की विष्ठा सूखी हुई	८.०	३.८	१.३	१.२
हरा खाद (फूल आने के समय पर कटे हुए पौधों में।				
सूखे पत्तों का खाद[1]		१ से २		

काम्पोस्ट जिन वस्तुओं से बनाया जाय उनके तत्वों पर इसके तत्व निर्भर हैं। अच्छे सड़े हुए काम्पोस्ट में गोबर के खाद के बराबर गुण मान सकते हैं।

पूर्ण निर्मित नहीं माननी चाहिए, क्योंकि जहां प्राणियों का संबंध है, खाद में तत्वों की मात्रा कई बातों पर निर्भर है ; जैसे पशुओं की जाति, उनकी उम्र, उनके खान-पान की व्यवस्था इत्यादि। जिन पशुओं को दाना दिया जाता है, उनके मलमूत्र में खाद के तत्व विशेष पाये जायेंगे बनिस्बत उन पशुओं के खाद में जिन्हें दाना नहीं दिया जाता। इसके बाद खाद को रखने की रीति का भी काफी असर पड़ता है। खुले मैदान में रखा हुआ खाद गर्मी की तपन और बरसात की वर्षा से खाद तत्वों की कुछ मात्राएं खो बैठता है।

(१) पेड़ की जाति, उनकी उम्र इत्यादि बातों पर निर्भर है। दाल वर्ग के बनस्पति के पत्तों में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है।

खलियां	मात्रा तत्व (लगभग)		
	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
पशुओं को खिलायी जाने वाली			
मूंगफली	७.६	२.३	२.२
सरसों	५.६	१.९	१.४
कुसूम	५.८	१.३	१.२
अलसी	५.०	१.६	१.६
तिल	५.०	१.१	१.०
रामतिली	४.५	२.०	१.९
नारियल	३.७	१.९	१.८
बिनौला (कपास के बीज छिलका सहित की खली)	२.६	१.२	१.१
पशुओं को नहीं खिलायी जाने वाली			
एरंडी	५.०	१.८	१.६
नीम	४.४	१.०	१.४
करंज	३.५	०.७	१.३
महुआ	२.६	०.८	२.८
मछलियों का खाद	६–१०	४-८	
[1] पशुओं की खुरी और सींग का चूर्ण	११–१५		
[1] चमड़े के कारखाने का कूड़ा	६–१२		
[1] ऊन के कारखाने का कूड़ा	३–८		

फासफोरस-प्रधान कार्बनिक खाद––वे खाद जिनमें नाइट्रोजन और पोटेशियम की अपेक्षा फासफोरस की मात्रा अधिक न हो।

(1) Hand-book of Fertilizers by Gustafeson p. 48

	मात्रा तत्व (लगभग)				
	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ	चूना
हड्डी का खाद[1]					
कच्ची हड्डी (Raw bones)	६.२	३.८	२२.३	०.२	२९.२
कच्ची हड्डी का चूरा (Crushed bones)	७.१	३.७	२२.१	०.१	३०.२
भाप द्वारा साफ की हुई हड्डी (Steamed bones)	५.२	१.६	३०.९	०.१	४१.८
हड्डी का चूरा (Bone meal)	६.०	३.८	२३.२	०.१	३१.३
हड्डी का चूर्ण (Bone dust)	१३.०	२.६	१७.६	०.१	२४.४
हड्डी का कोयला (Bone black)	६.०	१.०	३२.०	०.१	४३.०
हड्डी की राख (Bone ash)	६.०	—	३५.४	०.३	४६.०
पक्षियों की विष्ठा (Guano)	—	४–५	४–५	—	—
बरसात से धुला हुआ ग्वानो (Guano)	—	—	७–८	—	—
पोटेशियम-प्रधान कार्बनिक खाद					
तम्बाकू के डंठल	१.३	—	—	४.९	—
सेवार (जल में होने वाली बनस्पति)	—	१.०	०.४	२.०	—

1. Primrose Mc. Gonnel 1910 Agri. Facts & Figures p. 129

अकार्बनिक खाद

नाइट्रोजन-पूर्ता	शतांश नाइट्रोजन	
सोडियम नाइट्रेट	१५.०	
एमोनियम सलफेट	२०.०	
एमोनियम क्लोराईड	२५.०	
एमोनियम नाइट्रेट	३५.०	
केलशियम नाइट्रेट	१३.० से १६.०	
केलशियम सायनामाईड	२०.०	
यूरिया[1]	४४/४५ (६.५ शतांश नाइट्रेट के रूप में)	
एमोनियम सलफेट-नाइट्रेट[1]	२६.० (१९.५ शतांश एमोनियम के रूप)	
फासफोरस-पूर्ता	शतांश फा. पे.	
सुपरफासफेट सिंगल	२०	
सुपरफासफेट डबल या ट्रिपल	४०-४५	
वेसिक स्लेग	१६-१८	
पोटेशियम-पूर्ता	शतांश पो. आ.	
पोटेशियम-सलफेट	४८ शतांश	
,, क्लोराईड	५० शतांश	
नाइट्रोजन और फासफोरस-पूर्ता	नाइट्रोजन	फा. पे.
डाइमान फॉस	२१.० शतांश	५४.० शतांश
एमोफास	१३.०	४८.० शतांश
ल्यूनीफास	२०.०	२०.०

---

१. ये खाद नये अमेरिका से आये हैं। यदि अच्छे जचे तो इनका उपयोग बढ़ जायगा और सिन्दरी कारखाने में यूरिया भी बनाय्प जायगा। जहां अभी एमोनियम सलफेट बनता है।

नाइट्रोजन और पोटेशियम-पूर्ता	नाइट्रोजन		पो. आ.
पोटेशियम नाइट्रेट	१४ शतांश		४८ शतांश
फासफोरस और पोटेशियम-मिश्रित		फा.पे.	पो. आ.
राख		२	४—६
नाइट्रोजन फासफोरस और पोटेशियम मिश्रित	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
नाइट्रोफोस्का	१५	१५	२०
खदानी फासफेट (Rock phosphate)		२०—२५	
तालाव-कुंए आदि की मिट्टी			

कार्बनिक और अकार्बनिक खादों के गुण-दोष

कार्बनिक	अकार्बनिक
(१) फसलों पर असर धीरे-धीरे होता है।	(१) असर जल्दी होता है ।
(२) दूसरी तथा तीसरी फसल पर भी गोबर जैसे खाद का असर रहता है ।	(२) बहुधा पहली फसल में ही नाइट्रोजन के खाद का असर समाप्त हो जाता है।
(३) भूमि की भौतिक स्थिति अच्छी बनी रहती है ।	(३) भूमि की दशा धीरे-धीरे बिगड़ती जाती है और कुछ वर्षों बाद उपज गिरने लगती है । खाद की जाति अनुसार भूमि में अम्ल या क्षार की मात्रा बढ़ती जाती है।
(४) बहुत अंश तक न्यून मात्रा वाले तत्वों की पूर्ति होती रहती है।	(४) न्यून मात्रा वाले तत्व की पूर्ति नहीं होती, जब तक वे न मिलाये जायं ।

(५) अधिक वर्षा हो जाय तो जल्दी बहते नहीं।	(५) अधिक वर्षा हो जाय तो कुछ बह जाते हैं ।
(६) अधिक मात्रा में देना पड़ते हैं।	(६) थोड़ी मात्रा में देने पड़ते हैं।
(७) सुभीते से फसल बोने के पहले दे सकते हैं।	(७) फसल बोने के साथ या खड़ी फसल को देना होता है ।

चूंकि कार्बनिक खाद प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है जहां तक हो सके दोनों का साथ-साथ उपयोग करना चाहिए। जिन खादों द्वारा अम्ल बढ़ने की अथवा जिनके उपयोग से भूमि में चूने की कमी होने की सम्भावना हो, उन खादों का उपयोग किया जाय तो भूमि में चूना भी कभी-कभी देना पड़ता है। एमोनियम सलफेट, एमोनियम क्लोराईड, एमोफास, नाइट्रोफोस्का की तासीर अम्ल-वृद्धि तथा सोडियम नाइट्रेट की क्षार-वृद्धि की है ।

विभिन्न खादों की तुलनात्मक प्रथम वर्ष में उपजाऊ शक्ति—

नाइट्रोजन वाले		फासफोरस वाले		पोटेशियम वाले	
एमोनियम सलफेट	१००	सुपरफासफेट	१००	पोटेशियम सलफेट	१००
सोडियम नाइट्रेट[1]	९८	ग्वानो	९०	,, क्लोराइड	८०
खली का खाद	८०—१००	हड्डी का चूर्ण	८०[2]	राख	५०
गोबर का खाद	५०-६०	बेसिक स्लेग	३०		

उपर्युक्त अंकों का यह मतलब हुआ कि जितना नाइट्रोजन एमोनियम सलफेट के रूप में दिया जाय, उतना ही लाभ उठाने के लिए गोबर के खाद के रूप में नाइट्रोजन की दूनी मात्रा देनी चाहिए ।

---

१. जहां पानी की कमी हो वहां सोडियम नाइट्रेट एमोनियम सलफेट से अच्छा साबित होता है; विशेषतः रबी की फसलों में । पूसा में लेखक ने अपने आलू के प्रयोगों में देखा था कि जिस साल सर्दी के दिनों में एक-दो बार वर्षा हो गयी, उस साल तो एमोनियम सलफेट अच्छा रहा; वरना सोडियम नाइट्रेट अच्छा रहा ।

२. अम्ल वाली मिट्टी में यह शक्ति १०० माननी चाहिए ।

पशुओं को जो चारा-दाना दिया जाता है, उसमें से नीचे लिखा अंश मल-मूत्र के रूप में मिलता है ?

नाइट्रोजन	७५ से ८० शतांश
फा. पे.	८५ से ९० ,,
पो. आ.	८५ से ९० ,,
कार्बनिक पदार्थ	४० से ५० ,,

पशुओं से सालाना कितना खाद मिल जाता है यह जानने के लिए नीचे लिखा सूत्र काम में लाना चाहिए।

पशुओं को जो चारा-दाना साल भर में दिया जाता है, उसकी जल रहित मात्रा गिन लेनी चाहिए। उस मात्रा का लगभग आधा पशु काम में ले आते हैं सो (उसका आधा+पशुशाला का बचाखुचा कूड़ा)×२ (साल भर के सड़े हुए खाद में सूखे खाद के बराबर पानी रहता है=साल भर का खाद)।

यह गणना सूत्रात्मक रूप से हुई। साधारणत: एक जोड़ी बैल से (जिसमें प्रत्येक बैल का वज़न लगभग १०-१२ मन हो) पशुशाला का घासपात-मिश्रित सौ सवा सौ मन खाद प्रतिवर्ष मिल सकता है।

खाद में पशुओं का खाद उत्तम होता है, क्योंकि इस खाद से हमें पौधों के पोषणार्थ तत्व ही नहीं मिलते, बल्कि कुछ अंश तक भूमि की भौतिक स्थिति में परिवर्तन हो जाता है और सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा होने वाली क्रियाएं अधिक होने लगती हैं, जिससे पौधों का पोषण अच्छा होता है।

क्या हमारे पास पशुओं का खाद काफी है ?

१९५१ की गणना में हमारे पास नीचेलिखे अनुसार पशु थे।[1]

		नर-मादा तीन साल से ऊपर के	तीन साल से कम उम्र के
गाय, बैल	१५०,२९७,५९५	१०८,९१३,७८७	४१,३८३,८०८
भैंस, भैंसे	४२,८५३,८१०	२८,२१९,३१५	१४,६३४,४९५
	१९३,१५१,४०५	१३७,१३३,१०२	५६,०१८,३०३
भेड़	३९,९७४,८९०		
बकरी	४७,१२१,२४६		
	२८७,०९६,१३६		

(1) Agri. Situation—India May, 1950.

यदि तीन साल से कम उम्र वाले पशुओं की संख्या को बड़े पशुओं की संख्या में बदलने के लिए आधी संख्या मान लें तो हमारे पशुओं की संख्या (१९३,१५१,४०५+२८,००९,१५१) २२१,१९०,५५६ होगी।

साधारणतः औसत दर्जे हमें एक पशु से दस बारह सेर गोबर प्रतिदिन मिल जाता है। परन्तु हमारे यहां के पशु चरने तथा खेतों में काम करने जाते हैं। इससे लगभग एक तिहाई भाग बाहर चला जाता है। शेष दो तिहाई यदि पूरा इकट्ठा किया जाय तो खाद के लिए मिल सकता है। ऐसी स्थिति में यदि बारह सेर का दो-तिहाई आठ सेर मान कर गणना करें तो हमें साल भर में १६ अरब मन गोबर मिल सकता है।

परिशिष्ट नं० १ से ज्ञात होगा कि हमारे यहां २९ करोड़ एकड़ भूमि में खेती होती है। यदि सब गोबर खाद के रूप में दिया जा सके तो हमें (१६ अरब मन÷२९ करोड़ एकड़)=५५ मन प्रति एकड़ मिल सकता है। लेकिन हमारे यहां गोबर जलाया जाता है या ईंधन

---

(१) **लेंडर और धरनी** (P.E. Lander and L.C. Dharni Some Digestibility trials in Indian Feeding stuffs. Mam.Dept. agri. India Vol VII No. 4 Sept. 1924) **महोदय ने ११०० पौं० वजन के बैलों को (१) गेहूं का भूसा, (२) गेहूं का भूसा+चने की चूरी (३) भूसा+मक्का और (४) भूसा+शीशम के पत्ते खिला करके प्रयोग किये थे। ऐसे बैल से ११ सेर भूसे की खुराक के दिनों में, १६ सेर भूसे और चने की खुराक के दिनों में, १०·५ सेर भूसा और मक्का की खुराक के दिनों में और ११ सेर भूसा और शीशम के पत्तों की खुराक के दिनों में गोबर मिला। स्मरण रहे पंजाब के बैल ११०० पौं० वजन के थे। हमारे भारत में कई स्थान ऐसे हैं, जहां के पशु ५०० पौं० वजन के भी नहीं होते। ऐसी स्थिति में उनसे गोबर और भी कम मिलेगा। गणना के लिए हमने यहां पर १२ सेर प्रति पशु लिया है ताकि हमारी गणना के अंक कम न माने जायें। इसके सिवाय यह भी होता**

की कमी के कारण जलाना पड़ता है और यह अनुमान है कि लगभग ४०%[1] भाग जलाया जाता है अर्थात् ६०% भाग ही खाद के लिए मिल सकता है। इस हिसाब से गणना करें तो $\frac{५५ \times ६०}{१००}$ = ३३ मन प्रति एकड़ पड़ा। नाइट्रोजन के रूप में गणना करें तो $\frac{३३ \times ·३}{१००}$ = ·०९९ मन अर्थात् ३.९६ सेर प्रति एकड़ नाइट्रोजन की मात्रा हुई।

हमें साधारण फसलों के लिए कम-से-कम १० सेर और अच्छी के लिए बीस सेर नाइट्रोजन प्रति एकड़ देना होता है। गन्ने जैसी फसल के लिए पचास-साठ सेर तक और दक्षिण भारत में इससे भी अधिक नाइट्रोजन की मात्रा देनी पड़ती है। यदि दस सेर प्रति एकड़ हो तो हमें गोबर द्वारा लगभग ४ सेर ही मिलती है। यदि ईंधन का दूसरा प्रबन्ध हो सके तो ४० प्रतिशत हमें गोबर से और मिल सकती है। इसके लिए हमें कृषकों को पेड़ लगाने का प्रोत्साहन देना चाहिए और बाद में बिना रोकटोक के जलावन की लकड़ी काटने की आज्ञा होनी चाहिए।

पशुओं का मूत्र भी अच्छा खाद होता है। उसे मिट्टी या घास में सोख कर खाद की ढेरी तक पहुंचाना चाहिए।

उपर्युक्त खाद के सिवा हमें घोड़े और भेड़-बकरी से भी खाद मिल सकता है। परन्तु घोड़े का खाद बहुधा शहर के कूड़े-कर्कट के खाद में चला

है कि बरसात का गोबर पतला होता है और गढ़े बनवाने की सुविधा न होने से वे नहीं बनाये जाते बल्कि खाद की ढेरी पर ही फेंक दिया जाता है। इसलिए १२ सेर लेना उचित ही है। ऐसे गोबर में लगभग ९० शतांश जल और बिना दाने की खुराक वाले पशु के गोबर में ०.२७ को से ·३ शतांश नाइट्रोजन रहती है। अमेरिका में जहां चारे-दाने का पूरा-पूरा प्रबन्ध रहता है, यह मात्रा दुगनी से भी अधिक मिल जाती है।

(१) Stewert Report 1944 p. 27.

जाता है। भेड़-बकरी का खाद मिल सकता है। यदि एक पशु पीछे १ सेर मान कर गणना हो तो हमें लगभग ७८ करोड़ मन खाद मिल सकता है जिसे यदि प्रति एकड़ गिना जाय तो ७८ करोड़ मन ÷ २९ करोड़ एकड़ = २.७ मन हुआ। चूंकि ये पशु भी बाहर चरने जाते हैं इसका दो-तिहाई १.८ मन ही होगा। बड़े पशु तथा भेड़-बकरी का खाद मिला कर प्रति एकड़ ३३ + १.८ = ३४·८ मन हुआ।

शेष खाद की पूर्ति के लिए खली या काम्पोस्ट जैसे कार्बनिक खाद का सहारा लिया जाय तो वे भी पूरे नहीं होते। अतः इनके साथ-साथ कृत्रिम खाद का प्रयोग करना ही होगा। आजकल एमोनियम सलफेट का मेल विशेष है। इस कारण खाद का आधा नाइट्रोजन इसके रूप में और आधा कार्बनिक खाद के रूप में देना चाहिए। कार्बनिक खाद में खली का खाद अच्छा है। परंतु वह भी यदि न मिले तो गोबर का खाद इतना देना चाहिए जिसके द्वारा नाइट्रोजन की मात्रा एमोनियम सलफेट की नाइट्रोजन से दूनी पहुंच जाय।

कृत्रिम खाद के मिश्रण

कृत्रिम खाद फसलों की आवश्यकतानुसार मिश्रित रूप में दिये जाते हैं, क्योंकि अलग देने से खर्चा विशेष पड़ जाता है। साधारणतः पत्ते व फूल वाली सागभाजी के लिए ५-१०-५, जड़ व कन्द वाली के लिए २-८-१० और बीज तथा फल वाली के लिए ४-८-८ खाद दिये जाते हैं।

उपर्युक्त अङ्कों का अर्थ यह हुआ कि प्रत्येक एक सौ भाग खाद के मिश्रण में पहले में ५ भाग नाइट्रोजन, १० भाग फा. पे. और ५ भाग पो. आ. मिलेंगे। इसी भांति दूसरे मिश्रण में २ भाग ना., ८ भाग फा. पे. और १० भाग पो. आ. और तीसरे में ४ भाग ना., ८ भाग फा. पे. और ८ भाग पो. आ. होंगे।

ऐसे मिश्रण और भी तरह के होते हैं और आवश्यकतानुसार साधारणतः एमोनियम सलफेट, सुपर फासफेट और पोटेशियम सलफेट से बनाते हैं। इनके द्वारा खाद्य तत्वों की मात्रा पूरी कर लेने पर शेष भाग ऐसी

चीज का मिला कर बना देते हैं जिसमें खाद्य तत्व न हो।

उदाहरण के लिए लीजिए हमें पहला मिश्रण बनाना है। हमें यह भी ज्ञात है कि एमोनियम सलफेट में २० शतांश नाइट्रोजन, सुपरफासफेट में २० शतांश फा. पे. और पोटेशियम सलफेट में ४८ प्रतिशत पो. आ. है।

एमोनियम सलफेट की मात्रा

२० भाग नाइट्रोजन के लिए १०० भाग, तो पांच भाग नाइट्रोजन के लिए हमें २५ भाग एमोनियम सलफेट लेना होगा।

उसी भांति १० भाग फा. पे. के लिए ५० भाग सुपरफासफेट और ५ भाग पो. आ. के लिए १०.४ भाग पोटेशियम सलफेट लेना होगा।

यदि हम तीनों को मिला दें तो हमारे पास २५+५०+१०.४= ८५.४ भाग माल बन गया। अब सौ भाग पूरा करने के लिए इसमें हमें १४.६ भाग दूसरी वस्तु मिलानी है जिसके लिए खड़िया मिट्टी मिला सकते हैं। इस हिसाब से जो मिश्रण बनेगा वह ५–१०–५ वाला मिश्रण बनेगा।

इसी तरह से जिस प्रकार का मिश्रण चाहे बना सकते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक ही खाद में दो या तीन तत्व रहते हैं। जैसे एमोफास में नाइट्रोजन और फासफोरस और नाइट्रो फोस्क में ना. फा. पे. और पो. आ. होता है। अथवा खली के खाद में थोड़ी बहुत मात्रा में तीनों तत्व पाये जाते हैं।

ऐसे पदार्थों से भी गणना करके मिश्रण बना सकते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ मिला कर खाद तैयार करते हैं। उस स्थिति में गणना निम्नलिखित रीति से होगी—

मान लो हमें २५ सेर नाइट्रोजन खली के रूप में और २५ सेर कृत्रिम खाद के रूप में देना है और हमारा मिश्रण ४-८-८ बनाना है तो उसकी गणना निम्नलिखित रीति से होगी।

मिश्रण के लिए खाद—खली ५.६% ना. १.९% फा.पे. १.४% पो. आ.

डबल सुपरफासफेट — ४० % ,,

पोटेशियम सलफेट — — ४८ % पो. आ.

५.६ ना. के लिए १०० तो २५ के लिए =४४९.४ सेर खली

उतनी खली से हमें =

$\frac{४४९.४ \times १.९}{१००}$ =८.५ सेर फा. पे.

$\frac{४४९.१ \times १.४}{१०}$ =६.२ सेर पो. आ. मिला

२५ सेर नाइट्रोजन के लिए एमोनियम सलफेट =१२५ सेर

उपर्युक्त मिश्रण से हमें ५० सेर नाइट्रोजन ८.४ सेर फा. पे. और ६.२ सेर पो. आ. मिले।

४-८-८ बनाने के लिए हमें ५० सेर ना.; १०० सेर फा. पो. और १०० सेर पो. आ. चाहिए, जिसमें से ५० सेर ना. खली और एमोनियम सलफेट से मिल गये। ८.५ सेर फा. पे. और ६.२ सेर पो. आ. खली के रूप में मिल गये। शेष सुपर फासफेट और पोटेशियम सलफेट से मिलाना चाहिए

१००-८.५=९१.५ सेर फा. पे.

$\frac{९१.५ \times १००}{४०}$=२२८.५ सेर डबल सुपर फासफेट लेना होगा

पो. आ.

१००-६.२=९३.८

$\frac{९३-८ \times १००}{४८}$=१९५.४ सेर पोटेशियम सलफेट हुआ

ऐसे मिश्रण का वजन हुआ	खली	४४९.४
	एमोनियम सलफेट	२२८.५
	पोटेशियम सलफेट	१९५.४
	कुल	८७०.३
खड़िया मिट्टी		१२९.७
		१०००.०

ऐसे मिश्रण से हमें ५० सेर नाइट्रोजन भी मिल जायगी और नाइ-ट्रोजन, फा. पे. और पो. आ. का अनुपात भी ठीक हो जायगा।

खाद कितना दिया जाय ?

यह भूमि की उर्वरा-शक्ति, फसल की जाति, सिंचाई का प्रबन्ध, वर्षा, तापमान, खाद देने की रीति इत्यादि बातों पर निर्भर है।

साधारणतः कमजोर भूमि में खाद का असर अधिक मालूम होता हैं। फसल की चाह भी देखी जाती है। जैसे दलहन जाति की अधिकांश फसलों को नाइट्रोजन का खाद नहीं या बहुत कम चाहिए; उन्हें फासफोरस के खाद की विशेष आवश्यकता होती है। सिंचाई का जहां प्रबन्ध होगा वहां खाद का असर अच्छा मालूम होगा। जहां वर्षा समयानुकूल और अच्छी होती है वहां भी खाद विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे। जहां के अत्यधिक और न्यूनतम तापमान में विशेष अन्तर नहीं होता वहां भी खाद विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे। खाद देने की रीति पर भी खाद का असर बहुत निर्भर है। कृत्रिम खाद यदि भूमि के अन्दर बीज के नीचे या उनकी बगल पर दो-तीन इंच की दूरी पर रहे तो वह विशेष लाभप्रद होता है।

ऐसी स्थिति में कम-से-कम इतना तो अवश्य करना चाहिए कि नाइ-ट्रोजन की मात्रा जितनी फसल द्वारा खेत से ली जाय उतनी अवश्य डालनी चाहिए। सरकार ने जगह-जगह कृषि-प्रयोग-फार्म खोल रक्खे हैं। जहां से कौन-सी फसल के लिए कितना खाद देना चाहिए इसकी जानकारी मिल जायगी।

फसल के द्वारा नाइट्रोजन की मात्रा कितनी हटाई जाती है यह उपज से गणना करके निकाल सकते हैं। फसलों के बीज तथा भूसे में अथवा अन्य भागों में नाइट्रोजन की कितनी मात्रा रहती है यह शतांश के रूप में आगे दी गई है, जिससे गणना की जा सकती है। ऐसी गणना के पश्चात यह देखना चाहिए कि यदि खाद कृत्रिम नहीं है तो मात्रा बढ़ानी होगी, क्योंकि गोबर जैसे कार्बनिक खाद के नाइट्रोजन का पूरा असर पहली फसल पर नहीं होता। ५० शतांश पहली पर, ३० शतांश दूसरी पर और शेष तीसरी

फसल पर मिलेगा। इसलिए ऐसे खाद द्वारा दुगना नाइट्रोजन पहुंचे इतना खाद पहली फसल को देना चाहिए।

फासफेट के खाद के विषय में यह कहा जा सकता है कि फसल की मांग से ढाई-तीन गुना डालना चाहिए। क्योंकि एक तो वह खाद जब भूमि में डाला जाता है तो बहुत-सा अघुलनशील हो जाता है; और दूसरी बात यह है कि फासफेट भूमि-कणों के साथ चिपक जाता है। जड़ों को उसके पास पहुंचना पड़ता है। नाइट्रोजन के लवण घुलनशील होने से भूजल के साथ स्थानान्तरित होकर जड़ों के पास पहुंच जाते हैं और पौधे लाभ उठा लेते हैं। फासफेट की प्राप्ति के लिए अधिकतर जड़ों को फासफेट के पास जाना पड़ता है अथवा यों कहिये कि जड़ों के मार्ग में जो फासफेट आता है उसी से लाभ पहुंचता है।

पोटाश के खाद की अधिकांश स्थानों में आवश्यकता नहीं। लेखक के कई प्रयोगों में इस खाद का उलटा ही असर रहा।

चूना अम्लदार मिट्टी में और केलशियम सलफेट क्षार वाली भूमि में डालना चाहिए।

खाद देने की रीति

खाद देने की रीति खाद की जाति और मात्रा पर निर्भर है। गोबर या कूड़े-कर्कट का खाद बहुत अधिक मात्रा में दिया जाता है। वे खेतों में छींटकर मिट्टी में मिला दिये जाते हैं। ऐसे खाद फसलों के बोने के पहले ही डाल दिये जाते हैं। खली जैसे खाद जो कम मात्रा में दिये जाते हैं, उन्हें खेत में छींट कर या पौधों के आसपास देते हैं। ऐसे खाद फसल बोने के कुछ दिन पहले और कुछ खाद खड़ी फसल को भी देते हैं। रासायनिक खाद फसल बोते समय या खड़ी फसल को या दोनों समय दिये जाते हैं। ऐसे खाद भूमि पर छींट कर या पौधों के आसपास बीज से दो-तीन इंच की दूरी पर या उतने ही गहरे दिये जायं तो विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे।

हरे खाद की फसल पूरी-की-पूरी गाड़ दी जाती है।

हरे खाद की फसलें

खेत में उपजाई हुई हरी फसलें खाद के निमित्त गाड़ दी जायें या हरी फसलें तथा हरे पत्ते इत्यादि बाहर से लाकर खेतों में गाड़े जायं तो उन्हें हरे खाद कहेंगे।

जो फसलें खेत में इस कार्य के लिए उपजाई जायं वे ऐसी हों कि उनकी बाढ़ जल्दी हो, उनके अंग ऐसे कोमल हों कि जल्दी-से-जल्दी सड़ सकें और वे ऐसी भी हों कि वायुमंडल की नाइट्रोजन का उपयोग अधिक मात्रा में कर सकें। ऐसी फसलें दाल वर्ग की होती हैं। हरे खाद की सफलता भूमि की जाति तथा वर्षा पर निर्भर है। मटियार भूमि अथवा जिसमें कार्बनिक पदार्थ अधिक हो उसमें ये इतने लाभप्रद नहीं होते जितने हलकी भूमि में। वर्षा के विचार से देखा जाय तो हरे खादों का उपयोग बिना सिंचाई वाले खेतों में वहीं सफल होगा जहां वर्षा चालीस इंच से अधिक हो। इससे कम वर्षा वाले स्थानों में यदि काम में लाये जायें तो उन्हें चार-पांच सप्ताह की आयु के होने पर ही गाड़ देना चाहिये या फिर सिंचाई का प्रबन्ध होना चाहिए। हरे खाद के गाड़ने के बाद लगभग तीन इंच पानी हो जाय तो अच्छा है। हरे खाद के गाड़ने और दूसरी फसल के बोने में कम-से-कम दो माह का अन्तर उत्तम होगा।

हरे खाद के लिए हमारे देश में निम्नलिखित फसलें उपयोगी होंगी—

वर्षा के प्रारम्भ के समय में बोई जानेवाली फसलें

सन	Sannhemp	*Crotolaria juncea*
ढेंचा	Dhaincha	*Sesbania aculeata*
शेवरी	Shevri	*Sesbania aegyptica*
ग्वार	Cluster bean	*Psymopsis proraliodes*
चवली	Cow pea	*Vigna catiang*
सेम	Sem	*Dolichoslablab*
उड़द	Urid	*Phaseolus mungo*

बरसाती फसलें लेने के बाद बोई जाने वाली हरे खाद की योग्य फसलें।

ये फसलें या तो बरसाती फसल की कटाई के बाद या धान जैसी फसल जब पकने को होती है तो खेतों में हरे खाद वाली फसलों के बीज छींट देते हैं।

ऐसी फसलों में सेंजी Senji *Melilotus parviflora*, पीली पसेरा Pillipesara *Phaseolus trilobus* और कुलथी Kulthi *Dolichos biflorus* की गणना की जा सकती है।

उपर्युक्त दलहन वाली फसलों के सिवाय भूमि में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि के विचार से सूरजमुखी Sunflower *Helianthus anus* और *Tithonia diversifolia* तथा सरसों Sarson *Brassica campestris* भी अच्छी होती है।

हरे पत्ते धान के खेतों में गाड़ने के लिए मद्रास की तरफ विशेष रूप से काम में लाते हैं। इसके लिए कुरंज, अकौन, आक, इत्यादि के पत्ते अच्छे होते हैं।

आजकल आधा सीसी बरसात में जगह-जगह बहुत बढ़ रही है। इसके हरे पौधे खाद के लिए काम में लाने चाहिए।

इनके सिवाय लेखक ने पूसा में नदी में होने वाले सेवार का भी प्रयोग खाद के लिए किया तो लाभप्रद ही रहा। तालाब या नदी-नालों में जहां सेवार हो जाते हैं, उन्हें इकट्ठे कर खेतों में डाल देना चाहिए।

उपर्युक्त खाद की फसलों में से वर्षा में होने वाली को साधारण जुताई के पश्चात खेतों में बीज छींट कर बो सकते हैं। जब यह अनुमान हो जाय कि अब वर्षा तीन-चार इंच हो जायगी, उस समय गाड़ देनी चाहिए। अथवा यदि देखा जाय कि बाढ़ बहुत अधिक हो रही है तो जल्दी भी गाड़ सकते हैं।

हरे खाद के काम में लाई जानेवाली मुख्य-मुख्य फसलों के बीज की मात्रा, बोने की रीति, फूलते समय की उपज, उसमें जल तथा अन्य खाद्य पदार्थ की मात्रा नीचे लिखी सारणी में देखिये—

नाम फसल	मात्रा बीज प्रति एकड़	बोने की रीति	उपज प्रति एकड़ हरे पदार्थ की	जल %	खाद्य पदार्थ सूखे पदार्थ में			
					ना. %	फा. पे. %	पो. आ. %	चूना %
सन	३० सेर से १ मन	छींट कर	१०० से ३०० मन	७५	२.५	०.५	२.०	२.५
ढेंचा (१)	१ मन	छींट कर	१०० से २५० मन	७५	१.९	०.४	१.८	१.६
ग्वार	१५ सेर	छींट कर या कतारों में	१०० से २०० मन	८०	३.०	०.५	१.८	०.४
चवली	२० सेर	कतारों में	१०० से २०० मन	८०	२.५	०.७	२.७	३.०
सेंजी	२० सेर	छींट कर	१५० से २०० मन	७५	३.०	०.४	२.५	—
पिली पसेरा	१५ सेर	छींट कर	१२५ से २०० मन	७५	०.५	—	—	—
उड़द	१० सेर	कतारों में	८० से १०० मन	७५	३.४			

१. बीज के लिए जो ढेञ्चा बोया जाय, उसके बीज ८-१० सेर प्रति एकड़ कतारों में वर्षारम्भ के समय बोना चाहिए। कतारों में डेढ़-दो फुट की दूरी उत्तम होगी। उपज बीज १२ से १५ मन तक हो जाती है। फसल ४ व ५ महीने में तैयार हो जाती है।

निम्नलिखित अंकों से ज्ञात होगा कि हरे खाद की उपज पृथक-पृथक स्थान में पृथक-पृथक होती है।[2] खाद्य तत्वों की मात्रा उपर्युक्त सारणी में सूखे पदार्थ में दी गई है ताकि पहले सूखे पदार्थ का अनुमान करके उससे खाद्य पदार्थों की मात्रा निकाल सकें।

	धान खण्ड	गेहूं या कपास खण्ड
	मन	मन
सन	५० से १२५	१९० से २७५
ढेंचा	४० से १००	१२५ से २५०
चवली	४० से ९०	१५० से २००

इतना ध्यान रहे कि दाल वर्ग के हरे खाद द्वारा कुछ नाइट्रोजन और कार्वानिक पदार्थ वायुमंडल से मिलते हैं, परन्तु फासफेट, पोटाश तथा चूना भूमि से ही लिये जाते हैं और भूमि में ही खाद के साथ पहुँच जाते हैं। अन्तर यही होता है कि इनका रूप बदल जाता है, जिससे दूसरी फसल के पौधे कुछ अधिक मात्रा में इनका उपयोग करते हैं।

१३—कृषि-यंत्र और कृषि का यंत्रीकरण

यन्त्रीकरण से हमारा उद्देश्य उस खेती से है, जिसमें ट्रेकटरों और उनसे चलने वाले यन्त्रों द्वारा खेती की जा सके।

यंत्रीकरण के गुण-दोष

भारत की वर्तमान स्थिति में जबकि हमें ट्रेक्टरों और उनसे चलने-वाली कलों तथा उनके लिए तेल तक वाहर से मंगवाना पड़ता है, ट्रेक्टरों द्वारा खेती किस अंश तक सफल होगी यह बतलाना कठिन ही है। बनखंड और ऊबड़-खाबड़ भूमि को खेती के योग्य बनाने में ट्रेक्टर ही काम के हैं; परन्तु जुताई योग्य खेतों में तो पशु-शक्ति से ही काम लेना उचित है। भविष्य में जब मनुष्य अपने दैनिक कार्य के लिए भी यन्त्रों के अधीन हो जायगा उस समय साधारण खेती का काम इनके बिना नहीं चलेगा।

2. BAL, D. V. 1937 Proe. Board Agri & Animal Husbandry India Crop & soil Wing 2nd meeting p. 195.

वर्तमान समय में इनके उपयोग में निम्नलिखित बाधाएं पाई जाती हैं–

(१) कृषक वर्ग गरीब है और यंत्रों का मूल्य बहुत है।

(२) साधारण कृषकों को आवश्यकतानुसार पेट्रोल, तेल, गीयर का तेल आसानी से नहीं मिलता।

(३) हमें हमेशा गहरी जुताई की आवश्यकता नहीं। भूमि की सतह को उचित समय पर थोड़ी बहुत उलट-पुलट कर देने से प्रकृति स्वयं अपनी जलवायु और तापमान से भूमि को पका देती है और भूमि में पौधों के लिए खाद्य पदार्थ तैयार कर देती है।

(४) हमारे खेत बहुत छोटे हैं।

(५) हमें कार्बनिक खादों की विशेष आवश्यकता है, जो पशुओं से ही मिल सकता है।

(६) हमारे यहां एकांगी खेती बहुत कम होती है। अधिकतर मिश्रित ही होती है, जिससे बैलों से चलने वाले हल के यन्त्र ही विशेष उपयोगी होते हैं।

(७) हमारे यहां कारीगर भी सब जगह ऐसे नहीं पाये जाते जो ऐसे यन्त्रों को ठीक से चला सकें। 'अल्प विद्या भयंकरी' वाला हिसाब है। अन्य देशों में कृषक स्वयं ही यन्त्रों को सुधार लेते हैं। हमारे कृषक को तो ड्राइवर महोदय की मर्जी पर चलना होगा।

(८) सरकार की वर्तमान नीति के अनुसार जब कोई भी व्यक्ति बीस, चालीस या पचास एकड़ से अधिक भूमि नहीं रख सकेगा तो ट्रेक्टर से कैसे काम ले सकेगा? सामूहिक कृषि-योजना को कार्यान्वित करना इतना सरल नहीं दिखता, जितना उसका मौखिक प्रचार।

चूंकि यह पुस्तक सिर्फ उन्हीं के लिए नहीं लिखी जा रही है जिनके विचार ऊपर जैसे हों। हमें तो यन्त्रीकरण में श्रद्धा रखने वाले के प्रति भी आवश्यकीय बातें यहां बताना है। जिन्हें बन-खंड या ऊबड़-खाबड़ भूमि सुधारना है तो उन्हें सरकारी विभाग की सहायता लेनी चाहिए।

(१) जिनके पास चार सौ एकड़ से अधिक भूमि हो उन्हें दो ट्रेक्टर रखने होंगे वरना यदि ठीक खेती के समय पर एक बिगड़ा तो काम ठप्प हो जायगा।

(२) इनके साथ के उपयोगी यन्त्र भी सब मंगवाने चाहिएं। ताकि सब काम अच्छी तरह समय पर हो सके।

(३) विशेषज्ञों की सम्मति से ही ट्रेक्टर और यन्त्र खरीदने चाहिएं। विक्रेताओं की बातों पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए। क्योंकि बहुत से विक्रेताओं को स्थानीय स्थिति का पूरा ज्ञान नहीं होता।

(४) आपकी भूमि बलुआ या बलुआ-दुमट है तो हलके ट्रेक्टरों और उनसे चलने वाले यंत्रों से काम चल जायगा। लेकिन यदि मिट्टी भटियार और भारी है तो भारी और मजबूत ट्रेक्टर और उनसे चलने वाले यन्त्र काम के होंगे।

(५) आपके ४०० एकड़ के फार्म पर दो ट्रेक्टरों के अतिरिक्त निम्न-लिखित यन्त्र अवश्य होने चाहिए—

(१) तीन फार वाले दो हल

(२) दो डिस्क हेरो या कल्टीवेटर

(३) बोने के लिए एक या दो 'सीड ड्रिल'

(४) एक 'मल्टी थ्रेशर' या विनोअर, ताकि फसल की तैयारी और उड़ावन का काम जल्दी हो सके।

(५) गन्ने की खेती की सुविधा हो तो उसे पीलने के लिए पावर क्रशर (एञ्जिन द्वारा चलने वाली चर्खी) भी होनी चाहिए।

(६) अवकाश के समय ट्रेक्टरों से काम लेने के लिए एक आटे की चक्की, दाल दलने की चक्की या तेल की घानी भी रखनी चाहिए वरना ट्रेक्टर तथा खेती के यन्त्रों का घिसावन तथा ब्याज देना भारी हो जायगा।

(७) ट्रेक्टर चार प्रकार के होते हैं (१) रेंगने वाले जो चेन पर चलते हैं (२) चार पहिये वाले। (३) चार पहिये वाले लेकिन अगले दो पहिये
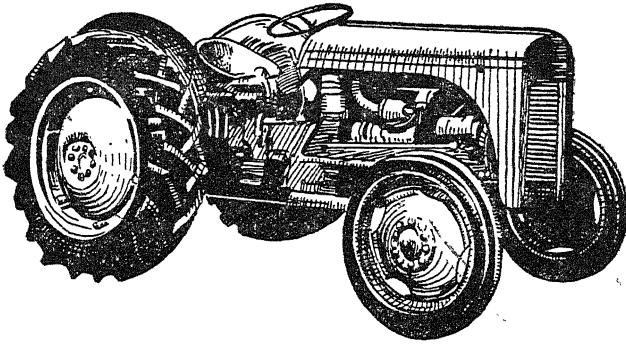
ट्रेक्टर—चित्र नं. २
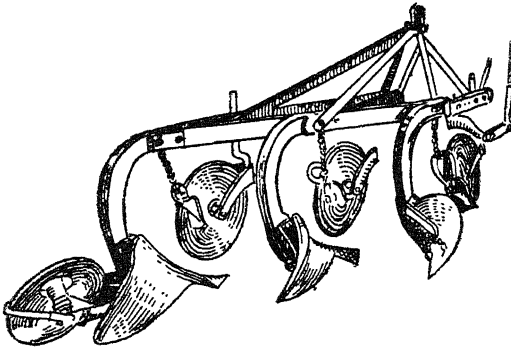
तीन फारवाला
चित्र नं. ३
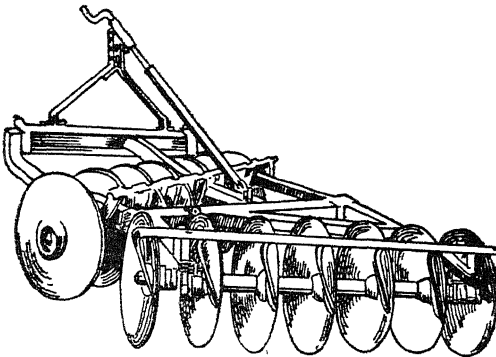
डिस्कहेरे
चित्र नं. ४

नजदीक रहते हैं (४) छोटे ट्रेक्टर जो सागभाजी की खेती में थोड़ी भूमि के योग्य हों।

(८) चेन पर चलने वाले ट्रेक्टर की अपेक्षा पहिये वाले अच्छे होते हैं क्योंकि उनसे खाद, फसल और माल ढोने का काम लिया जा सकता है।

(९) पेट्रोल, तेल, गीयर तेल और टेक्टर तथा यंत्रों के कुछ ऐसे भाग जिनके जल्दी घिसने या टूटने की संभावना हो उनके मेल का प्रबन्ध रखना चाहिए।

(१०) सिर्फ ट्रेक्टरों पर ही निर्भर न रहें, कुछ बैल जोड़ी भी छोटे-मोटे काम के लिए अवश्य रक्खें।

ट्रेक्टर द्वारा खेती के लाभ—

(१) शहरों के निकट जहां कारखानों की अधिकता के कारण मजदूर न मिलते हों वहां काम जल्दी और समय पर करने के लिए ट्रेक्टर काम की वस्तु है।

(२) खेत जोतने, बोने और माल की तैयारी के काम जल्दी हो जाते हैं।

(३) बैलों के चारे-दाने और उनके रहने के स्थान की सफाई में बहुत-सा समय लग जाता है, वह बच जाता है।

पशुशक्ति द्वारा काम में आने वाले यंत्र और अन्य आवश्यकतायें—

हमारे यहां एकांगी कृषि करने वाले कृषक बहुत ही कम हैं। बहुधा कृषक मिश्रित खेती वाले हैं। ऐसे कृषक अनाज भी उपजाते हैं—साग-भाजी भी पैदा करते हैं—फलों के छोटे-मोटे बगीचे भी लगा देते हैं और पशु-पालन का काम भी साथ-साथ करते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें कई प्रकार के यंत्र रखने पड़ते हैं।

यंत्रों की संख्या क्षेत्रफलानुसार होगी; परन्तु छोटे-से-छोटे २५ एकड़ के फार्म पर भी निम्नलिखित चीजें तो होनी ही चाहिएं।

माल, खाद और अन्य सामान ढोने के लिए बैलगाड़ी	१
खेतों में से घासपात फेंकने के लिए हाथ-गाड़ी	१
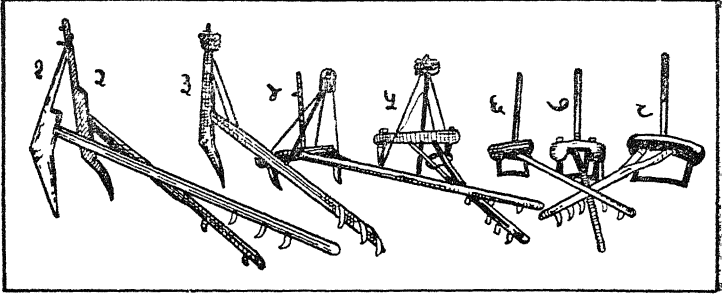
चित्र नं० ५

जुताई के लिए हल,	जमीन चीरने वाले देशी	२
	जमीन चीर कर मिट्टी उलटने वाले	
	(क) मैदानी भूमि के लिए	१
	(ख) पहाड़ी ढालू भूमि के लिए	१
	'टर्नरेस्ट टाईप' जिसमें भूमि उलटने वाला भाग इच्छानुसार दायां-बायां किया जा सके	१
	(ग) नाली बनाने वाला हल	१
ढेले तोड़ने के लिए,	हेंगा, पठार, पाटा या सोहागा। (यह एक मोटी लकड़ी का पाट जैसा होता है। इससे हल चलाने से जो ढेले पड़ जाते हैं, वे तोड़ दिये जाते हैं)	१
हल्की जुताई के यंत्र,	बखर	२
बोने के यंत्र	नाई एक चांस वाली हलके हल जैसी	२
	या दो ,, ,,	१
	या अरगड़ा	१
	और टिफन	१

	या "ड्रिल" बैलों से चलने वाली	१
निदांई या निराई के लिए	बैल से चलने वाले "हो"	२
	खरीफ और रबी के लिए अलग-अलग (इन्हें डोरा, डूडियां या करपा भी कहते हैं) ।	२
	एक पहिये वाला 'हो' बगीचे के लिए	१
	कांटे	४
	खुर्पी	६
खोदने के लिए	गैन्तरी	२
	कोदाल या फावड़ा	४
	सब्बल	१
सिंचाई के लिए	यदि कुएं से पानी देना हो तो चड़स, चकरी-रस्से इत्यादि जिस प्रकार से सिंचाई की जाय वैसे यंत्र रखने होंगे। सिंचाई के स्तम्भ में यन्त्रों का वर्णन देखें ।	२
फसल काटने के लिए	हंसुआ, दरान्ता	६
	गंडासा	२
दोहनी के लिए	बहुधा बैलों से की जाती है, परन्तु यदि फार्म १०० एकड़ से अधिक का हो तो दोहनी और उड़ाने वाली कल रखना अच्छा होगा ।	
उड़ावन के लिए	साधारणतः हवा से ही यह काम लिया जाता है परन्तु हो सके तो दो-चार कृषकों को मिलकर एक उड़ाने वाली कल जिसके द्वारा दाना-भूसा अलग हो जाता है, रख लेनी चाहिए, ताकि	१

	हवा के लिए ठहरना न पड़े और काम समय पर हो जाय।	
गुड़ बनाने के यंत्र	चर्खी–रस निकालने के लिए	१
	नांद–चर्खी से गिरता हुआ रस इकट्ठा करने के लिए लोहे का बर्तन	१
	घड़े या बालटियां	४
	कड़ा–रस उबालने के लिए	१
	खुर्पे–उबलते हुए रस को चलाने के लिए	३
	झरने	२
	ग्रेट–भट्टी में लगाने के लिए	१
	छड़–भट्टी में जलावन हिलाने के लिए	१
	शावेल–राख निकालने के लिए	१
छोटा मोटा बढ़ई का काम करने के लिए	कुल्हाड़ी	१
	आरी	१
	बसूला	१
	रुखानी	१
	हथौड़ा	१
बगीचे के लिए	छुरी या चाकू कलम बांधने के लिए	१
	कैंची—बड़ी पेड़ छांटने की कैंची	१
	छोटी-छोटी टहनियां काटने के लिए	१
	'सीकी' पेड़ों पर से फल उतारने के लिए कांटा	१
	अन्य वजन के लिए	१
	तगारी, घमेले, तसले	६
	टोकरियां	६

यन्त्रों के सिवाय अन्य—

यन्त्र रखने का स्थान एक ओर से खुला हुआ ३०′×१०′ १

छोटा-मोटा सामान और वीज इत्यादि रखने के लिए घर	१२′×१०′	२
चौकीदार का घर	१२′×१०′	
मालिक के रहने का घर छोटा-बड़ा इच्छानुसार—		
पशुशाला —२ जोड़ी बैल १ गाय १ वछड़ा १ भैंस १ बछड़ा	१०′×४′ स्थान प्रत्येक बड़े पशु के लिए ।	

१४—जुताई

कितने कार्य में कितने मजदूरों की आवश्यकता होगी अथवा एक मजदूर कितना काम कर सकेगा अथवा कितने पशु कितना कार्य कितने समय में कर सकेंगे यह स्थानीय जलवायु, मनुष्यों के स्वास्थ्य तथा पशुओं के स्वास्थ्य और उनके खान-पान पर निर्भर है। पंजाब की जलवायु ऐसी है कि वहां मनुष्य तगड़े और पशु भी काफी बड़े होते हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि वहां के मनुष्य तथा पशु थोड़े समय में अधिक काम कर
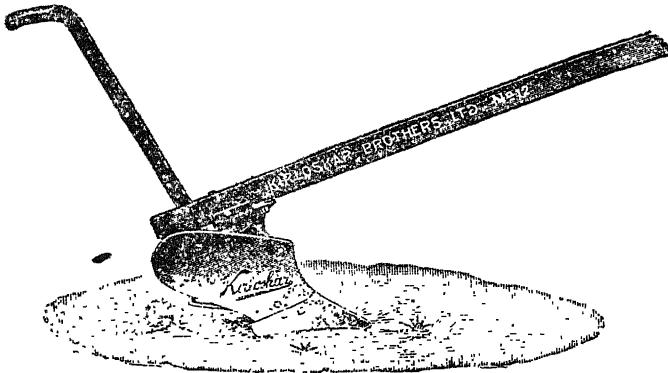
चित्र नं० ६

सकेंगे। इसके विपरीत बंगाल के कृषक तथा वहां के छोटे-छोटे पशु उतना काम नहीं कर सकते। यहां पर मध्य श्रेणी[1] के व्यक्ति तथा पशुओं के काम का अनुमान दिया जायगा। इससे पाठक स्थानीय स्थिति के अनुसार कुछ बड़ा-घटा कर अनुमान कर लें। इतना और ध्यान रहे कि खेती के काम में एक हलवाहा और एक जोड़ी बैल से जितना काम होता है दो जोड़ी होने से दुगने से कुछ अधिक काम होता है, यदि दोनों हलवाहे एक समान उत्साही हों। कृषि-कार्य के प्रत्येक स्तम्भ में इन सबका अनुमान दिया है।

जुताई

भूमि की सतह को चीर-फाड़कर अनाज, सागभाजी या फल उत्पादन करने जैसी बनाने की क्रिया को जुताई कहते हैं।

जुताई के उद्देश्य (१) जमी हुई भूमि की ऊपरी तह को बिखेरना ताकि उसमें हवा का आवागमन अच्छा हो और प्राकृतिक रासायनिक क्रिया द्वारा पौधों के लिए भोजन तैयार हो सके।

(२) धूप लगने से भूमि में भूमि-कणों का छेदन (Weathering) अच्छा हो।

(३) भूमि में जल-संचय की शक्ति का बढ़ना।

(४) खेतों में उपजने वाले घास-पात को नष्ट करना।

(५) प्रारम्भ में पौधों की कोमल जड़ों को फैलने में सुविधा हो।

(६) कीट तथा उनके अंडे और व्याधियों के जन्तु जो भूमि में हैं वे नष्ट हो जायं।

जुताई के यन्त्र

जुताई दो प्रकार की होती है; एक वह जो देशी हलों से की जाती है जिसमें भूमि चिर जाती है और थोड़ी बहुत उलटती है। दूसरी वह जिसमें

---

१. पुरुष लगभग दो मन वजन वाला, स्त्री लगभग सवा मन वजन वाली और पशु लगभग दस बारह मन वजन वाला।

उड़ीसा
जोरहाट
सोलन
कानपुर
भागलपुर
झांसी
पटना
मुजफ्फरपुर
रांची
पूना
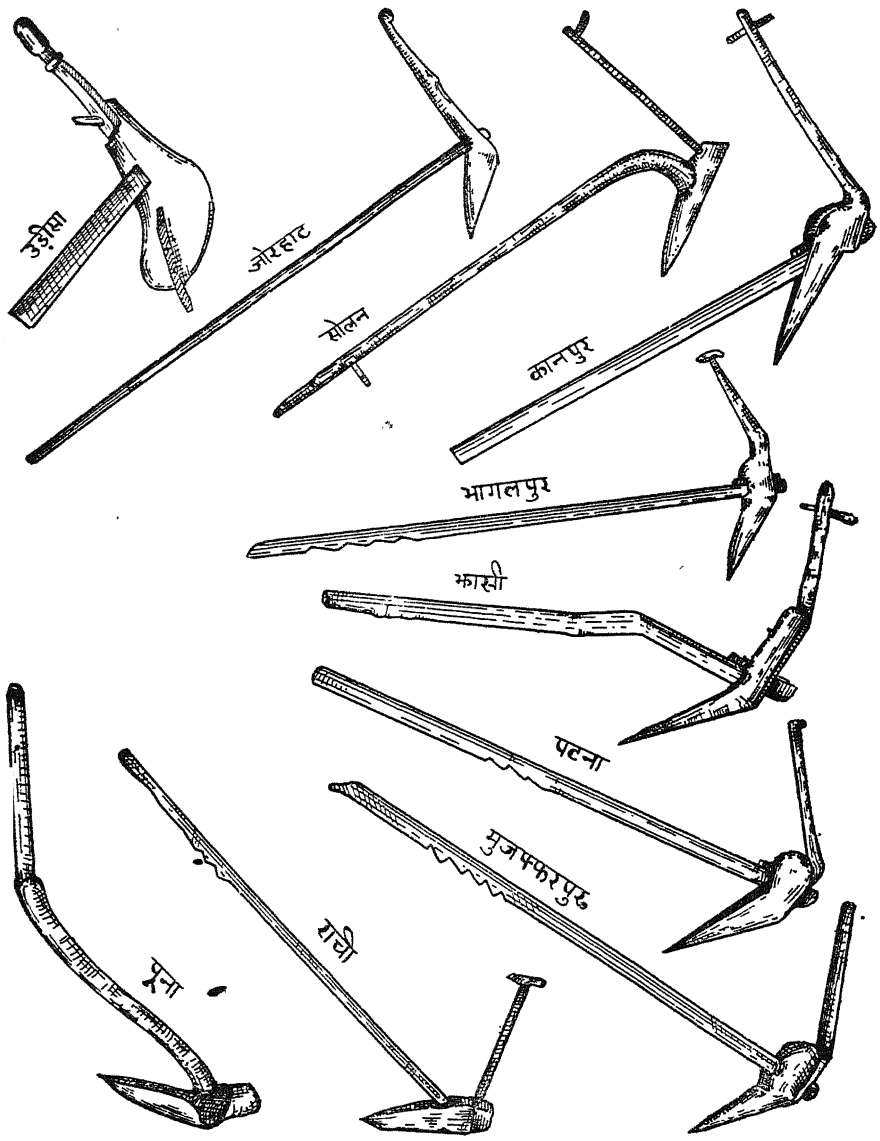
भूमि कटकर उलट जाती है अर्थात ऊपर की तह नीचे और नीचे का भाग ऊपर आ जाता है।

देशी हल (देखिये चित्र नं ७, पृष्ठ-६९)—भारत के विभिन्न प्रान्तों में अलग-अलग वजन के होते हैं। सबसे भारी हल दक्षिण बम्बई की तरफ होता है,जो दो जोड़ी बैल से चलता है और सबसे हलका आसाम और बंगाल का होता है जिसे कृषक कंधे पर उठा कर आसानी से खेत तक ले जाते हैं। भारत में अब मिट्टी उलटने वाले हल भी बनते हैं (दे० चित्र नं ६ पृष्ठ ६७) और बैलों से आसानी से काम में लाये जाते हैं। ट्रेक्टर द्वारा फार वाले और तवे नुमा हल काम में आते हैं। इनसे नौ-दस इंच गहरी जुताई हो जाती है। देशी हल से ४-५ और मिट्टी उलटने वाले हलों से५-६ इंच तक की जुताई हो जाती है।

किस प्रकार के यंत्र काम में लाये जायं यह भूमि की जाति, पशु की शक्ति, फसल की मांग और भूमि में उपजने वाले घासपात की जाति पर निर्भर है।

भूमि की जाति—साधारणत: कास रहित काली मिट्टी, जो अपने आप फट जाती है, के उलटने की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरीत भारी और नहीं फटने वाली मिट्टी को उलटना लाभप्रद होगा।

पशु-शक्ति—जहां पशु बहुत कमजोर और छोटे होते हैं वहां मिट्टी उलटने वाला हल नहीं खींचा जा सकेगा। ऐसी स्थिति में जुताई की संख्या बढ़ाना होती है।

फसल की मांग—धान-जैसी फसल जो पानी में होती है और पानी भरे खेतों में ही बहुधा जुताई करना पड़ती है तो वहां देशी हल ही काम के होंगे। जहां भूमि में बैठने वाली जड़ या कन्द वाली फसल लगाना हो वहां जुताई अच्छी गहरी होगी तभी बड़े और सुन्दर आकार के कन्द होंगे।

घास-पात—जहां कांस जैसे घास का जमाव विशेष हो जाय वहां भूमि को गहरी जोत कर उलटना ही अच्छा होता है ताकि उनकी जड़ें मर

जायं। कभी-कभी तो इसकी जमावट ऐसी हो जाती है कि ट्रेक्टर वाले हल काम में लाना पड़ता है।

पहाड़ी हिस्सों को जुताई के लिए यदि मिट्टी उलटने वाला हल काम में लाया जाय तो वह ऐसा होना चाहिए कि उसका मिट्टी उलटने वाला भाग दायां-बायां हो सके।

नाली बनाने वाले हल में मिट्टी उलटने वाले भाग दोनों ओर लगे रहते हैं जिससे नालियां बन जाती हैं।

बखर—यह बड़ा उपयोगी यन्त्र है। इससे भूमि की हलकी जुताई
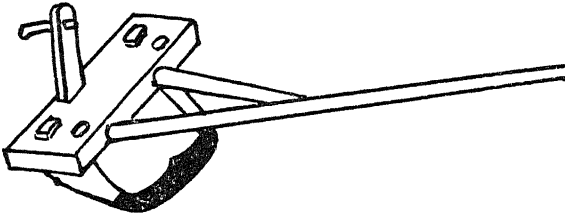
चित्र नं० ८
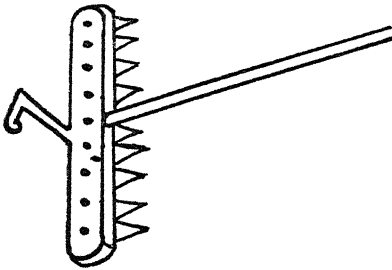
भी होती है और ढेले भी टूटते जाते हैं। भारत के बहुत से भागों में यह काम में लाया जाता है। जहां न हों, वहां इसे अपनाना चाहिए।

चित्र नं० ९

हेंगा (सोहागा, पठार)—यह लम्बा लकड़ी का टुकड़ा होता है, जिसके दोनों छोर पर कड़े या खूटियों द्वारा रस्सी अटकाने की व्यवस्था होती है। दोनों एक छोर पर एक-एक जोड़ी बैल जोत कर इसे खेतों में

चलाते हैं। वजन अधिक करने के लिए इसपर हांकने वाले खड़े हो जाते हैं। स्प्रिंगटूथ नाम का 'हेरो' जो लोहे का बना होता है वह भी ऐसे काम में
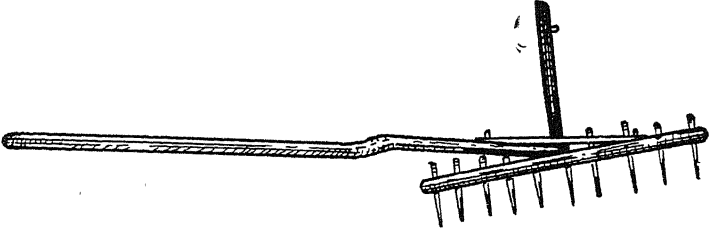
चित्र नं० १०

आता है। जुती हुई जमीन में से घासपात इकट्ठा करने के लिए कीलें वाला हेरो (दे० चित्र न० १०) काम में लाते हैं।

बहुत बड़े-बड़े खेतों में तवे वाला हेरो या कल्टीवेटर नाम के यन्त्र ट्रेक्टर द्वारा चलाकर हलकी जुताई की जाती है और ढेले तोड़े जाते हैं। छोटे खेतों में हलका हेरो (चित्र नं० ११) बैलों द्वारा चलाया जाता है।
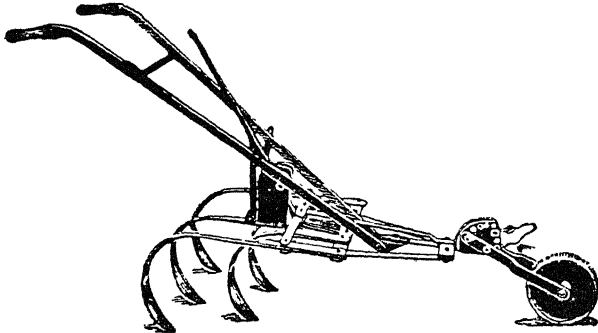
चित्र नं० ११

*जुताई के कार्य का अनुमान

यंत्र	बैल जोड़ी	मजदूर पुरुष	कार्य
देशी हल सादा	१	१	०.७५ एकड़
मिट्टी उलटने वाला हलका हल	१	१	०.७५ एकड़
मिटटी उलटने वाला भारी हल	२	३	० ३ ,,
नाली बनाने वाला हल	१	१	१ से १.५ एकड़ यदि नालियां २½ की दूरी पर हों।
बखर	१	१	२–३ एकड़
स्प्रिंगटूथ हेरो	१	१	३–३.५ ,,
कील वाला हेरो	१	१	५–६ ,,
हेंगा (पठार)	२	२	५–६ ,,
ट्रेक्टर			
हल तीन फारवाला		१	२–३ ,,
डिस्क हेरो		१	१० एकड़
कल्टीवेटर		१	४ एकड़

१५—बीज और बोआई

बीज से यहां पर हमारा उद्देश्य उन अंगों से है, जिनके बोने या लगाने से नये पौधे मिल जायं। अधिकांश अनाजों के तो बीज ही बोये जाते हैं; वे ऐसे होने चाहिए कि उनका दाना एक-सा हो, भारी हो और व्याधि रहित अथवा कीटों से हानि पहुंचाया हुआ न हो। कितने दिनों के बीज अच्छे हो सकते हैं इसका ब्योरा आगे दिया गया है। बीज कितना, कितनी दूरी पर और किस रीति से बोना चाहिए इसका वर्णन फसल की खेती के वर्णन में दिया गया है।

गन्ने के लिए गन्ने के टुकड़े बोये जाते हैं। ये व्याधि रहित होने चाहिए।

साग-भाजियों में कई के बीज बोये जाते हैं। कई के पौधों के अंग लगाये जाते हैं, जैसे आलू, लहसुन, सूरन, अदरक, हल्दी इत्यादि। किसी-किसी के बीज से रोप नर्सरी में तैयार करके लगाना होते हैं जैसे गोभी, धान, इत्यादि। फलों के बीज भी बोये जाते हैं और उन्हें कलम से भी तैयार करते हैं।

पौधे रोपने अथवा उनके अंग लगाने में प्रति एकड़ मजदूरों की संख्या इस हिसाब से आम तौर पर होती है।

नाम फसल	कार्य	पु.	स्त्रियां
धान, रागी, इत्यादि छीलना	रोप लगाना	१०-१२	या १५-२०
गन्ना	टुकड़े करना,	२-३	
	और गन्ने के टुकड़े गाड़ना	३-४	
आलू, सुथनी, कच्चू	लगाना	७-८	या १०-१२
प्याज	रोपना	२५-३०	या ३०-४०
गोभी	रोपना	७-८	या १०-१२
हलदी	लगाना	७-८	या १०-१२
अदरक	लगाना	१०-१२	या १५-२०
सूरन, गराड़ू, रतालू	लगाना	६-७	या १०-१२
शकरकन्द, परवल	लता के टुकड़े लगाना	१०-१२	या १५-२०
टमाटर, बैंगन मिर्च	रोपना	६-७	या ८-१०

बोआई

बोने की क्रिया तीन प्रकार की होती है। (१) बीज छींट कर (२) यन्त्र द्वारा कतारों में (३) बीज नर्सरी में छींट कर जब पौधे तैयार हो जायं तो उनके रोप लगाना। कुछ जाति के बीज तो ऐसे होते हैं जिन्हें छींट कर ही बोया जाता है जैसे बरसीम, खसखस इत्यादि। कुछ ऐसे होते हैं जिनके रोप लगाना ही उत्तम होता है जैसे गोभी, प्याज इत्यादि। कुछ ऐसे होते

हैं जिन्हें छींटकर और कतारों में दोनों रीति से बो सकते हैं। ऐसे बीज अधिकतर कतारों में ही यन्त्रों द्वारा बोये जाते हैं; परन्तु कभी-कभी ऐसा होता है कि छींट कर बोना पड़ता है, जैसे पंक वाली (दियारा) भूमि में गेहूं। धान भी जहां रोपने के लिए मजदूर नहीं मिलते छींट कर ही बोना पड़ता है। छींट कर बोने में भारी असुविधा यह होती है कि निंदाई ठीक से नहीं हो पाती और निंदाई तथा पौधों की छंटनी में खर्चा विशेष पड़ जाता है।

बोने के यंत्र :

(१) हलका हल

(२) नाई एक या दो चांस वाली

(३) तीन चांस वाले यंत्र

अरगड़ा खरीफ के लिए

तिफन रबी के लिए—हलका तिफन खरीफ के लिए
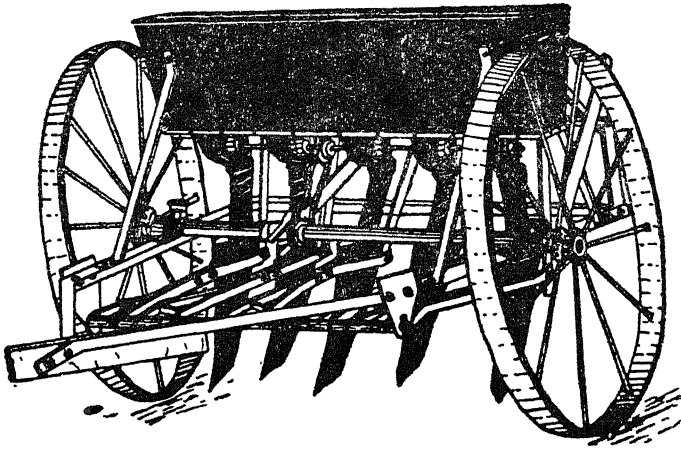
सीड ड्रिल

चित्र नं० १२

(४) सीडड्रिल—बैलों से चलने वाली पांच चांस वाली ड्रिल।

इस यंत्र से बोने की दूरी तथा गहराई आवश्यकतानुसार न्यूनाधिक की जा सकती है।

(१) हल—बहुत से स्थानों में हल चला कर उससे बनी हुई नालियों में एक व्यक्ति बीज गिराता जाता है। जब कतारों में दूरी कम रहती है तो दूसरी नाले बनाते समय जो हल से मिट्टी उलटती है उससे बीज ढंक जाते हैं। यदि कतारों की दूरी विशेष रही तो बीज को ढकने के लिए हेंगे से अथवा किसी दरख्त की टहनी को रस्सी से जुए में बांध कर जमीन के ऊपर फिरा देते हैं जिससे बीज ढक जाते हैं।
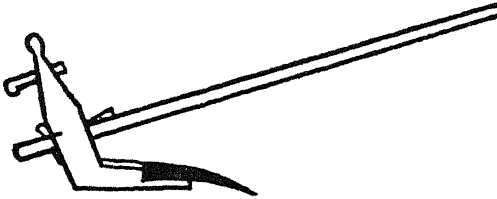
चित्र नं० १३

(२) नाई एक हलका-सा देशी हल होता है जिसके बगल में बांस की नली और नली के ऊपर टीप लगा देते हैं जिसमें बीज गिराते हैं। बीज भूमि में गिरते जाते हैं और ढक भी जाते हैं। कभी खरीफ की फसल बोने के लिए ऐसे दो यंत्र साथ जोड़कर लगा देते हैं ताकि काम जल्दी हो जाय।
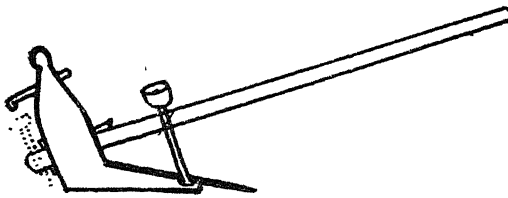
चित्र नं० १४

(३) कहीं-कहीं खरीफ की फसल के लिए एक यंत्र (अरगड़ा) ऐसा होता है जिसमें तीन फार होते हैं और प्रत्येक फार में रस्सी बंधी रहती है।

इस रस्सी के दूसरे छोर पर बांस का नल रहता है जिसका ऊपरी मुंह कुप्पाकार का होता है। बोने वाला व्यक्ति कुप्पे में बीज गिराता है और उसका हाथ उस कुप्पे पर रहता है इसलिए वह नल गिरने नहीं पाता। नीचे मुंह पर रस्सी रहती है। इससे वह
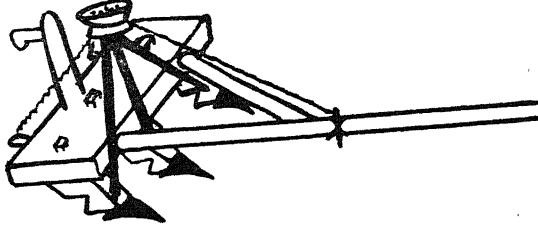
चित्र नं० १५

मुंह उस यंत्र द्वारा बनाये हुए बांस में हल के साथ खींचता रहता है। इस नली के द्वारा बीज बो दिये जाते हैं, चूंकि इसमें तीन फार होते हैं और बोने के नल अलग होते हैं, अलग-अलग कतारों में अलग-अलग फसलें बो सकते हैं।

तीफन—इसमें तीन फार होते हैं। खरीफ के लिए हलका और रबी की फसलों के लिए भारी तिफन होता है। तीनों फाल में लोहे की नालियां लगाते हैं जिनका ऊपरी छोर एक कुप्पाकार पीप में लगा रहता है। इसमें बीज डालने से तीन कतारें एक साथ बोई जाती हैं। अरगड़े में जहां बोने के लिए तीन मजदूर लगते हैं तीफ़न में एक ही लगता है।

चित्र नं० १६

ड्रिल—ये बहुधा ट्रेक्टर से चलने वाली होती है परन्तु ऐसी हलकी भी ड्रिल होती है जो एक या दो जोड़ी बैलों से चल सकती है। इसमें एक पेटी होती है जिसमें बीज भर दिये जाते हैं। पेटी के नीचे नल होते हैं जिनके द्वारा बीज भूमि में गिरते हैं। बीज वाली पेटी में ऐसा प्रबन्ध रहता है कि उस ड्रिल की चाल के अनुसार कुप्पियों में बीज गिरते रहते हैं। नैनी (इलाहाबाद) कृषि-विद्यालय ने ऐसी ड्रिल (देखो चित्र नं० १२, पृष्ठ ७५) बनाई है

जिसमें पांच कतारें एकसाथ बोने की व्यवस्था है। एक मजबूत बैल जोड़ी से इस 'ड्रिल' द्वारा लगभग चार एकड़ प्रतिदिन बो सकते हैं।

बोने के यंत्रों के काम का अनुमान —

नाम यन्त्र	बैल जोड़ी	मजदूर		कार्य
		पु.	स्त्री	(आठ घंटा काम पर)
हल	१	१	१	एक एकड़
नाई एक चांस वाली	१	१	१	एक से डेढ़ एकड़
,, दो ,, ,,	१	१	२	ढाई एकड़
अरगड़ा	१	१	३	चार-पांच ,,
तिफन खरीफ	१	१	१	ो-ढाई ,,
,, रबी	१	१	१	डेढ़-दो ,,
सिड ड्रिल बैल वाली	१	१		तीन-चार ,,
,, ,, ट्रेक्टर वाली	—	—	—	दस-बारह ,,
बीज ढकने के लिए (टहनियां द्वारा)	१	१	—	पांच-छः ,,

१६—निंदाई, निराई या सोहनी

यह क्रिया खेतों में से घास-पात निकालने के लिए की जाती है। घास-पात कृषक के लिए उन पौधों का नाम होगा जिनकी जहां आवश्यकता न हो वहां निकल आवें। इसका अर्थ यह हुआ कि वही पौधा कहीं उपयोगी वस्तु है तो कहीं घास-पात। जैसे गेहूं के खेत में बथुआ निकल आये तो उसे घासपात मानकर उखाड़ फेंकते हैं और यदि वह सब्जी के लिए लगाया जाय तो उसकी रक्षा करना होती है। उसी भांति जहां तक निंदाई का प्रश्न है उसी फसल के यदि पौधे घने हों तो उनमें से कुछ को निकालना पड़ता है। कुछ पौधे ऐसे भी होते हैं जो खेतों की मेढ़ों पर से धीरे-धीरे खेतों में बढ़ते जाते हैं।

खेत में होने वाले घासपात से होने वाली हानियां

(१) ये मुख्य फसल के पौधों के साथ खुराक में हिस्सा बटाते हैं;

(२) जमीन से बहुत-सा पानी अपने पत्तों द्वारा उड़ा देते हैं;

(३) इनसे मुख्य फसल को काफी प्रकाश और हवा नहीं मिलती।

(४) मुख्य फसल को हानि पहुंचाने वाले कीट और व्याधिकर्ता जन्तुओं को संरक्षण देते हैं।

(५) इनके बीज अनाज के साथ मिल जाने से उनका मूल्य घट जाता है।

(६) कुछ घासपात के बीज जहरीले या व्याधिकर्ता होते हैं। जैसे सरसों के बीज में धतूरे (*Agremone mexicon*) के बीज का मिल जाना, जिसके तेल से ऐसी व्याधि होती है कि मनुष्य मर भी जाते हैं। खिसारी में अटके (*Vicia sativa*) के मिल जाने से मनुष्य लंगड़े हो जाते हैं।

(७) कुछ घासपात ऐसे कांटे वाले होते हैं कि पशुओं के बालों में चिपक कर उन्हें कष्ट पहुंचाते हैं जैसे आधासीसी। यह ऐसा पौधा है कि बड़े जोरों से बढ़ रहा है और चरागाह में काफी फैल रहा है।

(८) पानी की नालियों में जमकर पानी के बहाव में बाधा डालते हैं।

(९) ये यदि समय पर नष्ट न किये जायं तो मुख्य फसल की उपज को काफी गिरा देते हैं।

घासपात दो प्रकार के होते हैं। एक वे जो प्रति वर्ष बीज से उत्पन्न होकर बीज छोड़ कर उसी साल मर जाते हैं। दूसरे वे जिनकी जड़ें (रूपान्तरित धड़) भूमि में बने रहते हैं और अनुकूल तापमान और जल मिल जाने से ऊपर पौधों के रूप में फिर निकल आते हैं। इन्हें ऊपर से काटते रहो; परन्तु नीचे से निकलते ही रहते हैं।

पहले प्रकार के घासपात उचित समय पर जुताई और निंदाई से नष्ट किये जा सकते हैं। इनमें बीज न पड़ने के पहले नष्ट कर दिये जायं

तो इनका आगे पनपना बन्द हो जाता है। यदि द्विदल बनस्पति के चौड़े पत्ते वाले हुए तो इनका उन्हें रासायनिक औषधियां छिड़क कर नष्ट कर सकते हैं।

दूसरे प्रकार के घासपात जब खेतों में जम जाते हैं तो खेतों को बुरी तरह से खराब कर देते हैं और बड़ी कठिनाई से छुटकारा होता है। कांस, नागरमोथा इत्यादि घासपात इसी वर्ग के हैं। इन्हें नष्ट करने के लिए बड़ी गहरी जुताई करनी पड़ती है जिसके लिए भारी यंत्रों की आवश्यकता होती है। घासपात से पार पाने के साधारण उपचार निम्न प्रकार किये जाने चाहिएं—

(१) शुद्ध बीज बोना;

(२) जुताई समय पर और आवश्यकतानुसार गहरी होनी चाहिए;

(३) खड़ी फसल में से निंदाई करके इन्हें निकालना;

(४) फसल चक्र द्वारा। जब खरीफ की फसल में घासपात बहुत हो जाय तो उन खेतों को रबी के लिए छोड़ देना चाहिए ताकि बार-बार की जुताई से खरीफ के घासपात नष्ट हो जांय;

(५) जलाकर—फसल उठाने के बाद खेतों में आग लगा देने से भी घासपात और उनके बीज जल जाते हैं।

(६) सिंचाई द्वारा—खेतों में पानी भरा रहने से बहुत-से पौधे निकलने नहीं पाते जैसा जबलपुर की तरफ 'हवेली पृथा' की खेती में होता है।

(७) कीट द्वारा—जैसे नागफणी या थूहर का एक विशेष प्रकार के कीड़े द्वारा प्रायः समस्त भारत में नाश हो गया;

(८) फसल उठाने के बाद खेतों में भेड़-बकरियां चराना;

(९) औषधियों द्वारा—औषधियों से द्विदल वनस्पति के पौधे सरलता से मारे जा सकते हैं।

औषधियां कई प्रकार की होती हैं। उनका घोल बनाकर यन्त्र द्वारा छींटना पड़ता है। असाना महोदय लिखते हैं कि उनके एक प्रयोग में आधा सेर मीथाक्जोन (Methoxone) प्रति एकड़ छिड़कने से गेहूं की

उपज लगभग चार मन से अधिक आई[1]।

स्मरण रहे औषधि की मात्रा घासपात की जाति, उनकी संख्या तथा उनकी उम्र के अनुसार होनी चाहिए।

घासपात-नाशक औषधियां :

गंधक का तेजाब, नमक, कार्बन-बाई-सलफाइड, सोहागा, सोडियम क्लोरेट, एमोनियम सल्फोनेट २-४ डी. (Dichlore phenoxy acetic acid) इत्यादि विष घासपात नष्ट करने के काम में लाये जाते हैं। इनका उपयोग कृषि-विभाग वालों की सम्मति से करना चाहिए, क्योंकि इनमें कुछ ऐसे हैं जिनसे आग भी लग जाती है; जैसे सोडियम क्लोरेट, कभी-कभी विस्फोट भी हो जाता है।

विशेष हानिकर मुख्य-मुख्य घासपात

(१) **कांस** (*Saccharum spontanium*)—इसका पौधा घास के पौधे जैसा तीन-चार फुट ऊंचा सफेद फूल वाला बरसात में होता है। भारी हलों की गहरी जुताई से ही इससे छुटकारा हो सकता है।

(२) **नागरमोथा**—(*Cyprus rotandus*) इसकी जड़ों में गांठे होती हैं, उन्हीं में से यह निकलता रहता है। इसकी ऊंचाई एक फुट के लगभग हो जाती है। गर्मी के दिनों में मिट्टी उलटने वाले हल की जुताई से जड़ों की गांठें ऊपर निकल कर सूख जाती हैं।

(३) **आधा सीसी**—(*Xanthium strumarium*) इसका पौधा चौड़े पत्ते वाला चार-पांच फुट ऊंचा हो जाता है। फूल नर-मादा अलग-अलग होते हैं। डाली की फुनगी पर नर फूल और मादा फूल उनके नीचे होते हैं। फल कांटेदार होने से कपड़ों में और पशुओं के बालों में चिपक कर वितरित किये जाते हैं। बरसात में बीज से पौधे होते हैं। आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्तूबर) में फल पक जाते हैं। कुछ ही वर्षों से इनका फैलाव बहुत हो गया है। गोचर भूमि नष्ट करते-करते खेतों की मेढ़ों पर होकर ये खेतों में बढ़ती जा रही हैं। इसे औषधि से नष्ट कर सकते हैं; परन्तु यह

1. R. D. Asana 1951 Indian Farming Vol. 1. 4.

काम सरकार ही कर सकती है। कृषकों को चाहिए फूल आने के पहले इन्हें काट दें। ग्रामीण जनता यह निश्चय करले कि घर से बाहर निकले उस समय हाथ में एक ऐसी छड़ी लेकर निकले, जिसमें एक छोर पर फावड़े (स्पेड) जैसा यन्त्र लगा हो और चलते-चलते ही कुछ पेड़ अवश्य काट दिया करें। इसी तरह ग्रामीण स्कूल के बालकों को सप्ताह में एक-दो दिन कुछ समय के लिए इस काम में लगायें।

(४) **गोखरू** (*Tribulus terestris*)—इसका पौधा जमीन पर, खेतों में और मेढ़ों पर फैला रहता है। फल कांटेदार सिंघाड़े के आकार के बहुत छोटे-छोटे होते हैं जो बुरी तरह से पैरों में चुभते हैं। इसे भी फूल आने से पहले काटते रहना चाहिए।

(५) **पीले फल वाला धतूरा** (*Agremone mexicana*)—इसका पेड़ डेढ़-दो फुट ऊंचा पीले फूल वाला कांटेदार पत्ते वाला होता है। इसके बीज जहरीले होते हैं और सरसों के बीज के साथ मिल जाते हैं। इसे भी जहां खेतों में दिखे काटते रहना चाहिए।

(६) **पोहली** (*Carthamus oxycentha*)—इसका पेड़ कांटेदार कुसूम के पेड़ जैसा होता है और रबी की मौसम में खेतों में बुरी तरह से फैलता है। इसे भी फूल आने के पहले काटते रहना चाहिए।

इसके सिवाय **दूब** (*Cynodon dactylon*)—**बथुआ** (*Cheno-podium album*) लेहवी, **हिरन खुरी** (*Convolvlus arvensis*), **सेंजी** (*Melilotus indica*); **अकटा** (*Vicia sativa*) आदि ऐसे हैं कि जिन्हें निंदाई से नष्ट करना चाहिए।

निंदाई के यन्त्र और उनके काम का अनुमान

यन्त्र	बैलजोड़ी	पु.	कार्य
३ डोरा. डूंडिया	१	३	३ एकड़
हाथ वाला हो	–	२	पाव से आधा एकड़

खुर्पी	८ या १२ स्त्रियां १ एकड़। घासपात बहुत हो तो और अधिक की जरूरत होगी।
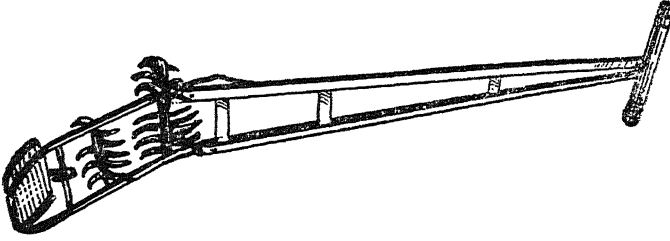
(धान के खेतों में से घासपात निकालने वाला जापानी 'हो')
चित्र नं० १७

१७—सिंचाई

बीज का अंकुरना और पौधों की बाढ़ बिना जल के असंभव है; इसलिए सफल कृषक वही होगा, जो खेती को अपनाने के पहले जल की व्यवस्था कर सके। जो कृपक वर्षा के जल पर निर्भर रहते हैं उनकी खेती डांवाडोल-सी रहती है। सिंचाई कुओं से भी हो सकती है, परन्तु वर्षा कम होती है तो कुएं में भी पानी बहुत कम हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों से पार पाने का सरल मार्ग यही है कि नदियों का जल जो वृथा चला जाता है उसे बांध कर काम में लाया जाय। वर्तमान समय में भारत के विभिन्न स्थानों में दामोदर घाटी बांध, हीराकुंड बांध, भाकरा-नांगल बांध, चम्बल बांध इत्यादि बड़े छोटे बांध बांधने की योजनाएं चल रही हैं। निकट भविष्य में ये कृषकों के लिए कामधेनु का कार्य करेंगी; परन्तु इतने बड़े विशाल देश में प्राकृतिक झरनों, तालाब वगैरा से भी काम लेना चाहिए।

सिंचाई दो प्रकार की होती है, प्राकृतिक और कृत्रिम, प्राकृतिक में वर्षा, बरफ, ओस इत्यादि की गणना है। कृत्रिम में जल, नदी, नाले, झरने,

तालाब और कुओं से जल प्राप्त किया जाता है। शहर की मोरियों से भी सिंचाई के लिए पानी मिल जाता है।

प्राकृतिक सिंचाई कृषकों के बस में नहीं, परन्तु कुछ प्रयत्न द्वारा उससे लाभ उठाया जा सकता है, जैसे वर्षा का जल भूमि में ठीक से रंज जाय, इसलिए खेतों को समय पर जोत कर रखना अथवा खेतों की मेढों को ऐसे बांध कर रखना कि वर्षा का जल बाहर न जाने पावे जैसे धान की क्यारियों के लिए, अथवा 'हवेली पृथा' से गेहूँ के लिए पानी रोक कर रखना। जहां बरफ पड़ती है वहां गेहूं को उससे काफी लाभ पहुंचता है। उसी भाँति ओस से भी फसलों को लाभ पहुंचता ही है।

वर्षा के जल का आय-व्यय :—

आय तो प्रकृति द्वारा भिन्न-भिन्न स्थान में पृथक-पृथक मात्रा में होती है। व्यय चार प्रकार से होता है।

(१) जल-वाष्पन (Evaporation)—भाप बन कर उड़ना (२) अपधाव (Run off)—भूमि पर से बह जाना। (३) रिसान (Percolation)—भूमि में गहरा चले जाना (४) उत्स्वेदन (Transpiration)—पत्ते द्वारा उड़ना।

दूसरे प्रकार का जल जो नदियों में जाता है उसे बांध द्वारा रोक कर काम में ला सकते हैं। तीसरी प्रकार का जल केशाकर्षण द्वारा आता है और नीचे से ऊपर आकर काम में आता है। ऐसा जल कुंए में जाकर सिंचाई का काम भी देता है। चौथे प्रकार का पौधों को लाभ पहुंचा कर ही बाहर जाता है।

सिंचाई के जल के गुण-दोष —

जल के गुण-दोष उनमें घुले हुए पदार्थों पर निर्भर हैं। इस विचार से वर्षा का जल स्वच्छ होता है। ऊपर से गिरते समय वायुमंडल के धूल के कण या कुछ वायुमंडल की गैसें उसमें थोड़ी बहुत मिल जाती हैं। अन्य जलों में घुले हुए लवण या आलम्बित (Suspended) पदार्थ रहते हैं। नदियों के जल में विशेषतः बरसात में आलम्बित पदार्थ विशेष रहते हैं। ऐसा जल एक

ओर भूमि को उपजाऊ करने में लाभप्रद है तो दूसरी ओर घासपात के बीज अपने साथ लाकर खेतों में छोड़ देता है इसलिए कुछ अंश तक हानिकारक भी होता है। झरने तथा कुओं के जल में लवणों के घोल की मात्रा विशेष होती है और कभी-कभी इतनी अधिक हो जाती है कि भूमि और पौधों के लिए हानिप्रद हो जाती है।

जल के गुण-दोष के लिए निम्नलिखित बातें देखी जाती हैं:

(१) जल में लवणों की कुल मात्रा
(२) लवणों में क्लोराईड की मात्रा
(३) जल में टांकण (Boran) की मात्रा
(४) सोडियम और दूसरी भस्मों (Bases) की निष्पत्ति क्या है ?

प्रति एक लाख भाग में

	कुल लवण	क्लोराईड	टांकण	सोडियम × १०० / केलशियम + मेग्नेशियम + सोडियम
साधारणत: उत्तम जल	७.५ से कम	७.५ से कम	०.०५ भाग से कम	६० से कम
कुछ फसलों के लिए हानि नहीं करता[२]	७.५ से ३०	७.५-२४.५	०.०५-०.२	६०से७०
हानिकारक जल	३० से अधिक	२४.५ से अधिक	०.२ से अधिक	७० से अधिक

उपर्यक्त सारिणी के पांचवें खाने को देखने से ज्ञात होगा कि यदि हम चने की मात्रा बढ़ा सकें तो हानिकर्ता जल का सुधार कुछ अंश तक हो

1. Miller and Turk 1926 Fundamentals of Soil Science p. 868.

२. कुछ फसलें ऐसी होती हैं जैसे तम्बाकू, बरसीम इत्यादि जिन्हें लवण कुछ अंश तक हानि नहीं पहुंचा सकते।

सकता है। इसके लिए केलशियम सलफेट कुंए में डाला जाता है।

उपर्युक्त विवरण को ध्यान में रक्खा जाय तो सिंचाई के लिए सबसे उत्तम जल मीठे कुएं का होता है। ऐसे जल से घासपात के बीज भी नहीं आते। तीसरा कारण यह है कि ऐसा जल ऊपर उठाया जाता है तो वह धीरे-धीरे बहता है जिससे भूमि में तरी अच्छी आ जाती है। नहर के जल से भूमि क्षार वाली इसलिए हो जाती है कि कृषक मनमाना जल देते हैं। अधिक जल देने से भूगर्भ जल की तह (Water level) ऊपर आ जाती है और जमीन ऊसर हो जाती है। सावधानी से जल दिया जाय तब ही ऊसर होने से बच सकती है।

जलप्राप्ति की युक्तियां और उपयोग की रीतियां

यदि जल-भंडार खेतों की सतह से ऊपर वाले स्थानों में हुए तो वहां से बहाकर नहरों द्वारा खेतों में सरलता से पहुंचाया जा सकता है। इसमें इतना ध्यान अवश्य रखें कि बहाव इतना तेज न हो कि भूमि के कण बहने लगें।

जहां जल-भंडार खेतों की सतह से नीचे होते हैं वहां कृत्रिम युक्तियों द्वारा जल ऊपर उठाकर काम में लाना पड़ता है। इसके लिए मनुष्य, पशु, वायु, विद्युत, भाप या तेल की शक्ति काम में लाना पड़ता है।

विभिन्न शक्तियों से चलाये जाने वाले यंत्र--

मनुष्य-शक्ति	पशु-शक्ति	वायु	विद्युत	भाप या तेल
टोकरी डोन ढ़ेंकुली चेन पम्प सकशन या फोर्स पम्प किफायत रहट	चेन पम्प सक्षन पम्प रहट मोट या चड़स	एअरो मोटर	बिजली से चलनेवाले पम्प	भाप या तेल से चलने वाले पम्प

टोकरी—सात-आठ फुट गहरा पानी हो तो इस यन्त्र से उठा सकते हैं। दो मनुष्य आमने-सामने ऊंची जमीन पर खड़े होकर एक सूपाकार टोकरी द्वारा (जिसमें रस्सियां बंधी रहती हैं) पानी बाहर फेंकते हैं। वह नाली में बह कर खेतों में चला जाता है। प्रति मिनिट करीब २० टोकरी पानी फेंका जा सकता है और प्रत्येक टोकरी में लगभग २० सेर पानी आता है।

डोन—पांच-छः फुट की गहराई तक का पानी इससे उठा सकते हैं और एक घंटे में लगभग डेढ़ सौ मन पानी बाहर फेंक सकते हैं। यह नाव के जैसा एक वर्तन होता है जिसका एक तरफ का मुंह पानी के बहाव के लिए खुला रहता है। बन्द मुंह की तरफ एक रस्सी रहती है जो एक बांस या बल्ली के मुंह से बंधी रहती है। इस बल्ली के बीच में एक ओर छेद रहता है और कील पर इस छेद के स्थान पर बल्ली घूमती है। एक व्यक्ति डोन की रस्सी पकड़ कर उसे पानी में डुबो देता है और फिर छोड़ देता है। बल्ली के दूसरे छोर वाले वजन से डोन ऊपर उठकर खुले मुंह की तरफ से नाली में फेंक देती है। डोन का खुला मुंह दो खूटियों से ढीली रस्सी से बंधा रहता है ताकि वह उसी स्थान पर बना रहे।

ढेंकुली—इससे पन्द्रह फुट तक की गहराई का पानी उठाया जा सकता है और एक घंटे में पचास-साठ मन पानी उठा सकते हैं। इसमें नोकीली पेंदी का एक बर्तन रहता है जिससे ऊपर थाले पर रखते ही वह लुढ़क कर अपना पानी खाली कर देता है। इसे भी डोन जैसी बल्ली से चलाते हैं।

चेन पम्प—आठ-दस फुट की गहराई से लगभग १५० मन पानी प्रति घंटा इसके द्वारा उठाया जा सकता है। इसमें एक नल लगभग ३ इंच व्यास का लगा रहता है। वह इतना लम्बा होता है कि उसका एक मुंह पानी में डूबा रहता है। दूसरा मुंह एक लकड़ी के चौखटे में खुलता है। नल में एक जंजीर रहती है वह चेन पर घूमती है। जंजीर में जगह-जगह कुछ लकड़ी के टुकड़े लगाये जाते हैं,जिनपर चमड़े के टुकड़े लगे हुए होते हैं। ये पानी को ऊपर लाते हैं और पीछे गिरने से उसे रोकते हैं। यह जंजीर चक्के पर घूमती

हुई पानी में होकर आती है तो अपने साथ पानी लाकर चौखटे में फेंकती है जहां से बह कर वह खेतों में चला जाता है।

सकशन या फोर्स पम्प—पच्चीस-तीस फुट की गहराई से पानी उठाने के लिए ऐसे पम्प अच्छे काम के हैं। इनमें मनुष्य पम्प के दस्ते को चलाया करता है जिससे पानी ऊपर उठ आता है। ऐसे पम्प कई प्रकार के होते हैं और नये बनते रहते हैं; इसलिए इनकी कार्य-क्षमता पम्प-विक्रेताओं से जानी जा सकती है।

किफायत रहट—यह यन्त्र किर्लोसकर बन्धु से प्राप्त किया जा सकता है। चालीस फुट की गहराई से एक घंटे में एक सौ मन पानी बाहर फेंका जा सकता है। छोटे बगीचों के लिए अच्छा उपयोगी यन्त्र है। इसमें सवा सेर जल समाय, ऐसी कई बाल्टियां लगी रहती हैं।
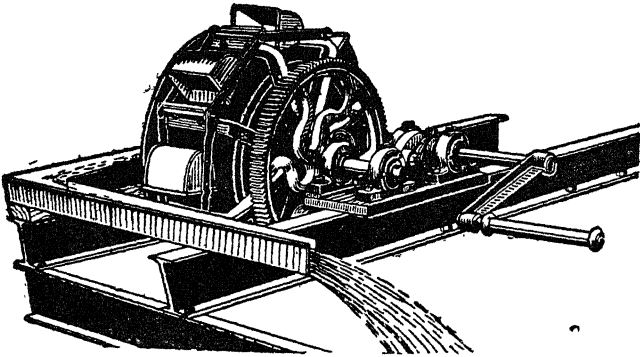
चित्र नं० १८

पशु-शक्ति से चलाये जाने वाले यन्त्र—

चेन पम्प, सकशन या फोर्स पम्प और रहट मनुष्य-शक्ति से चलाये जाने वाले यन्त्र जैसे ही होते हैं परन्तु बड़े होते हैं। इसलिए पशु-शक्ति काम में लाई जाती है। रहट से तीस फुट तक का पानी उठाया जा सकता है।

मोट या चड़स—इससे २० फुट से लेकर ८० फुट तक की गहराई का पानी उठा सकते हैं। ये चमड़े के बने होते हैं; लेकिन कहीं-कहीं लोहे के
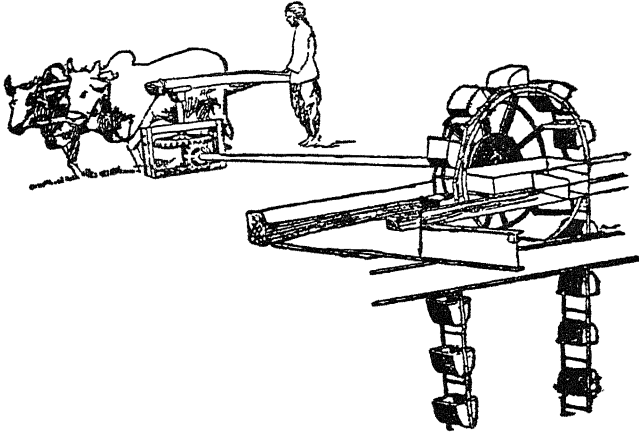
चित्र नं० १९

चद्दर के भी काम में लाये जाते हैं। चमड़े के मोट दो प्रकार के होते हैं। एक सूंड वाले दूसरे बिना सूंड के। सूंड वाले में पानी आप ही आप निकल कर थाले पर गिर जाता है। बिना सूंड वाले को खाली करना पड़ता है। जिसमें एक मनुष्य अधिक लगता है।

साधारण मोट में लगभग चार मन पानी आ जाता है, जिसमें से कुछ तो मोट के ऊपर आने तक हिलने-डुलने से वापस कुएं में गिर जाता है। कहीं-कहीं मोट के लिए दो जोड़ी बैल काम में लाये जाते हैं। ऐसे मोट बड़े होते हैं। साधारण मोट से पचीस-तीस फुट तक का पानी उठाना हो तो एक दिन में आधे से पौन एकड़ तक की सिंचाई हो सकती है। मोट के आकार, बैलों की चाल तथा जल की गहराई से पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं कि उन्हें कितना पानी मिल सकेगा।

मोट की देखभाल—जब मोट से काम लेना कुछ दिनों के लिए बन्द हो जाय जैसा कि बरसात में तो उसपर तेल लगाकर रखना चाहिए। उसी भांति जब फिर काम में लाना हो तो तेल लगाना चाहिए। नये मोट में करीब चार सेर और काम में लाये हुए में दो सेर के लगभग तेल लगेगा।

वायु द्वारा चलने वाले यन्त्र को 'एअरो मोटर' कहते हैं। इसमें एक पंखा जमीन से पन्द्रह बीस फुट ऊंचा लोहे के ढांचे में लगा रहता है। जब हवा बराबर चलती है तो यह पंखा हवा के जोर से चलता रहता है। इसका एक छड़ पम्प से लगा रहता है जिसके द्वारा पानी ऊपर उठता रहता है।

कुओं में पम्प और बिजली की मोटर लगाने से जल ऊपर उठाया जा सकता है। नलकूपों से जल उठाने के लिए बिजली की शक्ति बहुत काम में लाई जाती है।

भाप या तेल की शक्ति से पम्प के लिए 'बायलर' या 'तेल के एंजिन' लगाने पड़ते हैं।

निम्नलिखित ब्योरे की सूचना देने से पम्प-विक्रेता उचित पम्प की सलाह दे सकते हैं।

(१) कुएं की लम्बाई-चौड़ाई या उसका ब्योरा और गहराई का ब्योरा,

(२) गर्मी में पानी की सतह कितनी गहरी चली जाती है,

(३) बरसात में पानी कितनी ऊंचाई तक आ जाता है,

(४) कुएं से पानी कितना ऊपर फेंकना होगा,

(५) पम्प में मोढ़ कितने होंगे,

(६) यदि एंजिन हो और पम्प मंगाना हो तो एंजिन के शक्ति-संचालक पहिये का व्यास और प्रति मिनिट वह कितने चक्कर लगाता है इसका ब्योरा देना चाहिए। यदि पम्प ऐसे पहिए से चलने वाला न मिले तो शक्ति-संचालक पहिये का व्यास घटाना-बढ़ाना होगा।

(७) प्रति मिनिट पानी कितना चाहिए,

(८) कुंए में सिंचाई की मौसम में पानी कितना रहता है ?

पम्प का चुनाव साधारणतः दो बातों पर निर्भर है। जल-भंडार और सिंचाई की भूमि। कभी-कभी कुओं में जल काफी मात्रा में नहीं होता और बड़ा पम्प लगाना निरर्थक हो जाता है। उसके विपरीत पानी पूरा हो और भूमि कम हो तो भी बड़ा पम्प लगाना वृथा होगा।

यहां पर गणना के लिए हम मान लेते हैं कि जल हमारे पास काफी मात्रा में है और भूमि ५० एकड़ है। यदि प्रति दसवें दिन पानी देने की आवश्यकता पड़े और ५ एकड़ पर नित्य पानी दिया जाय तो गणना निम्नलिखित होगी—

एक एकड़ पर एक इंच पानी १०० टन होता है तो ५ एकड़ पर ५०० टन हुआ। पम्प से पानी निकलता है उसकी गणना गैलन में होती है और एक गैलन=५ सेर का होता है। एक दिन में ५०० टन अर्थात् ११२००० गैलन पानी हुआ। मान लिया जाय कि हमारा पम्प अवकाश[१] का समय काट देने के बाद १० घंटा काम करता है तो प्रति घंटा ११२०० गैलन पानी दे, ऐसा पम्प चाहिए।

कुछ आवश्यक बातें—

(१) पम्प लगाते समय वह इतना गहरा होना चाहिए कि पानी घटने पर उसका मुंह पानी के बाहर न निकल आवे। लगभग १५ फुट पानी में रहना चाहिए।

(२) कितना पानी फेंकने के लिए नल का व्यास[२] कितना होना चाहिए ?

तेल के एंजिन को दो-तीन घंटे चलने के बाद पन्द्रह मिनिट का अवकाश अवश्य दना चाहिए।

२. Brown H. B. ond Hutchinson S. S. Vegetable Science 1949, P.130

पानी प्रति मिनिट गैलन	नल का व्यास
३-४	०.७५ ,,
४-७	१.०० ,,
८-१४	१.२५ ,,
१४-२२	१.५० ,,
२३-३८	२.०० ,,
३९-६५	२.५० ,,
६६-११०	३.०० ,,
११०-१७७	३.५० ,,
१७७-२३०	४.०० ,,
२३० से ४२०	५.०० ,,
४२० से ७२०	६.०० ,,
७२० से १०००	७.०० ,,

(३) पम्प और एंजिन के बीच की दूरी १० फुट अवश्य होनी चाहिए

(४) कैसे पम्प के लिए कितनी शक्ति (हार्स पावर) वाला एंजिन चाहिए उसकी गणना का सूत्र यह है—

$$\frac{\text{गैलन जल प्रति मिनिट} \times \text{१० पौ.}^{1} \times \text{ऊंचाई फुटों में}}{\text{३३००}} \times \frac{\text{१००}}{\text{कार्य क्षमता}}$$

ऊंचाई—पानी की सतह से ऊपर के मुंह तक । इसम दो बातों का विचार रखना चाहिए: एक तो यह कि जो पानी ऊपर चढ़ता है तो उसपर पानी का दबाव पड़ता है और दूसरा पम्प के साथ, जो पानी ऊपर चढ़ता है तो उसके साथ रगड़ खाने में कुछ शक्ति घटती है।

कार्य-क्षमता—एंजिन द्वारा जितनी शक्ति उत्पन्न हो सकती है वह सब उपयोगी नहीं होती । सिर्फ ४०-५० शतांश तक काम में आती है । शेष एंजिन के चलने की रुकावटों को पार करने में नष्ट हो जाती है।

उदाहरण—मान लो हमें दो इंच के व्यास के पम्प द्वारा प्रति मिनिट ६० गैलन पानी ऊपर फेंकना है और ऊंचाई ५० फुट है ।

१. १ गै.=१० पौं.

$$\text{अश्वशक्ति एंजिन} = \frac{६० \times १० \times ५०}{३३००} \times \frac{१००}{४०} = २.५$$

अर्थात हमें २.५ हार्स पावर का एंजिन चाहिए।

आजकल खेती के काम में डीजल तेल का प्रयोग होता है। ऐसे तेल से चलने वाले एंजिन ३ अश्वशक्ति से कम के नहीं मिलते। साधारणतः पांच-छः अश्वशक्ति के मिल जाते हैं। ऐसे एंजिन खरीदे जायं तो उनसे दूसरा भी काम लेना चाहिए।

खेती के लिए पम्पों में 'सेन्ट्रीफ्युगल' पम्प अच्छे होते हैं। ऐसे पम्पों में पंखे द्वारा रिक्त स्थान कर दिया जाता है, जिससे पानी कुएं में से ऊपर चढ़ता है। इन पंखों की चाल २००० से ३००० चक्कर प्रति मिनिट होनी चाहिए। इनके द्वारा २० फुट तक की गहराई का पानी बाहरी हवा के दबाव के कारण ऊपर उठता है इससे अधिक गहराई का पानी नहीं उठता। यही कारण है कि जहां कहीं 'सेन्ट्री फ्युगल' पम्प लगाये जाते हैं, कुओं के अन्दर पानी की सतह से कुछ ऊपर लगाते हैं ताकि पम्प से पानी की सतह २० फुट से कम न हो। सर्दी और गर्मी के दिनों में पानी की सतह में २० फुट से अधिक अन्तर नहीं होना चाहिए। ऐसी स्थिति में सर्दी के दिनों में जो पम्प पानी की सतह पर काम करता है उसी स्थान से गर्मी में भी पानी उठा सकेगा। जहां पम्प के स्थान से ऊपर उठाने का प्रश्न है वहां वह एक सौ फुट तक चढ़ाया जा सकता है, इसलिए जो कुएं बहुत गहरे होते हैं, उनमें बिजली की मोटर लगाते हैं, क्योंकि तेल के एंजिन कुएं के अन्दर नहीं लगा सकते। उन्हें हमेशा जमीन की सतह पर ही लगाना चाहिए।

जहां पानी बहुत गहराई से उठाना होता है उसके लिए 'टर्बाइन' पम्प काम में आते हैं। ये बड़े लम्बे लोहे के छड़ (Shaft) से चलाये जाते हैं और ये छड़ जमीन पर लगे हुए एंजिन या बिजली की मोटर से चलते हैं।

पम्प के अंग—जो मुंह जल के अन्दर रहता है उसपर एक जाली रहती है ताकि कोई मोटी वस्तु पानी के साथ खिंच कर पानी में न घुस जाय और

पम्प बन्द कर दे। इसके बाद एक पाद कपाट (Foot valve) होता है, जो पानी को अन्दर तो आने देता है; लेकिन उसे फिर से कुएं में नहीं जाने देता। मिट्टी के तेल के पीपे में से तेल निकालने के लिए घरों में जो यन्त्र होता है उसमें भी पाद कपाट होते हैं। उन्हें देखने से यह ज्ञात हो जायगा कि यह पाद कपाट कैसा होता है।

नल—जिस नल द्वारा पानी ऊपर उठाया जाता है वह ऐसा होना चाहिए कि उसमें कहीं से हवा न जाय। नहीं तो पानी ऊपर नहीं उठेगा।

पंखे घुमाने वाला पहिया—यह पहिया एंजिन के शक्ति-संचालक पहिये से घुमाया जाता है! इसलिए इन दोनों के व्यास में एक अनुपात होता है ताकि पहिये विशिष्ट गति से चलें। पम्प का पहिया बहुधा स्थायी होता है। एंजिन का पहिया ही बदला जा सकता है जिसकी गणना निम्न लिखित सूत्र से की जा सकती है।

$$\frac{\text{पम्प के पंखों की गति} \times \text{पम्प के पहियों का व्यास इंच में}}{\text{एंजिन के पहिये के फेरे}} = \text{एंजिन के पहिये का व्यास}$$

एंजिन के पहिये से पम्प के पहिये में शक्ति का संचालन पट्टे द्वारा होता है। यदि पम्प और एंजिन ऐसी दशा में स्थापित हो कि पम्प के घूमने की दशा उलटी पड़े तो पट्टे में मोढ डाल देते हैं।

पम्प से नीचे पानी उठाने का जो नल रहता है उसका व्यास ऊपर जो पानी फेंकता है उस नल से अधिक रहता है।

नलों में जितने मोड़ कम होंगे, उतना ही पानी अधिक फेंका जायगा।

मोढ़, रहट और पम्प की तुलनात्मक उपयोगिता

	८ घंटे दिन में पानी प्राप्त	सिंचाई[1] दिन में	कितना क्षेत्रफल सींचा जा सकता है
मोट	६००० गैलन	०.२५	२-३ एकड़
रहट	१५००० ,,	०.५	५-६
पम्प २"	२४००० ,,	०.७५	८-१०

(३ अश्वबल-शक्ति वाले एञ्जिन से चलाया गया)

1. Bull. No. 42, 1953. Issued by M.P. Govt. The Village level worker's guide and Calendar.

	मूल्य	लगाने का खर्च	रोजाना खर्च	खर्चा प्रति एकड़
मोट	५० रु.	१० रु.	५।।) रु.	२२
रहट	९५० रु.	२००	१० ,,	१५
पम्प	४००० रु.	५००	८।।)	१५।।)

उपर्युक्त गणना तीस फुट गहरे पानी के आधार पर है। कृषक अपनी आर्थिक स्थिति अनुसार और कुएं में पानी की आय अनुसार यन्त्र चुन सकते हैं। ऐसा न हो कि उत्साह में आकर पम्प लगाये और कुएं में पानी उसके चलाने इतना न हो तो पूंजी बेकार लगी रहे।

सिंचाई की रीति—पानी की प्राप्ति के बाद उसके उपयोग की रीति जानना आवश्यक है, क्योंकि इस कार्य में असावधानी से भूमि बिगड़ जाती है। लाखों एकड़ भूमि इसी से नहरी सिंचाई वाले क्षेत्रों में ऊसर बन गई है। पानी आवश्यकतानुसार ही काम में लाना चाहिए। बहुत अधिक पानी देने से लवण घुल कर ऊपर आ जाते हैं। सिंचाई के पानी का खेतों में बहाव भी ऐसा होना चाहिए कि भूमिकण बहने न पावे।

सिंचाई साधारणतः निम्नलिखित रीति से की जाती है—

(१) ऊपर से जल का छिड़काव,

(२) क्यारियों में जल भरना,

(३) नालियों में जल भरना,

(४) मिट्टी में दबा कर झिरझिरे नलों द्वारा,

(१) **ऊपर से जल छिड़काव** की रीति हमारे यहां अभी सिर्फ हज़ारे द्वारा बगीचों में काम आती है। कुछ देशों में विशेषतः अमरीका में बड़े-बड़े नल खेतों में पांच-छः फुट की ऊंचाई पर लगाये जाते हैं। इन नलों में महीन छिद्र होते हैं जिनके द्वारा जल फव्वारे की भांति महीन धाराओं में उड़ता रहता है। ये नल इतनी दूरी पर लगाये जाते हैं कि उनसे उड़ने वाली धाराओं से दोनों ओर के नलों के बीच की भूमि का सींचन भली-भांति हो

जाता है। चूंकि जल वातावरण से होकर भूमि पर गिरता है इससे कुछ भाप के रूप में वन कर उड़ जाता है। परन्तु लाभ यह होता है कि पौधे धुल जाते हैं जिससे उनमें रसायनिक क्रियाएं अच्छी होती हैं और बाढ़ भी अच्छी होती है। तुलनात्मक दृष्टि से वातावरण में कुछ ठंडक आ जाती है जिससे भी पौधों को लाभ पहुंचता है। इस रीति में विशेष लाभ यह होता है कि यदि खेतों की मिट्टी ऊंची-नीची हुई तो उसमें सिंचाई अच्छी हो जाती है।

(२) **क्यारियों में जल भरना**—इस रीति में छोटी-छोटी नालियों द्वारा क्यारियों में जल भर दिया जाता है। क्यारियां जमीन के ढाल के अनुसार लम्बी-चौड़ी बनाई जा सकती है।

(३) **नालियों में जल भरना**—इस रीति से सिंचाई वहां उत्तम होगी जहां की भूमि में ढाल विशेष हों। नालियां ढाल से समकोण बनाती हुई बनाई जाती हैं और उनमें पानी भर दिया जाता है। साग-भाजी की खेती में बहुधा ऐसा करते हैं कि पानी की नाली के दोनों ओर तरकारियां लगा दी जाती हैं और नालियां पानी से भर दी जाती हैं। फलों के पेड़ों में भी जहां पेड़ कम ऊंचाई के होते हैं नालियां भर दी जाती हैं, जिससे दोनों ओर के पेड़ पानी लेते रहते हैं। फलों के बगीचों में बड़े पेड़ों के धड़ के आसपास गमले (क्यारियां) बना कर उनमें पानी भर देते हैं। ऐसा न करने की अपेक्षा कुछ दूरी पर गोल-गोल नालियां बनाना उत्तम होता है, क्योंकि ऐसा करने से पानी जड़ों के निकट पहुंचता है। जहां दीमक का भय अधिक हो वहां पौधों के पास पानी भरना उत्तम होगा ताकि दीमक दूर हट जाय, वरना पेड़ों के धड़ के पास वाली सूखी मिट्टी की तरफ आकर पेड़ों को हानि पहुंचायेगी।

(४) **भूमि के अन्दर झिरझिरे नल लगा कर सींचना**—इसमें प्रारम्भिक खर्चा तो विशेष होता है; परन्तु जहां जल की कमी हो वहां लाभप्रद होगी। नल भूमि में रहने से उनके आसपास की भूमि में तरी बनी रहती है

जल की मात्रा—पानी कब और कितना देना यह भूमि की जाति, वायुमंडल की तरी तथा फसल की जाति पर निर्भर है वैसे फसलें अपनी मांग आप दरसा देती हैं।

साधारणतः यह कहा जा सकता है कि जिस भूमि में खाद दिया जाता है उसमें पानी विशेष देना चाहिए।

जल-उपज अनुपात—(Transpiration Ratio)—फसलों की तैयारी में कुल जल कितना उनके पत्ते द्वारा उड़ जाता है इसकी परीक्षा भारत में लेदर महोदय ने की थी, यह अनुपात निम्नलिखित है। ज्यों ज्यों उपज बढ़ती जाती है यह अनुपात कम होता जाता है। एक भाग उपज के लिए कितने भाग जल चाहिए यह दिखलाया है।

निम्नलिखित अंकों में अन्न और भूसा मिले हुए हैं, यह दिखलाया गया है एक भाग उपज के लिए कितने भाग लगता है।

	उपज लगभग १२ मन	उपज लगभग ४८.५ मन	(२)
चना	१४००	११००	
अरहर	११००	७२०	
अलसी	१०००	१०००	९०५
जई	८७०	६३०	५९७
गेहूं	८५०	६२५	५१३
मटर	८३०	६००	
सरसों	७४०	६५०	
जौ	६८०	५३०	४३४
मक्का	४५०	३६०	३६८

१. Leather J. W. Mem. Dept Agri. Vol. I No. 8 p. 182.

२. काक्स और कोकसन १९४८ (Crop Management and Soil Conservation) p. १३४। चौथे कालम के अंक अमेरिका के हैं। यहां पर तुलना के लिए दिये गये हैं।

जुवार	४००	४००	३२२
कोदों	३००	३००	
रागी	२५०	२५०	
कपास			६४८
धान			७१०
अलफालफा			८३१

सिंचाई-सम्बन्धी कुछ परिभाषाएं

'डयूटी आफ वाटर' यह उस क्षेत्रफल की एकड़ में गणना है, जिसकी सिंचाई, दी हुई जल-राशि के विशेष नाप के बहाव से हो सकती है। यह बहाव एक सेकण्ड में एक घन फुट का होता है।

पानी का नाप—पानी के बहाव में डूबे हुए छिद्र मार्ग द्वारा जो पानी बहता है उसकी गणना "क्यूसेक" अर्थात् घन फुट प्रति सेकण्ड में गिनी जाती है और उसे निम्नलिखित सूत्र से निकालते हैं :—

क्यू=ए.×वी.—ए×५ √एच $Q=A\times V—A5\sqrt{H}$

क्यू=क्यूसेक (घन फुट जल) क्यूसेक।

ए =छिद्र मार्ग का क्षेत्रफल वर्ग फुट में

एच=छिद्र के बीचोंबीच से ऊपर के जल तक की सतह

वी=बहाव का औसत दर प्रति सेकण्ड

कभी-कभी छिद्र द्वारा पानी न बहाकर तख्ते के ऊपर से बहाया जाता है। उस स्थिति में गणना निम्नलिखित सूत्र से की जाती है—

क्यू=एच×एल×वी

क्यू=प्रति सेकण्ड घनफुट में बहाव।

एच=तख्ते के ऊपर के पानी की मोटाई फुट में

एल=तख्ते की लम्बाई फुट में

वी=औसत बहाव

पानी का औसत बहाव—यह सतह के बहाव का $\frac{4}{5}$ होता है और सतह का बहाव सतह पर तैरते हुए पदार्थ से जाना जा सकता है। एक निर्धारित

दूरी तक वह पदार्थ बहने दिया जाता है और फिर समय में सेकण्ड का भाग देने से प्रति सेकण्ड का हिसाब निकल आता है।

कच्ची नहर या नाली में पानी का बहाव एक फुट प्रति सेकण्ड से अधिक और तीन फुट से कम होना चाहिए। यदि एक फुट से कम होगा तो मिट्टी नीचे बैठने लगती है और यदि तीन फुट से अधिक होगा तो मिट्टी तह पर बहने लगेगी।

सकशन पम्प द्वारा उठाये जाने वाले पानी की गणना:—$\frac{२२}{७}$ × बेरेल का अर्ध व्यास^{२} फुट में × स्ट्रोक की लम्बाई फुट में × संख्या स्ट्रोक प्रति सेकण्ड=घन फुट जल प्रति सेकण्ड। इसे ६.२५ से गुणा करने से गैलन निकल आवेंगे।

बिजली से चलने वाले यंत्र में एक मोटर रखनी पड़ती है। मोटर आवश्यकतानुसार अश्वशक्ति की खरीदी जा सकती है।

बिजली से चलने वाले पम्प में यह लाभ है कि जब चाहे स्विच दबाया और चल पड़ा और चाहे जितने घंटे चला सकते हैं। खर्च भी इसमें कम पड़ता है। जहां १० अ. ब. की मोटर काम देती है वहां १५ अ. ब. का एंजिन रखना होता है।

१८ फसल के शत्रु और उनसे बचाने के उपाय

फसल के शत्रु निम्न लिखित हैं—

(१) आवश्यकता से अधिक पौधे

(२) घासपात

(३) घातक पौधे, अमरलता, बांझी, अगिया, ठोकरा आदि

(४) मनुष्य

(५) पालतू और जंगली पशु

(६) पक्षी

---

१. पांच खरब बल की मोटर ४ इंच घास का सकशन पम्प और ३ इंच का डिलिवरी पम्प १५ फुट से जल उठाने के लिए अच्छे होते हैं।

(७) कीट

(८) सूक्ष्म जन्तु द्वारा होने वाली व्याधियां

पहले और दूसरे का वर्णन पृष्ठ (७८-७९) में दिया गया है

घातक पौधे—अमरलता, बांझी, अगिया, ठोकरा इत्यादि पौधे पौधों या पेड़ों पर अपना निर्वाह कर, उन्हें निर्बल कर देते हैं और मार भी देते हैं। अमरलता, जिसकी बेल पीली होती है, बहुधा पेड़ों पर पाई जाती है। कभी-कभी फसलों पर भी आ जाती है। यह एक विशेष अंगों द्वारा पौधे के अंगों का रस चूसती है। बांझी नाम का लाल फूल का पौधा बहुधा आम के पेड़ों पर हो जाता है और उनसे रस चूस लेता है। अगिया जुवार के खेतों में जुवार की जड़ से रस चूसता है। यह छोटा-सा पौधा सफेद फूल का होता है। जब पानी की कमी होती है तो जुवार के पौधे वैसे ही कमजोर हो जाते हैं और जब अगिया लग जाता है तो जुवार के बाल (भुट्टे) ही नहीं निकल पाते। खेत-के-खेत बरबाद हो जाते हैं। ठोकरा अधिकतर तम्बाकू के खेत में पाया जाता है और तम्बाकू की जड़ से अपना पोषण कर तम्बाकू को काफी हानि पहुंचाता है।

इनमें से पहले दो से बचाने का यही उपाय है कि जिन टहनियों पर ये दिखाई दें, उन्हें काट कर जला दें। अगिया को नींद कर निकाल सकते हैं अथवा 'फ्लेम थ्रोअर'[1] से जला सकते हैं। झाल ऐसे फेंकनी चाहिए कि जिससे जुवार के पौधों को हानि नहीं पहुंचे। ठोकरे को निकलते ही नष्ट कर देना चाहिए। बिहार में इसे भैंसों को खिला देते हैं।

(४) **मनुष्य**—कुछ मनुष्य सभी स्थानों में ऐसे होते हैं, जिन की आदत ऐसी पड़ जाती है कि चलते-चलते खेतों में से बाल, सब्जी या फल तोड़ लेते हैं। ऐसे लोगों से बचाने के लिए कांटेदार घेरा या रखवाला ही काम दे सकता है।

---

१. फ्लेम थ्रोअर—स्टोव जैसे लैम्प डंडों पर लगे हुए होते हैं। ये जलाये जायं तो आग की झाल फेंकते हैं, जिससे अगिये के पौधे जलाये जा सकते हैं।

(५) **पालतू और जंगली पशु**—पालतू पशुओं में गाय, बैल, भैंसें, बकरी, घोड़े, गधे इत्यादि शाकाहारी पशु अवसर पाते ही खेतों में घुस पड़ते हैं। सो उनसे बचाने के लिए घेरा या रखवाला ही उपयोगी हो सकता है। जंगली पशु में बन्दर, सूअर, स्याही, नीलगाय, हिरन, हाथी, इत्यादि जानवर भी काफी हानि पहुंचाते हैं। विशेषतः रक्षित जंगलों के आसपास के खेतों में तो इनसे फसलों को बचाना बड़ा कठिन हो जाता है।

इनसे बचाने के लिए कुत्ते, बन्दूक की आवाज या कांटेदार तार के घेरे अच्छे होते हैं। बन्दरों से बचाने के लिए कुत्ते तथा बन्दूक की आवाज या गुलेल काम दे सकती है। जंगली पशु आग से भी डरते हैं, सो रात को खेतों के आसपास आग जलाना भी लाभप्रद होगा। कभी-कभी मनुष्य अथवा मांसाहारी पशुओं की नकली आकृतियां भी अच्छा काम देती हैं। लकड़ी गाढ़ कर उसपर चूने से सफेद की हुई हंडियां लगा देनी चाहिए। हंडियों पर आंख, मूंछ, नाक इत्यादि काले रंग से बना देने चाहिएं। हंडिया के नीचे समकोण बनाती हुई लकड़ी बांध कर उसमें फटे-पुराने कपड़े पहना दिये जायं तो काम चल जाता है।

चूहे—ये जब खेतों में लग जाते हैं तो पौधों को काट कर नीचे गिरा देते हैं। दाना खा जाते हैं। नारियल-जैसे पेड़ पर चढ़ कर हरे नारियल काट कर नीचे गिरा देते हैं। गन्ने के खेतों में भी काफी हानि पहुंचाते हैं। इनकी वंश-वृद्धि भी बहुत होती है। एक जोड़े की औलाद एक साल में ८०० तक हो जाती है। इन्हें विष से ही मार सकते हैं, जिसके लिए चने की चूरी, कुछ सब्जी तथा ज़िंक फासफाईड का मिश्रण काम में लाते हैं। चूहे खेतों में ही नहीं, गोदामों में भी बहुत हानि पहुंचाते हैं। गोदाम ऐसे होने चाहिएं, जिनमें चूहे न पहुंच पायं।

एक भाग औषधि को बीस भाग चूनी (चने का चूरा या किसी अनाज का चूरा) में मिला कर उसमें एक भाग तिल या सरसों का तेल मिला देना चाहिए। इस मिश्रण को चूहों के बिल में अथवा उनके आने-जाने की जगह पर रखने से चूहे खाकर मर जाते हैं। स्मरण रहे, यह औषधि

विष है, इसलिए सावधानी से काम में लानी चाहिए।

(६) **पक्षी**—इनमें नीलकंठ-जैसे कीटभक्षी पक्षी तो फसलों को कीट से बचाने में उपयोगी होते हैं ; परन्तु अधिकांश पक्षी, बादल, सुग्गा, मैना और अन्य छोटी-छोटी चिड़ियां फसलों को बहुत हानि पहुंचाती हैं। बादल और सुग्गा तो फलों के पक्के दुश्मन होते हैं। मैना मटर की फलियों में से दाना निकाल कर खा जाती है। गेहूं-ज्वार आदि को चिड़िया दाना पकने के समय बहुत खाती है। इन सबसे बचाने के लिए टीन की आवाज, गलेल इत्यादि रखवाले द्वारा काम में लाना ही उत्तम है। एक अमेरिकन महोदय लिखते हैं कि फल पकने लगें, उस समय बिली को पींजड़े में बन्द करके टांग दें तो उससे भी पक्षी डर जाते हैं।

(७) **कीट**—कीट कई जाति के होते हैं, जिनमें से टिड्डे की जाति के कीट जब खेतों में उतर जाते हैं तो एक दम सफाया कर देते हैं।

कहावत है—'चिकित्सा से व्याधि का आगमन रोकना अत्युत्तम' है। इस कथनानुसार निम्नलिखित नियमों की ओर ध्यान रक्खा जाय तो कीट तथा व्याधियों से बहुत अंश तक बचाव हो सकता है—

(१) **जुताई**—जुताई ऐसी होनी चाहिए कि जिससे भूमि में रहने वाले कीट और अण्डे ऊपर आ जायं और वे धूप से मर जायं या कीट-भक्षी पक्षी उन्हें खा जायं।

(२) कीट और व्याधि-रहित बीज बोने चाहिए। कीट रहित बीज तो आसानी से पहचाने जा सकते हैं ; परन्तु व्याधि-रहित है या नहीं, यह पहचानना कुछ कठिन है। इसलिए कुछ उपचार, जिनका वर्णन आगे दिया है, करके ही बोना चाहिए।

(३) **भूमि को कीट या जन्तु-रहित करना**—बहुमूल्य बीज जब नर्सरी में बोये जाते हैं और यदि वहां पौधे व्याधि-ग्रस्त हो जायं तो फसल के लिए रोप प्राप्त करना असम्भव हो जाता है। इसके लिए नर्सरी की भूमि पर बड़ी कड़ाई उलट कर उसके नीचे भाप छोड़नी चाहिए। दो घंटे तक इस रीति से जो भूमि गरम की जाती है वह बहुत अंश तक व्याधिकर्ता जन्तुओं

से रहित हो जाती है ।

(४) **फसलों का हेर-फेर**—लगातार प्रतिवर्ष एक ही प्रकार की फसल बोने से उसको हानि पहुंचाने वाले कीट बढ़ते जाते हैं। उनकी बाढ़ रोकने के लिए फसल का हेर-फेर आवश्यक है।

(५) **कूड़ा-कर्कट**—खेतों के आसपास कूड़ा-कर्कट और फसलों के डंठल नहीं होने चाहिए ।

(६) **घास-पात**—छोटी क्यारियों के आसपास या नर्सरी के आस पास घासपात नहीं होना चाहिए, क्योंकि इनमें कीट घुसे रहते हैं।

(७) **घातक कीट का संरक्षण**—कुछ कीट ऐसे होते हैं, जो दूसरे कीट को खाते हैं। ऐसे कीट की रक्षा करनी चाहिए।

(८) **कीटभक्षक पक्षी**—कीटभक्षक पक्षियों की भी रक्षा करनी चाहिए ।

(९) **नर्सरी में रक्षा**—छोटी नर्सरी में मलमल की या तार की जाली लगाकर भी रक्षा कर सकते हैं। यदि नर्सरी बड़ी हो तो उसके पौधों पर राख में थोड़ा-सा मिट्टी का तेल मिलाकर छिड़कना चाहिए।

कीट की संक्षिप्त जीवन-प्रणाली

किसी प्राणी की जीवन-प्रणाली का ज्ञान हो तो उससे मुक्ति पाना सहल होता है। इस जानकारी से किस समय और किस प्रकार के विष का प्रयोग होना चाहिए इसका ज्ञान हो जाता है।

कीट सब अंडज अर्थात् अंडे से उत्पन्न होते हैं।

खाने की प्रणाली के अनुसार कीट दो प्रकार के होते हैं—एक काट कर खाने वाले, दूसरे रस चूसने वाले। कुछ कीट ऐसे भी होते हैं, जिनके बाल-कीट काट कर खाते हैं और तरुण कीट रस चूसते हैं। तितली वर्ग के कीट इस जाति के होते हैं ।

रूपांतर के विचार से भी कीट दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। एक वे, जिनके बालकीट का रूप तरुण कीट के रूप से भिन्न होता है और
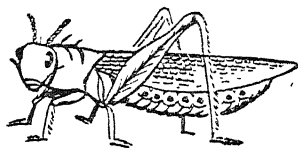
चित्र नं० २०

दूसरे वे जिनमें रूप नहीं बदलता, आकार बढ़ता है और पर आते हैं।

हानिकर्ता कीट के मुख्य वर्ग--

(१) **टिड्डे की जाति वाले कीट**--Grass-hopper, Cricket, Locust टिड्डे, झिंगुर, टिड्डी

इस वर्ग के कीट बाल्य-अवस्था से तरुण-अवस्था तक पौधों के हरे अंगों को खाते हैं। इनके अंडे भूमि में दिये जाते हैं, जिन्हें जुताई से नष्ट कर सकते हैं। बाल्यावस्था में ये कीट उड़ नहीं सकते, फुदकते हैं। उस समय इन्हें कपड़े की थैली में, जिसका वर्णन आगे दिया है, पकड़ कर मार सकते हैं। टिड्डी के बालकीट के लिए थोड़ी-थोड़ी दूर पर नालियां खोदकर उन्हें एक ओर से भगाते जायं तो वे नालियों में गिर जाते हैं। उसमें से फुदक कर बाहर नहीं निकल सकते। उन्हें वहां गाढ़ कर या औषधि छिड़क कर मार सकते हैं। तरुण कीट विष-प्रयोग से मारने चाहिए। जब घने रहते हैं तो 'फ्लेम थ्रोअर' से जला कर मार सकते हैं।

(२) **तितलियां और पतंग**--तितलियां दिन में और पतंग रात्रि में उड़ते हैं और पौधों पर अंडे दे देते हैं, जिनसे बालकीट निकल कर पौधे खाना प्रारम्भ कर देते हैं। ये इल्ली के रूप में रहते हैं। पूर्ण बाढ़ पाने पर एक कोष बन जाता है, जिसमें कीट का रूपांतर होता है और कुछ दिनों बाद तितली या पतंग के रूप में बाहर निकल आते हैं। तरुण कीट तो हानिकर्त्ता नहीं होते, क्योंकि ये फूलों के रस पर रहते हैं, परन्तु अंडे देकर बालकीट की वृद्धि करते हैं, इससे हानिकर हैं।
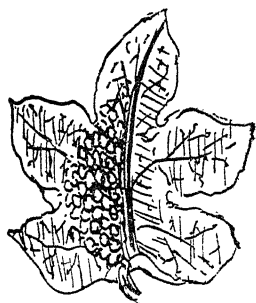
चित्र नं० २१
पत्ते पर अंडे

इनके बालकीट को चुनकर या पौधों पर विष छिड़क कर मार सकते

चित्र नं० २२
बालकीट

चित्र नं० २३
कोष
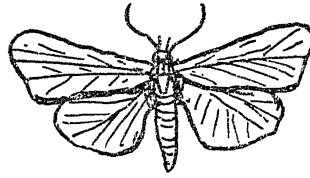
चित्र नं० २४
पतंग (तरुण कीट)

हैं। तरुण कीट में से तितलियों को जाली में पकड़ कर और पतंग को रोशनी पर आकर्षित कर मार सकते हैं ।

(३) **गोबरीले कीट की जाति वाले कीट**—इस वर्ग के कीट के पंख कठोर होते हैं, इससे इन्हें कवच-पंखी भी कहते हैं। इस वर्ग के कीट अधिकतर पौधों के अंगों में छेदकर, उनमें अंडे दे देते हैं, जिनसे बालकीट निकल कर पौधों को खाने लग जाते हैं। कुछ पौधों के अन्दर घुसकर रहते हैं और जब हानि विशेष हो जाती है तो टहनियां या बढ़ती हुई कोंपल सूख जाती हैं। ऐसे मरे हुए अंग को चीर कर देखने से उनमें इल्ली-जैसा बालकीट दिखाई देता है। ऐसे व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए ताकि उनकी वहां वृद्धि रुके ।
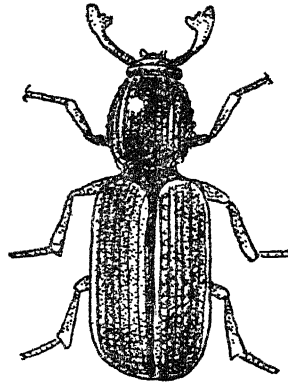
चित्र नं० २५
कवच-पंखी कीट

(४) **दीमक** (White-ants)—जिन खेतों में बिना सड़ा हुआ या कम सड़ा हुआ कार्बनिक पदार्थ पाया जाता है, उनमें ये विशेष रूप से पाई जाती हैं। जब खेतों में पानी कम रहता है तो वे आक्रमण करती

हैं। गन्ने के बोये हुए टुकड़े, गेहूं के छोटे-छोटे पौधे, मक्का इत्यादि कई फसलों को यह बहुत हानि पहुंचाती है। इनकी उत्पत्ति जिस मादा से होती है, उसका नाम कीट-विज्ञानियों ने रानी रखा है। यह एक स्थान पर बैठी अंडे दिया करती है। इसके नगर में कुछ नर होते हैं, जो सिवाय इससे मेल के कुछ काम नहीं करते। इसी रानी के अंडों में से कुछ कीट ऐसे होते हैं, जो काम ही करते रहते हैं और सेवक कहलाते हैं और कुछ ऐसे होते हैं, जिनके सुपुर्द रक्षा का काम रहता है और रक्षक कहलाते हैं। दीमक का घर बनाना और उसके सब नगरनिवासियों के लिए भोजन लाने का काम सेवक करते हैं। रानी जहां अंडे देती है वहां से अंडों को इनके नगर के दूर स्थान पर लेजाकर उनका सेवन ये ही करते हैं। रक्षक तो बाहर से किसी का आक्रमण हो तो सेवा का कार्य करते हैं। इसी नगर में कुछ मादायें ऐसी मोटी हो जाती हैं कि वे रानी का स्थान लेने योग्य हो जाती हैं और सभी प्रकार के कुछ कीट लेजाकर दूसरी जगह अपना साम्राज्य जमा लेती हैं।

दीमक के नाश का यही उपाय है कि इनके नगर में विषैली गैस भर दी जाय—नगर को खोद कर रानी मार दी जाय—खेतों में सिंचाई ठीक से की जाय और सिंचाई के जल में थोड़ा तारकोल मिला दिया जाय या नीम की खली के खाद का प्रयोग किया जाय। डी. डी. टी. खेतों में डाली जाय तो उससे भी लाभ होता है। इनके टीलों में केलशियम सायनामाईड पम्प द्वारा फूंकने से ये मर जाती हैं।

(५) **लाही, मोला** (Aphis)—इस जाति के कीट रस चूस कर अपना पोषण करते हैं। ये चंवली और सरसों पर बहुतायत से पाये जाते है। फलियां ऐसी ढक जाती हैं कि काली-काली दिखती हैं। इनसे बचाने के लिए पौधों पर सूखी या कुछ मिट्टी के तेल से भीगी हुई राख छिड़कनी चाहिए।

तम्बाकू का काढ़ा भी इनसे छुटकारा पाने के लिए अच्छा विष है। सोन पांखरा (Lady bird beetle) नाम का कीट इसका पक्का शत्रु है। जहां ये होती है वहां वह पहुंच जाता है। यह कवच-पंखी कीट

होता है। इसका तरुण कीट बड़ी रहर के जैसा पीले रंग का, जिसके परों पर छः काले धब्बे होते हैं, खेतों में दिखलाई देता है। ऐसा कीट नजर आये तो उसे नहीं मारना चाहिए। इसी कीट के बालकीट लाही को नष्ट करते हैं। दो और भी कीट होते हैं, जिन्हें लेस विंग फ्लाई (Lace wing fly) और सिरफस फ्लाई (Syrphus fly) कहते हैं। इसके बाल-कीट भी लाही को नष्ट कर देते हैं। पहला लाही के कीट का रस चूसकर उनके खोखलों को अपनी पीठ पर लादे फिरता है। दूसरे का बालकीट दृष्टिहीन होता है और वह लाही को टटोल कर रस चूसता है।
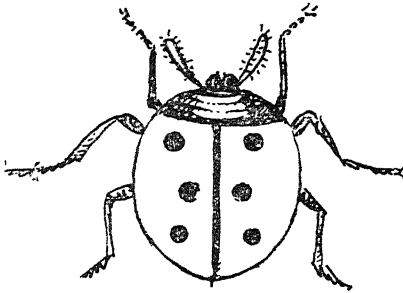
चित्र नं० २६—सोन पाँखरा

(६) **खटमल की जाति के कीट** (Bugs)—इस जाति के कुछ कीट पौधों का रस चूसते हैं। यदि विशेष संख्या में हों तो उन्हें चुनवा कर नष्ट करा देना चाहिए।

(७) **फलों की मक्खी** (Fruit fly)—यह मक्खी साधारण मक्खी के आकार की होती है और फलों में छेद करके उनमें अंडे दे देती है, जिनसे बालकीट निकलकर फलों के गुच्छे से अपना पोषण करते हैं। ऐसे फलों को काटा जाय तो कई सफेद-सफेद बालकीट नजर आते हैं। ये कीट अपना रूपान्तर फलों से बाहर निकल कर करते हैं। जिन फलों में ये पाये जायं, उन्हें इधर-उधर फेंकना नहीं चाहिए, बल्कि जला देना चाहिए; ताकि आगे वंश-वृद्धि न हो। मादा पके हुए फलों पर ही अंडे देती है, सो बहुत पके हुए फल खेतों में या पेड़ों पर नहीं रहने देने चाहिए।

विभिन्न फसलों के तथा साग-भाजी और फलों के कीट उपर्युक्त वर्गों में से ही होते हैं। प्रत्येक का वर्णन यहां असंभव है। आशा है पाठक

उपर्युक्त वर्णन को ध्यान में रखकर कीट का वर्ग पहचान लेंगे और आवश्यकतानुसार उपचार कर सकेंगे। वैसे खास-खास कीटों का आगे वर्णन दिया गया है।

हरी फसलों को हानि पहुंचाने वाले मुख्य कीट

नाम फसल	कीट	उपचार
गेहूं	दीमक : छोटे-छोटे पौधोंको काट देती है।	पृष्ठ (१०५)
धान	**चरका**—टिड्डे वर्ग का—इसके अंडे महीनों तक जमीन में पड़े रहते हैं। बरसात आते ही उनसे छोटे-छोटे टिड्डे निकल कर पौधों पर धावा करते हैं।	पृष्ठ (१०४)
	कोस—(Rice hispa)—पाव इंच लंबा कवच-पंखी, पर छोटे-छोटे कांटे वाले, मादा धान के पत्तों के अन्दर अंडे देती हैं, बालकीट अन्दर-ही-अन्दर खाते रहते हैं।	नर्सरी में पत्तों का ऊपरी भाग काट कर जला देना चाहिए।
	गांधी (Bug)—धान के पत्तों पर कतारों में अंडे पाये जाते हैं, जिनसे कीट निकल कर रस चूसते हैं।	चुनकर नष्ट करना चाहिए।
	माहो—यह भी रस चूसने वाला कीट है। बालों का रस चूस जाता है, जिससे दाना नहीं बन पाता।	रात को खेतों के पास आग जलाकर तरुण कीट को मारना चाहिए।
	स्वार्मिग केटरपिलर— यह पतंग की जाति का कीट होता है। बालकीट झुंड-के-झुंड चलते हैं और एक खेत खतम हो जाय तो फिर दूसरे में जाते हैं।	धान की पानी भरी क्यारियों में थोड़ा मिट्टी का तेल डालकर पौधों पर रस्सा फिराया जाय

		तो कीट पानी में गिर कर मर जाते हैं ।
जई, जौ,	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	
जुवार बाजरा मक्का और छोटे धान्य	टिड्डे की जाति के अथवा पतंग की जाति के कुछ कीट हानि पहुंचाते हैं; परन्तु वह जाति ऐसी नहीं होती कि जिसके लिए विशेष ध्यान दिया जाय ।	
उड़द	—देखिये मूंग	
किराओ कुलथी खिसारी	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	
ग्वार	—कीट तो नहीं परन्तु 'माइट्स' नाम के जन्तु पत्तों का रस चूसकर उन्हें टेढ़े-मेढ़े कर देते हैं और बढ़ती हुई कोंपल की बाढ़ सूखकर वह काली हो जाती है	पत्ते के नीचे की ओर गंधक का भुरकना ।
चना	**ग्राम केटरपिलर**—पतंग की जाति का कीट है, जिसका बालकीट फलों में छेद करके अन्दर से बीज खा जाता है ।	हाथ से चुनवा कर मार देना।
	ग्राम सेमी लूपर—यह कीट भी पतंग की जाति का है, जिसके बालकीट पत्ते खाते हैं । एक-एक मादा पौधों पर चार सौ से पांच सौ तक अण्डे देती है ।	अण्डे इकट्ठे पाये जाते हैं, सो चुनवाये जा सकते हैं ।
चवली	—लाही (Aphis)—फलियों पर लग जाती है और उनका रस चूस लेती है। फलियां गंदी-सी काली-काली हो जाती हैं।	पृष्ठ (१०६)

तूर	—पतंग की जाति के बालकीट फलियों में से बीज खा जाते हैं ।	विशेष नहीं
	—कवचपंखी कीट खेतों में भी लग जाते हैं; परन्तु गोदाम में विशेष हानि पहुंचाते हैं	बीज राखम मिला कर रखना चाहिए। बोने के बीज नेपथलीन की गोलियों के साथ रख सकते ह ।
मसूर	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	साधारण उपचार
मटर	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	यदि कोई दिखाई दे ।
मूंग	पत्तों में छेद करने वाले छोटे-छोटे कवच-पंखी कीट	मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छींट कर
	पतंग की जाति के बालकीट, जिनपर बहुत से बाल होते हैं । प्रारंभ में बहुत से इकट्ठे पाये जाते हैं	चुनवा कर
मोथ, सायबीन, सेम	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	साधारण उपचार यदि कोई आ जाय
अलसी	—कीट से हानि नहीं होती	
एरण्डी	'केस्टर सेमी लूपर—पतंग की जाति का बालकीट छोटा-काले रंग का ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है, स्लेटी रंग का होता जाता है । एरण्डी के पौधों को पत्ते रहित कर देता है	जहां दिखें तुरन्त चुनवा कर
कुसूम	कवच-पंखी कीट पत्ते खा जाता है—तितली की जाति के बालकीट	चुनाव करके

खसखस	विशेष नहीं	
तिल	'तिल हाक माथ'—पतंग की जाति का छोटी उंगली इतना मोटा दो-तीन इंच लम्बा। पत्ते खाता है।	चुनाव कर
	पतंग की जाति का बालकीट, आध इंच लम्बा—बढ़ती हुई कोंपल और फूल खा जाता है।	मुड़े हुए पत्तों को खोलकर कीट चुनवा सकते हैं।
मूंगफली	दीमक	पृष्ठ (१०५)
	पतंग के जाति का बालदार कीट। प्रारंभ में इकट्ठे पाये जाते हैं	चुनवाकर
रामतिली	विशेप नहीं	
तारामीरा तोरिया दार सरसों	लाही बुरी तरह से लगती है।	पृष्ठ (१०६)
	सरसों की मक्खी (Mustard saw fly) बालकीट रात को कोमल पौधे या पत्ते काट कर खाते रहते हैं। दिन में पौधों के पास मिट्टी में छिपे रहते हैं। ये रंग में काले-काले होते हैं।	कटे हुए पेड़ों के नीचे मिट्टी में से निकाल कर मारना
गीनी घास बरसीम लूसन शफताल सेंजी हाथी-कांडा	ये हरे चारे की फसलें हैं। इनमें ऐसे कीट नहीं होते, जिसके लिए विशेष उपचार किये जायें	
ताग वाली फसलें अम्बाडी	विशेष नहीं	
कपास	छोटे पौधों के पत्ते भूरे रंग के टिड्डे खा जाते हैं।	साधारण
	लीफ रोलर (Leaf roller) पतंग की	मुड़े हुए पत्तों से

जाति का बालकीट। चौड़े पत्ते वाले कपास में विशेष होता है। पत्तों को मोड़ कुप्पाकार बना देता है।	कीट चुनवा कर
धड़-छेदक—कवच-पंखी काला कीट। पौधा मर जाता है। धड़ चीरने से सफेद बालकीट दिखलाई देता है	मरे हुए पौधे उखाड़ कर जला देना
फल, बीज और कपास को हानि पहुंचा-नेवाले पिंक बाल वर्म—(Pink boll worm) पतंग की जाति का बाल-कीट गुलाबी रंग का। एक-एक मादा दो सौ तक फलों पर अंडे देती है। जिनसे बालकीट निकलकर फलों में घुसकर बीज खा जाते हैं। कोष बीज में ही बनाते हैं।	अच्छे सुखाये हुए कीट रहित बीज बोने चाहिए। यदि बीज पानी में डाले जायं तो कीट रहित बीज थोड़ी देर में डूब जाते हैं। उन्हें ही बोना चाहिए। आक्रांत फल चुनवा कर नष्ट कर देने चाहिए।
स्पाटेड बाल वर्म (Spotted Boll worm) ये दो जाति के होते हैं। एक के ऊपरी पंख हरे होते हैं और दूसरे के परों पर त्रिभुजाकार हरि धारियां होती हैं। बालकीट भूरे रंग के बालदार होते हैं। ये पहले पत्ते, फिर फूल और बाद में जब फल आ जाते हैं तो फलों में घुस जाते हैं। छोटे फल तो गिर जाते हैं और बड़ों की रूई खराब हो जाती है।	
फल और बीज का रस चूसने वाले खट-मल वर्ग के दो कीट होते हैं। एक लाल और दूसरे भूरे। ये फल या बीज का	साधारण

	रस चूसते हैं।	
पाट	पतंग की जाति के दो-तीन बालकीट इसे हानि पहुंचाते हैं	तरुण कीट को रोशनी पर आकर्षित कर मार देना चाहिए।
सन	कुछ पतंग की जाति के बालकीट	..
तंबाकू	रोपे हुए छोटे पौधों को कुछ टिड्डे काट देते हैं	क्षेत्रफल थोड़ा हो तो प्रत्येक पौधे पर मिट्टी का नल रख देना चाहिए।
	पतंग की जाति के बालकीट	अधिक हो तो कपड़े की थैली में पकड़ कर मार देना चाहिए। बालकीट को चुनवा कर और तरुण को रोशनी पर आकर्षित कर मारना चाहिए।
ईख	दीमक	पृष्ठ (१०५)
	जड़-छेदक, धड़-छेदक और फुनगी-छेदक : ये तीन पतंग की जाति के कीट हैं। इनके बालकीट उपर्युक्त स्थान में छेद करते रहते हैं। जड़-छेदक से पौधा मर जाता है। धड़-छेदक से गन्ना बिगड़ जाता है और फुनगी-	जड़-छेदक कीट के एक शत्रु कीट ट्रायकोगामा नाम के होते हैं जो जड़-छेदक कीट के अंडों में अपने अंडे

	छेदक से बाढ़ रुक जाती है और उस स्थान से दौजियां निकल आती हैं।	देते हैं, जिससे उनके अंडे नष्ट हो जाते हैं। इनमें से घातक कीट निकलते हैं। फुनगी-छेदक से बचाने के लिए गन्ना कुछ जल्दी बोना चाहिए, ताकि बरसात तक पौधे मजबूत हो जायं और कीट का आक्रमण न हो।
	पायरेला (Pyralla) खटमल की जाति के हरे रंग के छोटे-छोटे कीट होते हैं, जो पत्तों में छिपे रहते हैं। ये पत्तों का रस चूसकर उन्हें कुम्हला देते हैं और पौधे कमजोर कर देते हैं।	यदि आक्रमण अधिक हो तो पत्ते छील देने चाहिए

मुख्य तरकारियों को हानि पहुंचानेवाले कीट

नाम फसल	कीट	उपचार
आलू	पौधे काट देने वाला (Greasy surface caterpillar) पतंग की जाति का, जो चना, मटर, गोभी, इत्यादि पर पाया जाता है।	भोज्य पदार्थ में संख्या मिला कर खेतों में रखने से तरुण कीट रोशनी पर आकर्षित कर

	(Tobacco caterpillar) तितली की जाति का, पत्ते खाता है—बालकीट प्रारंभ में इकट्ठे पत्तों पर पाये जाते हैं	चुनवाकर
	गोदाम में हानि पहुंचाने वाला पतंग की जाति का (Potato moth) वाल-कीट जौ के बराबर सफेद काले मुंह का होता है। मादा आलू की आंखों में अंडें देती हैं, जिनमें बालकीट निकलकर गूदा खाते हैं। खेतों में भी यदि आलू खुले रह जायं तो वहां भी मादा अंडे देती हैं। कभी-कभी गोदाम में सबके सब आलू नष्ट हो जाते हैं।	बालू या लकड़ी के कोयले के चूर्ण से ढक कर रखने से।
शकरकंद	शकरकन्द का घुन—घुन जैसे चमकीले कवच-पंखी कीट का बालकीट। मादा कन्द को काट कर उसमें अंडे देती है। बालकीट निकल कर गूदा खाते रहते हैं	खेतों में कन्द को मिट्टी से ढककर रखना चाहिए
	तितली और पतंग की जाति के कुछ कीट ऐसे होते हैं, जो पत्ते खाते हैं।	साधारण उपचार से।
प्याज, लहसन आदि	कभी-कभी टिड्डे पौधे काट देते हैं	कपड़े की थैली से पकड़ कर मार देना।
पत्ते, डंडी और फूल वाली फसलों के कीट	लाही—	पृष्ठ (१०६)
	सरसों की मक्खी—	पृष्ठ (१११)
	टिड्डे	
	तितली और पतंग की जाति के बाल-दार कीट	साधारण उपचार

फलीदार पौधों को हानि पहुंचाने वाले कीट	पतंग या तितली की जाति के बालकीट	साधारण उपचार
कद्दू, तोरी, खीरा इत्यादि	१२ और २८ धब्बे वाले 'एपिलेकना' कवच-पंखी लाल और काले रंग के पाव इंच लम्बे	चूने का चूर्ण अथवा चूने-तम्बाकू के मिश्रण का चूर्ण छिड़क कर
फलों की मक्खी		पृष्ठ (१०७)

फलों को हानि पहुंचाने वाले मुख्य कीट

नाम फल	कीट	उपचार
अंगूर	पतंग की जाति का पूर्ण बाढ़ पाया हुआ बालकीट डेढ़-दो इंच लम्बा हरे रंग का, जिसकी दुम पर सींग का-सा आकार होता है, पत्ते खा जाता है।	चुनवाकर
	कवच-पंखी छोटे कीट पत्तों में छेद कर देते हैं	काट-छांट के पश्चात यदि केले के सूखे पत्ते लताओं पर रख दिये जायं तो कीट उन पत्तों पर चढ़ जाते हैं। दिन में दो-तीन बार पांच-छः दिन तक ऐसा करने से बहुत से कीट चुने

		जा सकते हैं ।
अनार	तितली की जाति का बालकीट फलों को बिगाड़ देता है । तितली अनार की पैंदीं में, जहां फूलों की पंखड़ियां होती हैं, अंडे देती है ; जहां से बालकीट निकल कर फलों में घुस जाते हैं	आक्रांत फलों को जला देना चाहिए। थोड़े फल हों तो कागज या कपड़े की थैली में बांध देने चाहिए
आड	भूरे रंग की एक मक्खी, जिसपर काली-पीली धारी होती है, फलों के छिलकों में छेद करके अंडे दे देती है । तीन ही दिन में अंडों से बालकीट निकल कर फलों में घुस जाते हैं।	आक्रांत फलों के जला देना चाहिए। मक्खी को विष पर आकर्षित करके मार देना चाहिए ।
आम	धड़-छेदक—कवच-पंखी की जात का एक कीट होता है, जिसकी मादा छाल के नीचे अंडे दे देती है और बालकीट निकल कर धीरे-धीरे अन्दर घुसता जाता है । यह कीट कई साल तक पेड़ में रह जाता है।	छेद में ठंडा या गरम तार डाल कर बालकीट को मार दो छेद में अकलतरा (Coaltar) डाल कर । क्रियोसोट और क्लोरोफार्म का मिश्रण बराबर भाग में मिला कर उसमें रुई भिगो कर छेद में भर दो और ऊपर से छेद बन्द कर दो

	मधुआ-मौर चूषक कीट । इनकी मादा मौर आने के समय कोपलों पर अंडे देती है और कीट कोपलों का और मौर का रस चूस लेते हैं, जिससे फल नहीं बैठ पाते । इनके शरीर से मीठा रस निकल कर पत्तों पर और टहनियों पर गिरता रहता है। इस रस पर एक प्रकार की फफूं लग जाती है, जिससे टहनियां काली पड़ जाती हैं।	गंधक का चूर्ण तीन-चार बार आठ-दस दिन के अन्तर पर भुरभुराना अच्छा होता है । पच्चीस-तीस फुट ऊंचाई वाले पेड़ के लिए एक सेर गंधक का चूर्ण काफी होता है । यह यंत्र से छिड़का जाता है ।
नारियल	नारियल का घन--कवच-पंखी की जाति का घुन-जैसा लगभग डेढ़ इंच लम्बा होता है । इसकी मादा नारियल के पेड़ पर घाव में अंडे देती है, जहां से बाल-कीट निकल कर अन्दर का गूदा खाते हैं।	पेड़ पर कोई घाव खुला नहीं छोड़ना चाहिए । उसपर तारकोल लगा देना चाहिए ।
नीबू,संतरा की जाति के धड़-छेदक कीट	कवच-पंखी	आम के छेदक कीट-जैसा
कोंपल-भक्षक	तितली वर्ग का बालकीट कोंपल खा जाता है। तितली बहुत से पीले धब्बे वाले काले रंग की होती है। पत्तों तर बालकीट पक्षियों की बीठ जैसे नजर आते हैं	चुनकर
बेर	फलों की मक्खी	पृष्ठ (१०७)

सूखे अनाजों को हानि पहुँचाने वाले कीट और उनसे बचाने के उपाय—अनाजों में रागी (मड़ुवा), कोदों, सावा चीना बाजरा आदि ऐसे हैं, जिन्हें कीट से हानि नहीं पहुंचती। दूसरे अनाजों को गोदाम में हानि पहुंचाने वाले कीट पन्द्रह-बीस प्रकार के हैं; परन्तु मुख्यतः निम्नलिखित हैं—

घुन—कवचपंखी जाति के कीट में से ये तीन कीट होते हैं—खपरा, सूंड वाला और विना सूंड का घुन।

खपरा (*Tragoderma granaria*)—इस कीट से गेहूं के कोठों में गेहूं के ऊपरी तह को ही विशेष हानि पहुंचती है। ऊपर के पांच-छः इंच से लेकर एक फुट तक के गेहूं का तो यह चूर्ण ही बना देता है। इसका तरुण कीट लगभग १/८ इंच लम्बा होता है। कार्तिक (अक्तूबर) से वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) तक अपना जीवन-काल बालकीट के रूप में काटते हैं। बाद में रूपान्तर कर तरुण कीट बन जाते हैं और अगले चार-पांच महीने में इनकी

चित्र नं० २७—खपरा

चार-पांच पीढ़ियां हो जाती हैं। एक-एक मादा सौ सवा सौ तक अण्डे देती है।
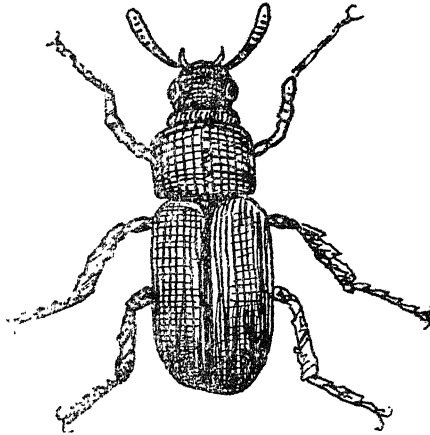
बिना सूंड वाला घुन (*Rhizopertha dominica*)—यह कीट १/६ इंच लम्बा भूरे या काले रंग का होता है। यह गेहूं, जव, ज्वार, मक्का, चावल में पाया जाता है। गर्मी आते ही यह कर्म-रत हो जाता है। सालभर में इसकी चार-पांच पीढ़ियां हो जाती हैं। शीतकाल बालकीट

के रूप में ही पूरा होता है। यह सूखे फल, काष्टादिक औषधियों तथा कागज में भी पाया जाता है।

सूंड वाला घुन (*Silophylus oryza*)—इसका मुंह सूंड के आकार का होता है। यह कीट लगभग $\frac{1}{8}$ इंच लम्बा होता है। गेहूं, ज्वार, मक्का, चावल को बहुत हानि पहुंचाता है। तरुण कीट सर्दी के दिनों में हानि पहुंचाते रहते हैं। दूसरी और तीसरी प्रकार के कीट अनाज के अन्दर से गूदा खा कर बीज को खोखला कर देते हैं। पहले की भांति चूरा नहीं बनाते और उसकी भांति सिर्फ ऊपरी तह को ही नहीं बल्कि सभी तह में पाये जाते हैं। इन तीन में पहला कीट काफी तगड़ा, दूसरा बीच में से पतला और तीसरा सूंड वाला होता है।
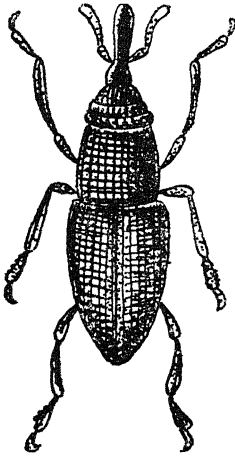
चित्र नं० २८
सूंडवाला घुन

इन तीनों कीटों से बचाने के लिए गोदाम कीट रहित करने चाहिए तथा औषधियां भी काम में लानी चाहिए, जिनका वर्णन आगे दिया है।

सूजी का घुन (*Tribolium castaneum*)—आटा, सूजी, मैदे में लाल रंग के खपरे-जैसे कीट हो जाते हैं। इनके बालकीट सफेद रंग के पतले होते हैं। इनकी एक-एक मादा ४५० तक अण्डे देती है। ये बरसात में बहुत हानि करते हैं। सूखे स्थान में सूजी, आटे को रखने से बचाव हो सकता है।
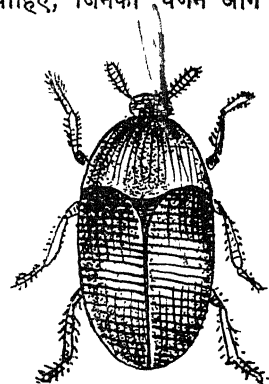
चित्र नं. २९—सूजी का घुन

पतंग की जाति का एक कीट (*Sitotroza cereatella*)––जुवार में बहुत हानि पहुंचाता है। कीटरहित गोदामों में भरने तथा औषधियों से इस कीट से बचाव हो सकता है। चावल में एक कीट (*Corcyra cephalonica*) ऐसा होता है, जो रेशमी तन्तुओं में रहता है। इसके ऊपर बहुत से चावल चिपक जाते हैं। चावल को राख में मिला कर रखने से इस कीट से बचाव हो सकता है। बहुत संख्या में हो तो गोदाम कीट रहित कर औषधि का उपयोग करना चाहिए।

दाल वर्ग को हानि पहुँचाने वाले कीट––इस वर्ग को हानि पहुंचाने वाले कवचपंखी कीट दो प्रकार के होते हैं; परन्तु इनमें से (*Bruchis chinensis*) नाम का कीट विशेष हानि करता है। मादा बीज पर अण्डे देती है, जिससे बालकीट निकल कर बीज में का गूदा खा जाते हैं और बीज को खोखला बना देते हैं। इसके बालकीट विशेष हानि पहुंचाते हैं। अन्य बीज की रक्षा के उपाय इनमें भी काम में लाने चाहिए।

अनाज के गोदाम––

कुछ देशों में जहां अनाज विशेष होता है, रक्षा के लिए एलेवेटर्स (Elevators) बने हुए होते हैं। ये एक बैंक-जैसे होते हैं। कृषक अपना माल वहां ले जाते हैं और एलेवेटर्स वाली कम्पनी उनका माल साफ करके सुखा कर जिस श्रेणी का होता है उस एलेवेटर में भर देती है। अनाज भरते समय ही कलों द्वारा साफ हो कर गर्म हवा से सूख जाता है। कम्पनी माल की रसीद दे देती है, जो हुंडी या चेक का काम देती है। आप अपना माल वजन कराये या दिखलाये बिना उस रसीद के आधार पर कहीं भी बेच सकते हैं। ऐसे एलेवेटर्स सीमेन्ट के बने हुए होते हैं और उनके नीचे जाकर अनाज की मालगाड़ीं के डिब्बे खड़े कर दि जाते हैं, जहां से अनाज ऊपर चढ़ जाता है। ये जमीन से इतने ऊपर होते हैं कि रेल के डिब्बे इनके नीचे जाकर खड़े हो जाते हैं। इस सम्हाल के लिए कम्पनियां अपना कमीशन ले लेती हैं।

भारत में अभी इनका प्रचार नहीं है। यहां कोठे भरे जाते हैं। गृहस्थ भखारियों में भी भरते हैं। गेहूं भरने के लिए भखारी के चारों तरफ गेहू और दीवाल के बीच में भूसे का तह देकर अनाज भरना चाहिए। गेहूं के नीचे और ऊपर भी भूसा रखकर मिट्टी से छाब देना चाहिए। यदि गेहूं अच्छे सूखे हुए हों तो इस युक्ति से अच्छे बने रहते हैं।

जहां सील अधिक होती है वहां भखारिया लकड़ी के खम्भों पर बनानी उत्तम होगी। दीवालें बांस या रहर के डंठल इत्यादि की बना कर उनकी बगल में भूसा रख कर अनाज भरना चाहिए।

सरकारी अनाज-रक्षा-विभाग निम्नलिखित प्रकार के गोदाम का प्रचार करते हैं :

तीन हजार बोरे अर्थात् लगभग ७५०० मन अनाज रखने के लिए ७०'×२०' लम्बे-चौड़े तथा बीस फुट ऊंचे गोदाम होने चाहिए। ऐसे गोदाम को चार भागों में बांट कर बोरों की थप्पियां लगनी चाहिए। प्रत्येक थप्पी में ७५० बोरे होंगे और थप्पियों के चारों ओर दो-ढाई फुट का मार्ग छोड़ना चाहिए। गोदाम की कुर्सी स्थानीय जलवायु अनुसार ऊंची-नीची रख सकते हैं। दीवालें १३॥ इंच और दरवाजे चार फुट चौड़े होने चाहिएं।
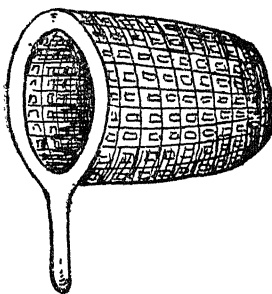
कीट-नाशक उपचार और औषधियां—

कपड़े की छोटी थैली—एक लोहे के कुण्डल पर एक जालीदार कपड़े की थैली सी दी जाती है और कुण्डल में एक लकड़ी का दस्ता लगा देते हैं। उड़ते हुए कीट पकड़ने के लिए इस थैली को झटके से कीट की तरफ बढ़ाते हैं। ऐसा करने से थैली फूल जाती है और कीट उसमें फंस जाता है। बाद में जल्दी से मोड़ देने से थैली में गया हुआ कीट बाहर नहीं निकल पाता।

चित्र नं० ३०
कपड़े की छोटी थैली

कपड़े की बड़ी थैली—बांस के चौखटे में आयताकार कपड़े का थैला सी दिया जाता है। छोटे टिड्डे, जो खेतों में बहुतायत से पौधों को हानि पहुंचाते हैं, वे ऐसी जाली में पकड़े जा सकते हैं। दो व्यक्ति बांस के चौखटे के छोर पकड़ कर खेतों में दौड़ते हैं तो ये उड़कर इस थैले में फंस जाते हैं और मारे जा सकते हैं।
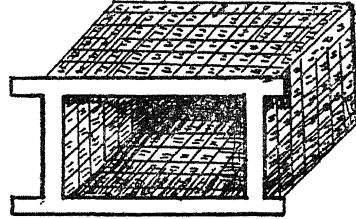
चित्र नं० ३१
कपड़े की बड़ी थैली

औषधियां छिड़कने या भुरभुराने के यंत्र—

औषधियां सूखी तथा तरल होती हैं। सूखी औषधियां भुरभुराने के लिए छोटे पौधों पर या नर्सरी में महीन कपड़े में भर कर भुरभुरा सकते हैं। टीन में छेद करके उनके द्वारा भी भुरभुरा सकते हैं। पिचकारी-जैसा यंत्र भी इस काम के लिए होता है। विशेष क्षेत्रफल में हवाई जहाज द्वारा यह कार्य हो सकता है।

तरल पदार्थ के लिए बर्तन होते हैं, जिनमें औषधि का घोल और हवा भर देते हैं। इसके नल और उसके मुंह पर महीन छेद होते हैं, जिनमें से फुहार के रूप में औषधि उड़ती है। ऐसे यंत्र छोटे क्षेत्रफल से लेकर बड़े-बड़े बगीचों में फलों के वृक्ष पर छिड़कने के जैसे होते हैं।

औषधि छिड़कने के यंत्रों को काम में लाने के पश्चात तुरन्त ही साफ़ करके रखना चाहिए।

कीट-नाशक प्रधान औषधियां—

ये औषधियां (विष), तीन प्रकार की होती हैं—(१) आन्तरिक (२) स्पर्शक और (३) गैस। आन्तरिक विष खाने से, स्पर्शक छूने से और गैस सूंघने से कीट मर जाते हैं।

आन्तरिक विष किसी खाद्य वस्तु में मिला कर खेतों में रख दिये जाते हैं, जिन्हें खाकर कीट मर जाते हैं अथवा वे पौधों पर घोल के रूप में

छिड़कते हैं अथवा चूर्ण के रूप में भुरभुराये जाते हैं । स्पर्शक विष ऐसे समय पर छिड़के जाते हैं, जब कीट पौधों पर पाये जाते हैं। ये विष सीधे कीट पर गिरते हैं, जिससे कीट मर जाते हैं ।

गैस वाले विष दीमक को मारने व बीज तथा बीज-भंडार अथवा कांच-घरों[1] को कीट रहित करने के काम में लाये जाते हैं जैसे फार्मेलिन इत्यादि ।

कुछ औषधियां ऐसी भी हैं, जो स्पर्शक और गैस दोनों का काम देती हैं—जैसे कार्बन-बाई सलफाईड—गंधक की धूनी

आन्तरिक विष—

ये बहुधा संखिया के लवण होते हैं और घोल तथा चूर्ण के रूप में काम में लाये जाते हैं । आजकल नये-नये कार्बनिक विष भी निकले हैं और नये-नये निकलते रहते हैं । सो कीट-विज्ञानी की सम्मति से काम करना चाहिए; वरना कभी लाभ की अपेक्षा हानि भी हो जाती है । कीट-नाशक विष मनुष्य तथा पशुओं के लिए भी हानिकर होते हैं, इसका भी ध्यान रख कर काम करना चाहिए । संखिया के विष में विशेष रूप से लेड आर्सिनेट (Lead arsenate) का सफेद चूर्ण होता है । इसकी मात्रा निम्नलिखित होती है—

घोल		चूर्ण	
मात्रा औषधि	जल	मात्रा औषधि	अन्य वस्तु
१ भाग	२५० भाग	१ भाग	बुझा हुआ चूना ८ भाग

टिड्डी के लिए—

१ भाग सोडियम-फलुओ-सीलीकेट (Sodium fluosilicate) ।

२ भाग चोआ (Molasses)

३० भाग चोकड़ (Wheat bran)

१. विदेशों में विशेषतः अधिक ठंडे स्थानों में कांच-घर ऐसे बने हुए होते हैं कि जिनमें खेती होती है । साग-भाजियां पैदा की जाती हैं ।

उपर्युक्त मिश्रण की छोटी ढेरियां आवश्यकतानुसार जल से गीली करके खेतों में जगह-जगह रखने से टिड्डियां खाकर मर जाती हैं।

फलों की मक्खी को आकर्षित करने का विष—

पानी १ मन, गुड़ ३ सेर, लेड आर्सिनेट पाव भर का घोल बनाकर पेड़ों पर या तख्तों पर लगा कर रखने से मक्खियां खा कर मर जाती हैं।

स्पर्शक विष—तम्वाकू का काढा, तेल-साबुन का मिश्रण इत्यादि स्पर्शक विष हैं।

तम्बाकू का काढ़ा—एक सेर तम्बाकू दस सेर पानी में २४ घंटे भिगो कर या आधे घंटे तक पानी में उबाल कर काढ़ा बना लेना चाहिए। इसे छान कर उसमें पाव भर साबुन मिला देना चाहिए, क्योंकि इससे विष का फैलाव अच्छा होता है। उपयोग के समय उसमें सात भाग पानी और मिलाना चाहिए ।

निकोटीन सलफेट (Nicotine sulphate) यह तम्बाकू के सत का बना हुआ होता है। इसका एक भाग हजार भाग जल के साथ मिला कर काम में लाना चाहिए ।

लाही (मोला) और छोटे-छोटे पौधों के पत्तों में छेद करने वाले कवच-पंखी वर्ग के कीट के लिए उपर्युक्त औषधि बड़े काम की है।

तेल-साबुन का मिश्रण—दस सेर गरम पानी में आधा सेर साबुन घोल कर उसमें आधा टीन (दो गैलन) मिट्टी का तेल मिला लेना चाहिए। उपयोग के समय इसमें बीस भाग पानी और मिलाना चाहिए।

पायरेथ्रम घोल—तीन छटांक साबुन और एक सेर पानी गरम करके धीरे-धीरे उसमें १ सेर मिटी का तेल मिलाना और बाद में आधी छटांक पायरेथ्रम का सत मिला कर उपयोग के समय लगभग १६ सेर पानी मिलाना चाहिए।

गैस तथा स्पर्शक विष के रूप में काम आने वाली औषधियां—

डी.डी.टी. तीन शतांश औषधि वाला तरल पदार्थ अथवा तीन शतांश

औषधि वाला चूर्ण काम में लाया जाता है। अनाज को गोदाम में बचाने के लिए एक हजार भाग में एक भाग चूर्ण मिलाना चाहिए। औषधि मिलाने के पश्चात कम-से-कम छः-सात सप्ताह तक अनाज काम में नहीं लाना चाहिए।

गोदाम की दीवालों पर छिड़कने के लिए ५ % वाला तरल पदार्थ काम में लाना चाहिए।

गेमेक्सीन—एक हजार घन फुट जगह के लिए आधा सेर औषधि लगती है। यह विष आन्तरिक, स्पर्शक तथा गैस तीनों प्रकार का है। इसको छिड़कने से एक तेज-सी गंध निकलती है, जिससे नाक में जलन-सी होती है। इसको छिड़कने के बाद एक-दो दिन तक उस कमरे में अधिक समय तक नहीं ठहरना चाहिए।

क्लोरोसाल (Chlorosol)—पच्चीस भाग कार्बन टेट्रा क्लोराईड और पचहत्तर भाग ईथलीन-डाई-क्लोराईड के मिश्रण से यह औषधि बनती है। चालीस मन अनाज के लिए एक भाग औषधि काम में लानी चाहिए।

कार्बन-बाई-सलफाईड (Carbon-bi-sulphide)

प्रति एक हजार घन फुट में ढाई सेर औषधि डालनी चाहिए। औषधि अनाज पर छिड़क कर बर्तन का मुंह बंद कर देना चाहिए। यह औषधि आग बड़ी जल्दी पकड़ती है, सो इसके उपयोग के समय किसी प्रकार की आग पास में नहीं आनी चाहिए। औषधि डालने के अड़तालीस घंटे बाद थोड़ी देर के लिए बर्तन का मुंह खोल देना चाहिए ताकि औषधि उड़ जाय और बाद में आग पकड़ने का भय न रहे।

आन्तरिक और स्पर्शक विष के सिवाय कुछ विष ऐसे होते हैं, जिनकी बू से कीट निकट नहीं आते। २ से ४ प्रतिशत फिनाइल दीमक को भगा देती है।

गोदाम कीट-रहित करना—

आग से—एक हजार घनफुट के लिए सात सेर लकड़ी का कोयला

जला कर गोदाम बन्द कर दिया जाय तो उससे होने वाली गर्मी से कीट मर जाते हैं।

गोदाम कीट रहित करने के लिए गेमेक्सीन भी काम में आता है। गेमेक्सीन के एक पौं० के डिब्बे मिलते हैं। ८००० घन फुट जगह के लिए एक पौंड गेमेक्सीन जलाना चाहिए। जलाने की रीति डिब्बे के साथ रहती है। गोदाम के दरवाजे-खिड़कियां आदि गेमेक्सीन जलाने के बाद खूब अच्छी तरह से बन्द कर देने चाहिए। २४ घंटे बाद गोदाम खोलना चाहिए।

किलोपटेरा (Killoptero) नाम की एक औषधि भी मिलती है, जिसे अनाज को घुन लगने से बचाने के काम में लाते हैं। एक भाग औषधि हजार भाग अनाज के लिए काम में आती है।

नैफ्थलीन की गोलियों से थोड़े बीज सुरक्षित रख सकते हैं। प्रति मन अनाज में तीन छटांक गोलियां काफी होंगी।

कापर कार्बोनेट—(Copper corbonate) नाम की औषधि भी बीज सुरक्षित रखने के लिए अच्छी औषधि है। एक सौ मन अनाज में आधा मन औषधि मिलानी चाहिए। मिलाते समय औषधि नाक में न जाय, इसलिए मुंह पर कपड़ा बांध लेना चाहिए।

पारा—घुन से बचाने के लिए पारे का उपयोग भी किया जाता है। गोबर की टिकिया में पारे को रखकर सुखा करके गेहूं में रख देने से भी कीट नहीं लगते। एक मन गेहूं के लिए लगभग ४ तोला पारा लगेगा।

बीज सुरक्षित रखने के लिए जहां पारा, तांबा अथवा ऐसी दूसरी औषधि का उपयोग किया जाय तो उन बीज को जहां तक बने, खाने के काम में नहीं लाना चाहिए। क्लोरोसाल धूप दिखाने से उड़ जाता है इसलिए हानिप्रद नहीं है।

साधारण गृहस्थी नीम के पत्ते अथवा सूखी राख मिला कर भी अनाज में रखते हैं। ऐसे बीज खाने में किसी प्रकार की हानि नहीं है।

बोरे कीट-रहित करना—अनाज बोरों में भरा जाता है, जिनमें हानिकर्ता कीट के अंडे, उनके बालकीट और तरुण कीट लगे रहते हैं। और

इनका प्रसार बोरों द्वारा भी होता है। यदि बोरों को अनाज भरने के पहले गैस द्वारा बीज-रहित कर दिया जा सके तो उत्तम होगा। ऐसे बोरों को किसी बर्तन या कोठे में बन्द करके गेमेक्सीन अथवा कार्बन बाई सल्फाइड से भी कीट-रहित कर सकते हैं।

सूक्ष्म जन्तु द्वारा होने वाली व्याधियां

ऐसे व्याधिकर्त्ता जन्तु दो जाति के होते हैं—एक फफूंद की जाति के और दूसरे जीवाणु की जाति के।

फंगस या जीवाणु की पहचान सूक्ष्मदर्शक यंत्र से ही हो सकती है और व्याधियों की पहचान उनके लक्षण से।

गेहूं की व्याधियां—

हरदा, गेरु या कंगी—(Rust) इस व्याधि के लगने से दाना बहुत पतला पड़ जाता है। यह तीन प्रकार की होती है–हरदा पीला हरदा, नारंगी और काला हरदा—पौधों के अंगों पर उपर्युक्त रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। नारंगी रंग का पोष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में पत्तों पर, पीला कुछ दिन बाद पत्ते और डंडियों पर और तीसरा गेहूं के पकते समय पाया जाता है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, मध्यभारत में पहली दो जाति के और काला पंजाब तथा बंबई की तरफ विशेष रूप से पाया जाता है। वातावरण में तरी विशेष रहने अथवा बादलों वाले दिन इनका फैलाव बहुत होता है। ये व्याधियां इनके 'बीजाणु' (spores) द्वारा फैलती हैं।

इन व्याधियों से बचने का यही उपाय है कि ऐसी जातियां बोई जायं, जिनपर व्याधि का आक्रमण कम हो। ऐसी जातियों में एन. पी. ७१०, १९५ और १११ हैं।

बण्ट—(Bunt) इस व्याधि से गेहूं में मैदा न बनकर काला बदबूदार पदार्थ बन जाता है। ऊपर से तो दाना अच्छा ही दिखता है; परन्तु बहुत ध्यान से देखने से आधा गेहूं काला नजर आता है। बहुधा ऐसा होता है कि एक ही बाल में कुछ दानों में यह व्याधि होती है। अच्छे गेहूं में इस व्याधि वाले गेहूं मिल जायं तो रोटी का स्वाद बिगड़ जाता

है। इससे बचाने के लिए बीज पर फार्मेलिन या कापर कार्बोनट का प्रयोग करके बोना चाहिए। आधा सेर फार्मेलिन को सवा मन पानी में घोलकर जो मिश्रण बनेगा, वह ८० मन गेहूं के लिए काफी होगा। गेहूं को फैलाकर औषधि छिड़कने के पश्चात गीले बोरों से दो घंटे तक ढक कर रखना चाहिए। ऐसा करने से बण्ट के बीजाणु (Spores) मर जाते हैं।

कापरकार्बोनेट मिला कर बीज बोना भी लाभप्रद होता है। सवा मन बीज में २ छटांक औषधि काफी होगी।

तूतिया (Copper sulphate) भी काम में ला सकते हैं। एक मन बीज में लगभग डेढ़ छटांक चूर्ण डालना चाहिए।

कायमा—(Smut) इसमें गेहूं के बीज की जगह काला चूर्ण-सा पदार्थ बन जाता है। इससे बचने के लिए गर्मी के दिनों में चार घंटे तक सवेरे से गेहूं को भिगोकर दोपहर को चार घंटे तक धूप में सुखा लेना चाहिए। ऐसे बीज बोने के समय तक सुरक्षित रखकर बोने चाहिए। बोने के पहले बीज की अंकुर फेंकने की शक्ति देख लेनी चाहिए और यदि कम हो तो बीज की मात्रा उसी अनुपात में बढ़ा देनी चाहिए।

धान की व्याधियां—

बण्ट—गेहूं-जैसा बण्ट इसमें भी होता है; परन्तु विशेष नहीं होता। बोते समय बीज को पानी में डालकर देख लेना चाहिए, जो बीज डूब जायं उन्हें बोना चाहिए। व्याधि वाले बीज तैर जाते हैं।

खड़ा सिर—इसमें धान के बाल खड़े रह जाते हैं, क्योंकि चावल ठीक न बनने से वे भारी नहीं होते। ऐसी स्थिति में पानी बहा देने से कुछ लाभ होता है।

'टिपबर्न', बढ़ती हुई फुनगी सूख जाना—यह किसी सूक्ष्म जन्तु से नहीं होती; परन्तु भूमि में लवण-विशेष हो जाय तो होती है। ऐसे खेतों में, जिसमें यह व्याधि दिखे, सजीव खाद देने से लाभ होता है। पानी को भी बहा देना चाहिए।

जई—कायमें वाली व्याधि इसमें भी पाई जाती है। गेहूं में

जैसे फार्मेलिन का उपचार किया जाता है, इसके लिए भी वैसा करना चाहिए।

ज्वार—कायमे वाली व्याधि ज्वार को बहुत हानि पहुंचाती है दस सेर बीज में दो तोला गंधक, तूतिया या कापर कार्बोनेट मिला कर बोना अच्छा होगा।

बाजरा—इसमें कभी-कभी बाल में दाने न आकर छोटे-छोटे पत्ते आने लगते हैं। ऐसा दिखे तो व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

ग्वार—इसके पत्तों में 'माइट्स' नाम के जन्तु लग जाते हैं, जो रस चूस कर पत्ते को सिकुड़ा देते हैं, पत्तों का रंग काला पड़ जाता है। बढ़ती हुई कोंपल काली पड़ जाती है और बाढ़ रुक जाती है। पत्तों के नीचे की ओर उन्हें कुछ गीले करके गंधक का चूर्ण लगाया जाय तो ये जन्तु तुरन्त मर जाते हैं। गंधक का चूर्ण मलमल के कपड़े में बांध कर भुरकाया जा सकता है। सब्जी वाली ज्वार के लिए ऐसा उपचार लाभप्रद सिद्ध होगा।

चना—इसके विल्ट नाम की व्याधि बुरी तरह से लगती है। इसमें पौधे यकायक सूख जाते हैं। व्याधि से बचने वाले चने बोना चाहिए।

रहट या तूर—विल्ट नाम की व्याधि इसमें भी लगती है। कृषि-विभाग वालों की सम्मति से ऐसी जाति बोनी चाहिए, जिसमें रक्षा की शक्ति अधिक हो।

अलसी—हरदे वाली व्याधि कहीं-कहीं लगती है। फसल का हेर-फेर करके ऐसी जाति बोनी चाहिए, जिसपर व्याधि का असर कम हो।

कपास—फूलों की कलियों के झड़ने अथवा फलों के गिरने के रूप में आवश्यकता से अधिक जल से और खाद्य तत्वों के असमान अनुपात से यह व्याधि होती है। सो पानी आवश्यकतानुसार ही देना चाहिए। लायड[1] महोदय लिखते हैं कि सोडियम नाइट्रेट के खाद से कलियां कम झड़ती हैं।

तिड़क—इसमें पत्ते लाल होकर जल्दी गिर जाते हैं और फल पकने

---

(1) N.Y- Acad. Sci. Vol. 39, 1921.

से पहले ही फट जाते हैं । दस्तूर[1] महोदय की खोज यह बतलाती है कि भूमि में नाइट्रोजन की कमी अथवा भूगर्भ जल में घुलनशील लवण की मात्रा अधिक होने से ऐसा होता है। इसके लिए नाइट्रोजन का खाद देना चाहिए।

ऊब सूख—इसमें पौधे सूख जाते हैं। व्याधिग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए।

गन्ना, ईख—

लाली—गन्ने में लाल रंग के धब्बे हो जाते हैं और रस कम हो जाता है। इसके लिए बोते समय यह देखकर बोना चाहिए कि बीज के टुकड़े लाली रोग से मुक्त हों । जिन टुकड़ों में लाल या सफेद धब्बे नजर आवें, उन्हें नहीं बोना चाहिए।

कायमा—इसमें आखरी पत्ता चाबुक-सा निकलता है और काले बुरादे से भरा रहता है। व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। गन्ने के टुकड़ों को दो शतांश फार्मेलिन में डूबोकर दो घंटे तक कपड़े के नीचे दवा कर रख करके लगाना चाहिए ।

ऊब सूख—गन्ना सूख कर अन्दर से भूरे रंग का हो जाता है।

साग-भाजी में होनेवाली कुछ व्याधियां

'डेम्पिग आफ़'—नर्सरी में बहुधा ऐसा होता है कि छोटे-छोटे पौधे बीच में से या जमीन के पास से झुककर मर जाते हैं। इस व्याधि को अंग्रेजी में 'डेम्पिग आफ' कहते हैं। यह व्याधि अधिक तरी से होती है, सो ज्योंही दिखलाई दे, पानी कम कर देना चाहिए।

'मोज़ेक'—यह व्याधि ऐसी होती है कि इससे पत्तों में पीले-पीले धव्वे पड़ जाते हैं और जब अधिक हो जाती है तो पत्ते मुर्झा जाते हैं, पौधों की बाढ़ रुक जाती है। भिंडी में यह विशेष रूप से दिखाई देती है। वैसे टमाटर, आलू, तोरी, इत्यादि वहुत-सी तरकारियों में पाई जाती है। अधिक फैलने न पावे,इसलिए व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। यह व्याधि

(1) Dastur, R.H.—1944 Sci. Monograph No. 2, Indian Cotton Committee.

कीट द्वारा फैलाई जाती है जैसे मलेरिया मच्छर द्वारा फैलाया जाता है।

'मिलड्यू'—इसमें पत्ते भूरे होकर मुर्झा के गिरने लगते हैं।

'ब्लाईट'—इसमें पत्तों पर भूरे धब्बे हो जाते हैं और बाद में वे काले होकर मुर्झा जाते हैं।

'मिलड्यू' और 'ब्लाईट' के लिए बोर्डो मिक्सचर का छिड़काव उत्तम होता है।

उपर्युक्त साधारणत: होने वाली व्याधियां फफूंद वर्ग की हैं।

बेक्टीरिया द्वारा होने वाली व्याधियां भी कुछ हैं; परंतु इनमें से आलू में होने वाली कुछ विशेष हानि करती है। इसका नाम है 'रिंग डिसीज़'। जब आलू को काटा जाय तो उसमें लाल रंग का चक्कर दिखलाई देता है। वैसे बोते समय आलू काट कर देख लेना चाहिए और व्याधि वाले नहीं बोने चाहिए।

फूलों की व्याधियां—व्याधियां फलों में भी होती हैं, परन्तु अधिकतर पेड़ों पर कम होती हैं। पके हुए फलों में गोदामों में उन्हें अधिक दिनों तक रखने से हो जाती है। चूंकि वे पेड़ों पर बहुत अधिक नहीं होती अत: यहां पर विषय बढ़ाना उचित नहीं जंचता। यदि कोई व्याधि हानिकारी दिखलाई दे तो कृषि-विभाग वालों की सलाह से काम लेना चाहिए।

व्याधियों की कुछ औषधियां —

'बोर्डो मिक्सचर'—एक लकड़ी या मिट्टी के बर्तन में बीस सेर पानी भरकर उसमें आधा सेर तूतिया (Copper sulphate) एक कपड़े में बांध कर डाल दो ताकि वह धीरे-धीरे घुल कर जल में मिल जाय।

एक दूसरे बर्तन में लगभग पांच छटांक चूना लेकर उसे पानी में बुझाकर गाढ़ा घोल कर लो। फिर घोल को भी बीस सेर बना कर दोनों का मिश्रण कर लो। इस मिश्रण में फिर लोहे की पत्ती या चाकू डाल कर देखो। यदि उसपर तांबा जम जाय तो उसमें चूना और मिलाते जाओ जबतक कि तांबा जमना बन्द हो जाय। ऐसा घोल पिचकारी या 'स्प्रेअर' द्वारा छिड़का जा सकता है।

फफूंद द्वारा पत्ते पर या पौधों पर होने वाली व्याधियों के लिए गंधक-चूने का घोल भी उत्तम होता है। एक छटांक चूना और एक छटांक गंधक का गाढ़ा घोल बनाकर उसे ढाई सेर पानी में डालकर खूब हिलाओ। स्प्रेअर या पिचकारी द्वारा यह औषधि छिड़की जा सकती है।

पारे का नमक (Mercuric chloride)—एक मन पानी में आधी छटांक औषधि डाल कर घोल बना लेना चाहिए। कटे हुए आलू इसमें डुबोकर बोने मे वे सड़ने नहीं पाते। यह औषधि बीज को जन्तुरहित करने में भी काम की है; परन्तु जहरीली होती है सो हाथ से नहीं छूना चाहिए। इसे धातु के बर्तन में भी नहीं बनाना चाहिए।

१९. फसल की तैयारी

बीजवाली फसलें पूर्ण पकने और सूख जाने पर, सागभाजी, तरकारी के योग्य होने पर; फल अधिकांश पकने पर और गन्ने जैसी फसल में रस तथा चीनी की मात्रा अधिक हो जाने पर ही काटी जाती है या उठाई जाती है।

फसलों को उठाने और उपयोग में लाने के लिए छोटे-मोटे यन्त्रों तथा मजदूरों की आवश्यकता होती है।

इन यन्त्रों में सबसे प्रधान हंसुआ है, जिसे हंसिया व दरांती भी कहते हैं। अधिकांश सूखी हुई फसलें इसी से काटी जाती हैं। बहुत अधिक क्षेत्र-फल होने से कुछ फसलों के लिए विशेषतः चरी वगैरह के लिए बैलों द्वारा चलने वाली 'रीपर' नाम की कल काम में लाई जाती है। जहां और भी अधिक क्षेत्रफल हो और ट्रैक्टर हों तो बड़ी काटने वाली कलें, जिनसे कट कर पूले तक आपसे आप बंध जाते हैं काम में लाई जाती हैं। जहां मजदूरों का बहुत अभाव हो, वहां गेहूं जैसी फसल काटने के लिए ऐसी भी कल होती है कि जिसके एक मुंह पर गेहूं कटता है—उसी में उसकी गहाई और उड़ावन भी हो जाती है और साफ गेहूं बोरों में भरते जाते हैं। उन्हें सिर्फ सीना पड़ता है। ऐसी कलों से भूसा, ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ती जाती है खेतों में पीछे गिरता जाता है।

खोदने वाली फसलों के लिए खुर्पी विशेष उपयोगी है। अधिक गहरा खोदना हो तो कोदाल (फावड़ा) काम में लाया जाता है। मूंगफली, शकर-कन्द जैसी फसल के लिए हल चला कर भी काम लिया जाता है। साधारणतः सागभाजी की फसलों के उपयोगी अंग हाथ से ही तोड़े जाते हैं। फल भी हाथ से तोड़े जाते हैं। पतली टहनियों पर से सींकी से उतारा जाता है।

काटने के पश्चात अनाज की फसलें खलियान में तैयार की जाती हैं। अधिकांश का दाना-भूसा बैलों के पांव तले कुचलवा कर पृथक किया जाता है। बाद में हवा में उड़ाकर साफ कर लेते हैं। हवा के अभाव में उड़ाने वाली कल (winnower) भी अच्छी उपयोगी होगी।

डेढ़ अश्वबल की शक्ति से चलने वाली ऐसी कल भी होती है, जिससे ८ घंटे में २२ मन गेहूं की गहाई और उड़ाई का काम हो जाता है।

चित्र नं० ३२
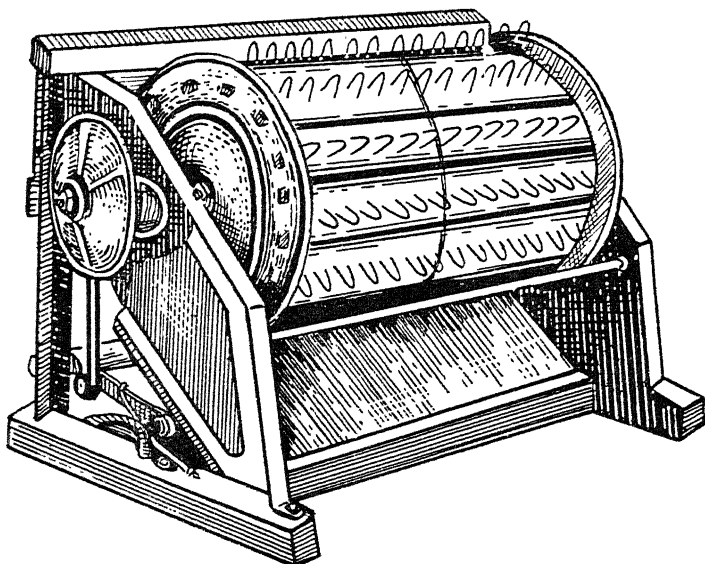
अधिक अनाज हो तो 'थ्रेशर और विनोअर' नाम की कल भी ट्रेक्टरों से चला कर काम में लाते हैं। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, कलें ऐसी भी होती हैं, जो खेतों में चलते-चलते ही सब काम कर देती हैं।

कुछ फसलों के बीज डंडों से पीट कर अलग किये जाते हैं जैसा कि मक्का या रहर में होता है। धान अधिकतर बैलों द्वारा गहाई से, और नहीं तो तख्ते पर पीट कर अथवा पैरों से कुचल कर छुड़ाते हैं। धान छुड़ाने के लिए चित्र में दी हुई कल भी काम में आती है, जो पैर से चलती है। तिल-जैसी फसल के फल फट जाते हैं, सो सारे पिंडी को उलट कर धीरे-धीरे पतले डंड़े से पीटने से वे नीचे गिर जाते हैं। कपास को वैसे ही चुनना होता है। तागे वाली फसलें जैसे सन, पटुआ के सूखे पौधों को पानी में गला कर ही तागे छुड़ाना होता है।

फसल की कटाई में मजदूरों की आवश्यकता का व्यौरा

नाम फसल	कार्य	पुरुष स्त्री	बैल जोड़ी	एकड़ प्रतिदिन
गेहूं, जौ, जई	काटना और इकट्ठे करना	५-६ या ८-१०		१
मक्का या ज्वार	,,	३-४ या ५-६		१
चरी (रीपर से)	,,	२-३ और ५-६	२	६-७
बाजरा	,,	६-७ या १०-१२	—	१
धान, रागी (मडुवा) या छोटे धान	,,	३-४ या ६-७	—	१
रहर या तूर		३-४ या ६-७	—	१
मसूर, मूंग, उड़िद मोथमटर, कुल,	,,	३-४ या ६-७	—	१
खिसारी, सोम सायबीन	,,	६-७ या ८-१०	—	१

चवली चना	,,	५-६ या ८-१०	—	१
अलसी (तीसी)	,,	४-५ या ७-८	—	१
कुसूम	,,	५-६ या ८-१०	—	१
तिल, रामतिली	,,	६-७ या ८-१०	—	१
सरसों		६-७ या ८-१०	—	१
मूंगफली	खोदना और	१०-१२ और	—	१
	चुनना	२५-३०	—	१
कपास	चुनना (बहुधा ठेके से चुना जाता है और तीन बार चुनना होता है)	— २०-२५	—	१
सन, पाट	काटना और इकट्ठा करना	८-१०या १०-१२	—	१
तम्बाकू	,,	३-४ और ७-८	—	१
गन्ना	काटना	२५-३० - -	—	१
साग-भाजी				
आलू, अर्बी, रतालू, कच्चू, हल्दी, अदरक	खोदना और इकट्ठे करना	२०-२२ या २५-३०	—	१
शकरकन्द	—	१५-१६ और २०-२५	—	१
		१ या २०-२५	१	१
प्याज	उखाड़ना पत्ते काटना	२०-२२ या २५-३०		१

अन्य तरकारियां
बहुत-सी तो ज्यों-
ज्यों तैयार होती
जाती हैं, तोड़
ली जाती हैं

खलिहान में—फसल काटने के बाद खलिहान में लाई जाती है और वहां पर बैलों के पांव तले गहाई की क्रिया होती है अथवा दूसरी रीतियों से फसल तैयार करते हैं। बहुत से स्थानों में ऐसी रीति है कि ज्वार, बाजरा, मक्का इत्यादि के बाल खेतों में पहले तोड़ लिये या काट लिये जाते हैं और बाद में कड़बी काट लेते हैं। कुछ स्थानों में ऐसा होता है कि भुट्टे सहित फसल काट ली जाती है और फिर खलिहान में भुट्टे छुड़ाये जाते हैं। गहाई के स्थान में चारों ओर मजदूर हंसुवा लेकर बैठ जाते हैं। एक या दो पुरुष उनके सामने पिंडियां लाकर डालता जाता है और वे काटकर खलिहान में फेंकते रहते हैं। जब सब बाल कट जाते हैं तो फिर कड़बी का पूला बांध कर एक ओर जमा दिया जाता है। भुट्टे तोड़ने या काटने की क्रिया को 'बेड़ना' भी कहते हैं। 'बेड़ने' के पश्चात बैलों को गोल चक्कर में घुमाते हैं, जबतक कि दाना नहीं छूट जाता। इसके बाद उड़ा कर दाना-भूसा अलग किया जाता है। गेहूं, जौ, जई, धान, चना इत्यादि में 'बेड़ने' की क्रिया नहीं होती। समूचे पूले ही खलिहान में फैला दिये जाते हैं।

खलिहान में मनुष्य तथा पशु-शक्ति की आवश्यकता—

फसल	कार्य	पु.	स्त्री	बैल जोड़ी	
ज्वार, बाजरा	वाल काटना	१	५-६		दो एकड़
	और गाहना	२	—	४	की उपज
गेहूं, जौ[1],	,,	२	—	८	,,

१. गेहूं, जौ की गहाई दोपहर के बाद करते हैं ताकि वे सूख जायं और भसा जल्दी टूट जाये।

फसल	कार्य	पुरुष	स्त्री	वैल जोड़ी	दो एकड़ की उपज
जई	,,	१	—	४	
धान, रागी[1]	,,	२	—	८	,,
छोटे धान	,,	१	—	४	,,
चना	,,	१	—	४	,,
मसूर, मूंग, उड़द[2] सायबीन, मटर					
चंवली, सेम	,,	१	—	४	,,
तीसी, अलसी	,,	१		४	तीन एकड़ की उपज
तिल्ली[3]	बीज गिराना	४ या ६			प्रति एकड़
कुसूम	पीटना	५-६ या ८-१०			,,

उड़ावन—गहाई के बाद दाना-भूसा पृथक्-पृथक् किया जाता है, थोड़ी फसल सूप से और अधिक के लिए प्राकृतिक वायु अथवा कलों द्वारा यह काम करना होता है। हवा में उड़ाने के लिए यदि हवा काफी रही तो जमीन पर खड़े-खड़े ही टोकरियों में भर कर अनाज गिराया जाता है, जिसमें दाना भारी होने से नीचे गिर जाता है और भूसा कुछ दूर उड़ जाता है। अनाज की ढेरी पर जो कुड़ा गिरता है, उसे रहर के डंठल झाड़ू से बुहार देते हैं। हवा कम होती है तो तिपाई पर चढ़कर दाना गिराते हैं। यदि हवा अच्छी रही तो एक दिन में गेहूं-जैसी फसल का ४०-५० मन अनाज साफ किया जा सकता है। इस कार्य के लिए एक व्यक्ति टोकरी भरने वाला, एक गिराने वाला और एक अनाज पर जो कूड़ा-कर्कट गिरता है, उसे बुहार निकालने वाला—ऐसे तीन व्यक्ति लगते हैं।

१. धान—इसको विशेष सूखने नहीं देते बल्कि कहीं-कहीं विशेष सूख जाय तो पानी छींटते हैं।

२. बहुधा पीटकर ही छुड़ा लेते हैं क्योंकि क्षेत्रफल कम ही होता है।

३. पिंडियां उलट कर हलके डण्डों से पीटी जाती हैं।

यदि यह कार्य उड़ाने वाली कल से, जो मजदूरों से चलायी जाती है, किया जाय तो ८० मन माल तैयार हो जायगा। ऐसी कल में अनाज छन भी जाता है और साफ हो जाता है।
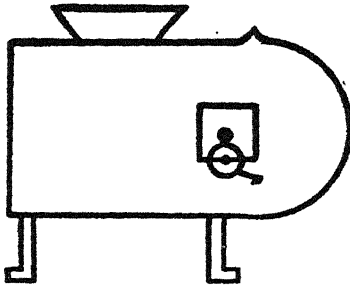
चित्र नं० ३३—उड़ावन की कल
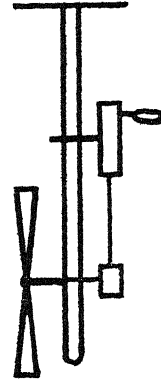
चित्र नं० ३४—उड़ावन का पंखा

यदि इंजिन द्वारा चलने वाली कल जिसमें गहाई और उड़ावन दोनों कार्य होते हैं का प्रयोग हो तो उसकी योग्यतानुसार प्रति घंटा २५-३० मन अनाज मिल जाता है।

धान से चावल निकालना—एक स्त्री एक दिन में पन्द्रह सेर धान कूट सकती है। यदि दो हुई तो एक मन तक कूटा जा सकता है। ढ़ेकुली काम में लाई जाय तो दो मजदूर मिल कर तीन-चार मन कूट देंगे। कहीं-कहीं चक्की भी काम में लाई जाती है, जिसके लिए ऊपर का पाट मिटी के भूसे के मिश्रण का होता है। धान से चावल निकालने के छोटे-बड़े कारखाने भी होते हैं, जिन्हें 'राईस मिल्स' कहते हैं।

२० वितरण और व्यवसाय

कृषकों के कड़े परिश्रम से उपजाई हुई वस्तुओं का वितरण और व्यवसाय कैसे होता है, इसका संक्षिप्त वर्णन फसलों के वर्णन में दिया गया है। यहां पर यह बतला देना उचित होगा कि बीज से उपजाई जाने वाली

फसलों के उपज का कुछ भाग बोने के लिए रखना पड़ता है और शेष दूसरे कामों में आता है ।

व्यवसाय को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं :

(१) ऐसी वस्तुओं का व्यवसाय, जो सूखी हों, सम्हाल कर आसानी से रखी जा सकें और चाहे जब बेच सकें या काम में लायं जैसे धान्य, कपास इत्यादि ।

(२) ऐसी वस्तुएं, जिनका उपयोग ताजी स्थिति में ही होता हो, जैसे साग-भाजी और फल ।

पहली प्रकार की वस्तुएं कृपकों से ग्रामीण व्यवसायी, उनसे नगर वाले, उनसे बड़ी मंडी वाले और उनसे निर्यात-कर्त्ता मोल लेते हैं और अपना-अपना नफा चढ़ाते रहते हैं। जो माल बाहर नहीं जाता, उसकी धारा मंडी वाले व्यापारियों के यहां से फिर उलटी बहती है और उपयोग-कर्त्ता के पास कई व्यापारियों द्वारा जाता है। उत्पादन-कर्त्ता से उपयोग-कर्त्ता तक भांति-भांति की वस्तुओं पर जितने मध्यस्थ होंगे, उतना मूल्य बढ़ता ही जायगा। अब कुछ बड़े-बड़े कृषक स्वयं मंडी तक ले जाते हैं और उन्हें विशेष लाभ होता है । वरना छोटे-छोटे कृषकों को तो उपयोग-कर्त्ता जो मूल्य देते हैं, उसका ७० से ८० शतांश तक ही मिलता है। शेष मध्यस्थ ही ले लेते हैं। जहां तक तैयार माल का संबंध है जैसे रूई से कपड़ा या गन्ने से चीनी, वहां तो उन्हें बहुत ही कम मिलता है ।

जो माल मंडियों में जाता है, उसपर कृषकों को बहुत से कर अथवा मेहन्ताना देना पड़ता है जैसे चुंगी, तुलाई, पल्ले-भराई, हम्माली, चौकी-दारी, मेहतर (मंडी झाड़ने वाले), पक्के आढ़तियों के रसोई वाले, पानी वाली इत्यादि इनके सिवाय चुकारा तुरन्त लेना हो तो आढ़तिये उसपर अपना ब्याज चढ़ा देते हैं। हिसाब के समय धर्मादा, गौशाला, मन्दिर इत्यादि का खर्चा पड़ जाता है। ऐसी देन वस्तु तथा नाणे के रूप में होती है ।

दूसरे प्रकार के माल, सब्जी, फल इत्यादि की बिक्री चार प्रकार से होती है।

(१) खेतों या बगीचों की फसल बेचना।

(२) अपनी ओर से माल बाज़ार भेजकर थोकबन्द व्यापारी के हाथ बेचना।

(३) स्वयं अपनी दूकान खोलकर अपने आदमी द्वारा बिकवाना।

(४) सहकारी मंडल, जिसके सदस्य स्वयं भी हों, उसके द्वारा बेचना।

पहली रीति से बेचने में आय तो कुछ कम होती है; परन्तु रखवाली, छंटनी तथा बाजार तक माल भेजने की झंझट से बचाव हो जाता है।

दूसरी रीति से बेचने में साग-भाजी या फल ऐसी स्थिति में और ऐसी रीति से भेजना पड़ते हैं कि उनका रूप-रंग और आकार उत्तम बना रहे।

तीसरी रीति काम में लाई जाय तो परिश्रम विशेष करना पड़ता है। तरकारी या फलों की भिन्न श्रेणियां बनानी पड़ती हैं। उनको दूकानों में सजाने की ओर ध्यान रखना पड़ता है और बेचने वाला व्यक्ति भरोसे वाला, व्यवहार-कुशल, मधुरभाषी रखना होता है ताकि ग्राहकों को अपने व्यवहार से मोह कर माल उनके हाथ बेच ही ले।

चौथी रीति से बेचने में लाभ अधिक होता है, क्योंकि भाव ठीक बना रहता है। चढ़ा-ऊपरी नहीं होने से यथार्थ मूल्य प्राप्त हो जाता है। यदि माल बाहर भेजना हुआ तो उसको पैक करने तथा भेजने की विशेष सुविधा हो जाती है।

उपयोग और गुण

फसलों के विभिन्न भागों का कैसा उपयोग होता या हो सकता है इसपर भी फसलों के साथ-ही-साथ प्रकाश डाला गया है। गुण में वैद्यक गुणों के सिवाय पौधों के विशेप उपयोगी अंगों का विश्लेषण[1] पोषक पदार्थ के नाम से दिया गया है।

---

१. एकरायड (Aykroyd W. R. 1941) **महोदय के स्वास्थ्य बुलेटिन नं. २३ के आधार पर।**

दूसरा खण्ड

विभिन्न फसलों की खेती

१—अन्नों की खेती

(१) गेहूँ Wheat *Triticum-Varieties*

गेहूं का पौधा बरानी खेती में भूमि की उर्वरा-शक्ति के अनुसार दो-ढाई फुट से लेकर तीन-चार फुट तथा सिंचाई वाले खेतों में पांच फुट और उससे अधिक ऊंचा भी हो जाता है।

वैज्ञानिक मतानुसार गेहूं 'बलगारी' और 'ड्यूरम' ऐसी दो मुख्य जाति के हैं। 'बलगारी' से 'ड्यूरम' का बीज बड़ा और भारी होता है। इनमें आमिषजातीय पदार्थ की मात्रा भी कुछ विशेष होती है। उपर्युक्त दो वर्गों के सिवाय 'ट्रिटिकम डायकोकम' नाम का एक वर्ग और भी है जिसके गेहूं खापली कहे जाते हैं। ये बम्बई की तरफ होते हैं।

भारत में होने वाले गेहूं के व्यावसायिक नाम—

'बलगारी सफेद'—सफेद फारम (फार्म के) शरबती (शरबती रंग के समान दाने वाले) दर्रा–(मिश्रित तथा कुछ टूटे गेहूं मिले हुए) सफेद पिस्सी (उत्तर प्रदेश के पूर्वीय भाग में तथा मध्य प्रान्त में ऐसे गेहूं होते हैं), पूसा (पूसा के बीज से उपजाये हुए साफ-सुथरे) चन्दौसी, कलकत्ते में अच्छे सफेद गेहूं चन्दौसी के नाम से कहे जाते हैं।

'बलगारी लाल'—लाल कनक—कनक शब्द पंजाब की तरफ गेहूं के लिए आता है। लाल रंग के गेहूं को लाल कनक कहते हैं। उत्तर प्रदेश में लाल पिस्सी भी होते हैं।

'ड्यूरम'—ये गेहूं अधिक ताकतवर होते हैं। इनकी रोटी बड़ी स्वादिष्ट होती है। इनसे सूजी और सेवैयां भी अच्छी बनती हैं। ये सूखे वाता-

वरण वाली भूमि में अच्छे होते हैं। अधिक तरी वाली भूमि में बोये जायं तो ये गुण नहीं रहते। मध्यप्रदेश, हैदराबाद और बम्बई प्रान्त की काली मिट्टी इनके लिए अच्छी है।

बंसी—मोटा कठोर दाने वाला चमकीला।

जलालिया—बंसी जैसा परन्तु कुछ पीले रंग का।

खंडवा—खण्डवे के निकट का।

मालवी—इसे एकदानिया भी कहते हैं। मालवे के होने से मालवीय नाम पड़ गया।

डायकोकम—छोटा पतला, लाल दाने वाला।

जलवायु—पच्चीस इंच से कम वर्षा वाले स्थान में विना सिंचाई के गहूं अच्छे नहीं होंगे। इनके पकते समय यदि गरम हवा चल जाय तो दाना ठीक नहीं बैठता। वह पतला रह जाता है इसलिए जहां गरम हवा मार्च से ही चलनी शुरू हो जाय जैसे मध्य प्रदेश या बम्बई की तरफ होता है तो वहां जल्दी पकने वाली जाति के गेहूं बोने चाहिएं।

भूमि और जुताई—इनके लिए मटियार-दुमट भूमि अच्छी होती है। जुताई जितनी अधिक की जाय लाभ ही होगा। कम-से-कम दो बार हल और दो बार बखर तो अवश्य चलना चाहिए। जहां एक ही फसल ली जाती है वहां बरसात में खेतों में घासपात न जमे इसलिए आवश्यकतानुसार जुताई करते रहना चाहिए।

गेहूं में खाद्य पदार्थः—	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
बीज	१०	१.९३%	०.८३%	०.५४%
भूसा	१०	०.५१%	०.२३%	०.६६%

खाद—गेहूं के बीज में नाइट्रोजन की मात्रा १.५% से लेकर दो-ढाई शतांश तक जाति अनुसार हो सकती है। खापली में तो ३ शतांश तक भी नाइट्रोजन मिलती है। लेखक को अपने प्रयोगों में १.५४% से २.१४% तक नाइट्रोजन बीज में और ०.२९% से लेकर ०.८२% तक भूसे में मिली। औसत मात्रा १.९% बीज में और ०.५% भूसे में मानकर खाद्य

की मांग की गणना करनी चाहिए। उपज को उपर्युक्त मात्रा से गुणा करके सौ से भाग दे दिया जाय तो मात्रा प्रति एकड़ निकल आयगी। उपज सेर या पौ० में होगी तो नाइट्रोजन की मात्रा भी सेर या पौ० में होगी। यदि कृत्रिम खाद देना हो तो उपर्युक्त गणना द्वारा आई हुई मात्रा पहुंचानी चाहिए। गोबर जैसा खाद देना हो तो इतना देना चाहिए कि नाइट्रोजन की मात्रा दूनी हो जाय। इसी भांति फासफोरस की गणना ०.८५% बीज में और .१२% भूसे में मान कर करनी चाहिए।

चूंकि उपज पृथक-पृथक स्थानों में पृथक-पृथक होती है और सिंचाई तथा खाद से उपज में काफी बढ़ती हो जाती है इसलिए अपने-अपने यहां के अनुमान पर गणना कर लेनी चाहिए।

यदि गेहूं की उपज १५ मन और भूसे की २७ मन प्रति एकड़ मान लें और नाइट्रोजन की मात्रा मोटे तौर पर २% दाने में और ०.५ शतांश भूसे में मान कर गणना करें तो हमें लगभग १५ सेर नाइट्रोजन चाहिए। खाद के स्तम्भ में दिये हुए वर्णन का विचार रखते हुए हम देखें तो हमें १७५ मन गोबर का खाद या साढ़े आठ मन खली का या डेढ़ मन एमोनियम सलफेट देना होगा।

फासफोरस की गणना द्वारा जितना निकले उससे लगभग तिगना फासफोरस पहुंचे इतना देना होगा।

गेहूं के लिए जहां वर्षा ४० इंच से अधिक हो वहां सन का हरा खाद भी अच्छा सिद्ध होगा। इसलिए सन के बीज ३० सेर से ४० सेर प्रति एकड़ तक डालने चाहिएं। जहां वर्षा ४० से कम हो ग्वार के बीज २० सेर प्रति एकड़ बोकर उसका खाद देना भी अच्छा होगा। ऐसी फसल जब आठ सप्ताह की हो जाय तब गाढ़ देनी चाहिए।

जो कृषक नाइट्रोजन के रूप में खाद की गणना न कर सकें उन्हें ऐसा करना चाहिए कि प्रति मन उपज के लिए १० मन गोबर का खाद अथवा ५ शतांश नाइट्रोजन वाली खली आधा मन अथवा ५ सेर एमोनियम सलफेट देना चाहिए। नाइट्रोजन के खाद के साथ दो-ढाई मन सुपर-

फांसफेट या हड्डी का चूरा डालना भी उत्तम होगा।

इतना कह देना अनुचित्त नहीं होगा कि कम वर्षा वाले क्षेत्र में जहां सिंचाई का प्रवन्ध न हो अधिक खाद लाभप्रद नहीं होंगे। सिंचाई वाले क्षेत्रों में ही खाद का प्रयोग करना चाहिए।

हेरफेर—गेहूं के साथ दलहन की फसलों का हेरफेर उत्तम होता है। जहां दो फसलें ली जायं वहां पहली फसल को खूब खाद दे देना चाहिए ताकि गेहूं को नहीं देना पड़े। कपास जैसी गहरी जड़ वाली फसल के साथ भी हेरफेर अच्छा होता है—यदि मिश्रण बोना हो तो गेहूं-चना या गेहूं-मटर का बोना चाहिए।

बीज और बोआई—अधिकांश स्थानों में बीज नाई, तिफन या सीड़ ड्रिल से बोये जाते हैं। कुछ स्थानों में हल से चांस बना कर उनमें बीज गिरा देते हैं और कहीं-कहीं छींट कर भी बोते हैं। बीज की मात्रा जमीन की जाति, बोने की रीति तथा बोने के समय पर निर्भर है। कमजोर भूमि में अपेक्षाकृत बीज अधिक डालना होता है, क्योंकि ऐसी भूमि में बीज दौंजी कम फेंकते हैं। जहां छींट कर वोना होता है वहां भी कुछ अधिक ही गिराना होता है। उसी भांति जब भूमि में तरी कुछ कम हो तो वहां भी कुछ अधिक ही बोना होता है ताकि कुछ बीजों के न अंकुरने से जगह खाली न रह जाय। साधारणतः एक मन प्रति एकड़ के हिसाब से बोना अच्छा होता है, परन्तु पंजाब में बीस-पचीस सेर ही काफी माना जाता है। उत्तर प्रदेश में पश्चिम से पूर्व की ओर ज्यों-ज्यों बढ़ते जाते हैं पचीस-तीस सेर से लेकर डेढ़ मन तक भी बोते हैं। कतारों में बोया जाय तो कतारों का अन्तर ९ इंच का होना चाहिए।

बीज की कुछ चुनी हुई जातियां—

पंजाब—सी. ५१८ सिंचाई वाले खेतों में और ५९१ बरानी के लिए

उत्तर प्रदेश—पश्चिमीय भाग में सी.५१८, सी. ५९१, एन. पी. ७१०, एन. पी. १२५, पूर्वीय भाग में एन. पी. ५२, सी. १३

बिहार—एन. पी. ५२ और एन. पी. ७६०, ७६१

बंगाल—एन. पी. ४५२ और ७६० ।

बम्बई—निफाड़ ४ और नि:८१ और मोतिया बंसी १६८

मध्य प्रदेश— शरवती ११५, जबलपुर के हवेली[1] वाले खेतों में- ए. ०९०, एन. पी. ४,१२,५२ और सी. ५९१

मध्य भारत और राजस्थान[2]—एन. पी. ७१० और ७१८ सी ५९१, बंसी ११६

सौराष्ट्र—एन. पी. १६५ ।

इतना ध्यान रहे कि वैज्ञानिक नई-नई जातियां निकालते रहते हैं, इसलिए स्थानीय कृषि-विभाग वालों से पूछ कर बीज चुनना चाहिए । वैसे नई दिल्ली से एन. पी. ७१० अभी-अभी निकला है[2] । इसमें कायमें और हरदे से बचने की शक्ति अधिक है । यह गेहूं उत्तरप्रदेश, मध्य भारत, राजस्थान, हैदराबाद, गुजरात, सौराष्ट्र बिहार और बंगाल के लिए उत्तम सिद्ध हुआ है ।

बोने का समय—उत्तर भारत में ज्यों-ज्यों पूर्व से पश्चिम की ओर जाते हैं बोने का समय आगे-आगे बढ़ता जाता है । बिहार तथा उत्तर प्रदेश में आश्विन-कार्तिक में, तो पंजाब में मार्गशीर्ष तक भी बोते हैं । उधर बम्बई की तरफ आश्विन (सितंबर-अक्तूबर) में ही बोने का काम समाप्त हो जाता है । असली अभिप्राय यह है कि कुछ सर्दी गिरना शुरू हो जाय तब बोना चाहिए । जल्दी बोने से पौधे लम्बे और पतले रह जाते हैं ।

निदाई, निराई या सोहनी—बरानी खेतों में बहुधा नहीं करनी पड़ती । सिंचाई वाले खेतों में एक-दो बार करना होगी । कभी-कभी अधिक

---

१. खेतों को बांध कर बरसात का पानी रोक लिया जाता है और बाद में उसे निकाल कर गेहूं बोते हैं ।

२. भटनागर महोदय लिखते हैं कि हरदे वाले सालों में एन. पी. ७१० और ७१८ स्थानीय गेहूं से अच्छी उपज देते हैं । Indian Farming Vol. 2, No. 2, p. 27, 1953.

उपजाऊ भूमि में या अधिक खाद से पत्ते बड़े-बड़े हो जाते हैं जिससे पौधों के गिरने का भय रहता है। ऐसी स्थिति में कुछ पौधे ऊपर से काट देने चाहिए। जब बाल निकलने लगें तब दूसरी जाति के गेहूं के अथवा दूसरे पौधे हों तो उन्हें और व्याधिग्रस्त पौधों को उखाड़ देना चाहिए।

सिंचाई—जहां बीस इंच से कम वर्षा हो वहां दो-तीन सिंचाई में कुल मिला कर करीब नौ-दस इंच पानी पहुंच जाय तो अच्छा है। पचास-साठ इंच वर्षा वाले स्थानों में सिंचाई से विशेष लाभ नहीं होगा। बीच के वर्षा वाले स्थानों में एक-दो सिंचाई लाभप्रद होगी।

कीट—प्रारम्भ में दीमक बहुत हानि पहुंचाती है। यदि विशेष हानि कहीं दिखाई दे तो पांच सेर डो. डी. टी. पहुंचे इतना इसका चूर्ण प्रति एकड़ के हिसाब से मिट्टी में मिला देना चाहिए। वैसे सिंचाई से भी दीमक से रक्षा हो सकती है। गोदाम में हानि पहुंचाने वाले कीट का वर्णन (पृष्ठ ११९) में देखिए।

फसल की तैयारी और उपज—गेहूं सुबह के समय काटना अच्छा होता है, क्योंकि दोपहर के बाद काटने से नमी कम हो जाती है और गेहूं झड़ते बहुत हैं। इसी कारण से बादलों वाला दिन भी काटने के लिए उत्तम होता है। गेहूं की कटाई दक्षिण भारत में माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) मध्य प्रदेश, मध्य भारत, बिहार तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वीय भागों में चैत्र (मार्च) से प्रारम्भ हो कर वैशाख (मध्य अप्रैल) तक चलती रहती है। पश्चिमीय उत्तर प्रदेश तथा पंजाब में ज्येष्ठ (मई) तक भी कटाई चलती रहती है। कांगड़ा की घाटी में ज्येष्ठ में बोकर आश्विन में काटते हैं।

फसल हसुंए से काटी जाती है। खेत समतल और क्षेत्रफल अधिक हो तो ट्रैक्टर और 'हारवेस्टर' नाम के यंत्र से भी काम लिया जा सकता है। परन्तु जहां पशुओं को भूसा खिलाने का प्रश्न हो, जिसके लिए उसके छोटे-छोटे टुकड़े करना होते हैं तो खलिहान में पशुओं से दौनी कराना ही उत्तम है। गेहूं के पूले बांधने के लिए कहीं-कहीं रस्सी तथा खजूर के खोड़े (पत्तेवाली

टहनी) चीर कर काम में लाते हैं। खलिहान में पूलों को सुखाने के पश्चात बैलों से दौनी करना होता है। आठ-दस बैल दोपहरी के बाद चलाने से दो एकड़ (तीस-चालीस मन) के गेहूं तैयार हो जाते हैं। बाद में हवा में या उड़ावन वाली कल से दाना-भूसा अलग कर लेते हैं। गेहूं के लिए अब तो ऐसी कलें भी निकल गई हैं जिनसे गेहूं खेतों में ही कट जाते हैं, साथ-ही-साथ उसी कल में दौनी और उड़ावन का काम भी होकर बोरे भर जाते हैं। ऐसी कलें एक घंटे में पचीस-तीस मन गेहूं तैयार कर देती हैं।

उपज—बरानी से औसत उपज १० मन और सिंचाई से १५ मन प्रति एकड़ मिल जाती है। वैसे कृषि-पंडितों ने खाद और सिंचाई के आधार पर साठ-सत्तर[1] मन तक भी पैदा की है। भूसे की उपज बरानी खेतों में बीज से ड्योढ़ी और सिंचाई वाले खेतों में पौने दो गुनी तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का लगभग बारह-तेरह शतांश भाग बीज के काम आता है, शेष खाने के काम आता है और वह भारत में ही खप जाता है। व्यवसाय देखा जाय तो साधारण मध्यम श्रेणी के व्यापारियों द्वारा बड़ी मंडियों में जाता है और वहां से फिर उपयोगकर्त्ता के पास पहुंचता है।

उपयोग और गुण—हरे पके गेहूं के बाल आग में भूंज कर खाये जाते हैं, सूखे गेहूं का दलिया, सूजी, आटा, मैदा मनुष्यों के खाने के काम में आता है। चोकड़ और भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। गेहूं शीतल, पुष्टिकारक, कफनाशक तथा दस्तावर होते हैं। नये गेहूं गरम और कफ-कारक होते हैं, इसलिए नये गेहूं जबतक दो-तीन महीने के न हो जायं तब-तक काम में नहीं लाने चाहिए। मधुमेह और वायु-विकार में चोकर की रोटी अच्छी मानी जाती है। लू लग जाने पर चोकर और घी पांव के तलवों में मला जाता है।

---

(१) **श्री गुरुदेवसिंह लुधियाना वाले ने ७१ मन गेहूं उपजाये और कृषि-पंडित की उपाधि पाई।** Supplement to Indian Farming, July, 1953.

गेहूँ के पोषक द्रव्य शतांश में

	जल	आमिष जातीय	स्निग्ध	सर्करायुक्त	केलशियम	फासफोरस	लोहा
आटा	१२.२	१२.१	१.७	७२.२	०.०४	०.३२	०.००७३
मैदा	१३.३	११.०	०.९	७४.१	०.०२	०.०८	.०००१

(२) धान, चावल, Paddy *Oryza sativa*

धान को कूट कर छिलका हटा देने से चावल प्राप्त होते हैं।

भारतवर्ष में धान की खेती का महत्व विशेष है। गेहूं की खेती से धान की खेती का क्षेत्रफल तिगुना और उपज चौगुनी है। धान का पौधा गेहूं के पौधे जैसा ही होता है। बाल निकलने पर उनकी कई शाखाएं निकलती हैं, जिन पर धान के कण चिपके रहते हैं। पौधों की ऊंचाई दो फुट से लेकर आठ-दस फुट तक की होती है। सबसे ऊंचे पौधे 'बोरो' धान के होते हैं जो गहरे पानी में होते हैं। ज्यों-ज्यों पानी बढ़ता है पौधे भी बढ़ते जाते हैं।

जलवायु—धान के लिए पानी जितना मिल सके अच्छा है; परन्तु पौधों को धूप भी साथ-साथ मिलनी चाहिए। बिना सिंचाई के सब धान उन स्थानों में हो जाते हैं जहां वर्षा ६० इंच से अधिक हो। ४० से ६० इंच वाले स्थानों में कुछ जातियां होती हैं। मोटे चावल वाला धान २५ से ४० इंच वाले स्थानों और २५ से कम वाले स्थानों में तो धान बिना सिंचाई के होगा ही नहीं। सिंचाई भी नहर की होनी चाहिए।

भूमि और जुताई—धान की इतनी जातियां हैं कि ढूंढ़ने से प्रत्येक प्रकार की भूमि के लिए मिल जाती है। लेकिन अच्छे पतले चावलों के लिए मटियार-दुमट भूमि अच्छी होती है। जिस ऊसर भूमि में दूसरी फसलें नहीं हो सकतीं, उनमें होने वाली धान की जाति मिल जाती है। बरसात आने से पहले खेतों को जोत कर खाद दे देना चाहिए। जिन खेतों में रोप लगाये जाते हैं उन खेतों की पानी भरी गीली मिट्टी में भी हल चलाना पड़ता है।

खाद और हेरफेर—धान में खाली नाइट्रोजन के खाद अधिक नहीं देने चाहिएं। यदि ऐसा किया जायगा तो दाना कम बैठेगा और पुआल

अधिक हो जायगा। प्रत्येक १ मन धान की उपज के लिए लगभग ८ मन गोबर का खाद या १६ सेर खली या ४ सेर एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

धान के लिए हरा खाद भी अच्छा होगा। जहां साठ इंच से अधिक वर्षा हो वहां ढेञ्चा और साठ से कम वालों में सन का खाद ठीक होगा। इसके लिए मई में हरे खाद के बीज बोकर आषाढ़ (जून) के अन्त में गाढ़ देना चाहिए। इसकी सफलता वहीं होगी, जहां वर्षा जल्दी शुरू हो जाती है अथवा सिंचाई से खाद उपजाया जाय। ढेंचे की कभी-कभी इतनी बाढ़ हो जाती है कि एक एकड़ की उपज से दो एकड़ को खाद दे सकते हैं। मद्रास की तरफ पेड़ों के हरे पत्ते भी खाद के काम में लाये जाते हैं

धान में खाद्य पदार्थ—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
धान	१२.६५%	१.०८%	०.५४%	०.२५%
भूसा	९.०९%	०.५६%	०.२२%	२.५०%

फासफोरस के खाद के लिए सूपर फासफेट और हड्डी का चूरा दोनों उत्तम हैं। अम्लदार भूमि में हड्डी का चूरा और दूसरी में सूपर फासफेट लगभग २० सेर फासफोरस पहुंचे इतना खाद चाहिए।

हेरफेर—जिन खेतों में तरी अच्छी हो धान की फसल के बाद जल्दी होने वाली मूंग, मसूर, चना, मटर इत्यादि दलहन की फसलें ले लेनी चाहिए। मिश्रण—कहीं मक्का के साथ भी मोटे चावल वाला धान बो दिया जाता है।

बीज और बोआई—धान के नम्बरी बीज कृषि-विभाग की सम्मति से चुनने चाहिए। वैसे कुछ मुख्य जातियों के नंबर यहां दिये जाते हैं।

आसाम—न. १०८१, के एम. जे. ए. ३ ए. एस. २४/१

बंगाल—बांकुड़ा न. १ चिनसुरा १ और २

बिहार—वी. के. ११५ जल्दी पकने वाली नं. ८८ और १६ दूसरी श्रेणी नं. ७६ और ३६

उत्तर प्रदेश—टी. ४३ सीकं वाली, पश्चिमीय तथा मध्य भाग टी. १२, २१, २२, १७, १९ पूर्वीय भाग ए ६४ और १३६

मध्यप्रदेश—आर. १०, आर ११ (रूपराज) आर १२ (बासपतरी) आर १५ चिनूर आर. १४ बादशाहभोग

उड़ीसा—कुजगं १२६, वी. डी. १, बेहरामपुर न ९, ४०, ४४, ४८

मद्रास—ए. डी. टी. ३,४,९, १९, सीओ, १५ जी ईवी २४ एम. टी. यू. ७, ८, ११, १२, १३,

बंबई—महीन-के ५४०, के २२, जिनिया १४९ मध्य श्रेणी भाऊस ७९, मुराध १४१, उन्तरसाल २००, दोड़ग्या १२२, हडुग २४४ मोटा पानवेल ६१, पणी ६

पंजाब-झोना ३४९ बासमती ३७० मुश्कान न ७

बीज की मात्रा—छींट कर बोने में पंजाब में लगभग १० सेर, आसाम और उत्तर प्रदेश में लगभग ३० सेर और अन्य प्रांतों में ४० सेर से ५० सेर प्रति एकड़ छींटते हैं। कहीं हलके तीफन से भी बोते हैं, रोप लगाने में पौधों की संख्या प्रति स्थान पर लगाने की रीति के अनुसार मध्यप्रदेश और उड़ीसा में लगभग ४० सेर और अन्य प्रांतों में १० सेर से बीस सेर धान प्रति एकड़ के हिसाब से नर्सरी में गिराना होता है। पंजाब की तरफ पांच-छः सेर ही लगता है। रोप लगाने के लिए अच्छी उपजाऊ भूमि में लगभग आठ इंच और कमजोर में छः इंच की दूरी अच्छी होती है। जापानी पद्धति के अनुसार, जिसमें रोप १० इंच की दूरी पर लगाये जाते हैं और प्रत्येक स्थान पर दो-तीन पौधे लगाते हैं और चूंकि पौधों की देखभाल नर्सरी में अच्छी की जाती है जहां से स्वस्थ पौधे मिलते हैं तो लगभग आठ-दस सेर बीज काफी हो जाता है।

रोप तैयार करना—रोपने के समय से एक महीना पहले बीज नर्सरी में गिराना चाहिए, क्योंकि एक महीने की आयु के रोप अच्छे होते हैं। एक एकड़ के रोप के लिए उसका दसवां भाग नर्सरी के लिए रखना चाहिए। नर्सरी में खाद काफी देना चाहिए। बंबई की तरफ नर्सरी की भूमि पर

कुछ जलावन जला कर बाद में उससे नर्सरी बनाते हैं, जिसे 'राबिंग' कहते हैं । जापानी पद्धति के अनुसार नर्सरी निम्नलिखित रीति से बनानी चाहिए । नर्सरी चार फुट चौड़ी और तीन इंच ऊंची होनी चाहिए । एक एकड़ के लिए १।२० एकड़ नर्सरी चाहिए । ऐसी नर्सरी में दस सेर बीज बोना होंगे । नर्सरी में २० मन गोबर का खाद या काम्पोस्ट और १० सेर सुपर फासफेट और एमोनियम सलफेट का मिश्रण डालना चाहिए । बीज स्वस्थ और व्याधिरहित हो । नर्सरी में से घासपात निकालते रहना चाहिए । जब पौधे में छटा पत्ता आये तब पौधे उखाड़ने चाहिए ।

बोने तथा रोपने का समय—पहली फसल बरसात के प्रारंभ में बोई जाती है और बरसात के अन्त तक तैयार हो जाती है । दूसरी कुछ दिनों बाद बोई या रोपी जाती है और हेमन्त ऋतु (पौष-माघ) तक तैयार होती है और तीसरी गर्मी में तैयार होती है । बंगाल में पहली को ओस (आमू, जल्दी पकने वाली), दूसरी को आमन (हेमन्त का अपभ्रंश, और तीसरी बोरो कहते हैं । पहली वैशाख-जेठ में, दूसरी ज्येष्ठ-आषाढ़ में और तीसरी मार्गशीर्ष से माघ तक बोई जाती है । आसाम में ओस ऊंची भूमि में, सेल एक फुट पानी में और आसरा एक फुट से सात फुट गहरे पानी में होती है । उत्तर प्रदेश में ओस, आमन और बोरों को साठी, अगहनी और जेठी कहते हैं । मध्यप्रदेश में बोने या रोपने का समय तो करीब-करीब एक ही है; परन्तु जाति-अनुसार जल्दी पकने वाली 'हरई' बीच वाली मझोल और देरी वाली जेठी कहलाती है । दक्षिण भारत में बरसाती फसल आषाढ़-श्रावण में और गर्मी वाली पोष-माघ में बोते हैं या रोपते हैं ।

निंदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार होनी चाहिए ।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से जाति अनुसार ढाई-तीन महीने से लेकर अधिक पानी में होने वाली जाति को दस महीने लग जाते हैं । साधारणतः ओस तीन महीने में, आमन पांच महीने में और बोरो चार महीने में तैयार हो जाती है । बालियां निकलने के बाद से तीन-चार सप्ताह में धान पक जाता है । धान की कटाई अधिकांश स्थानों में ठेके से

होतीं हं। खलिहान में लाने के बाद जब समय मिले, गहाई कर सकते हैं। अन्य फसलों की भांति तुरन्त गहाई नहीं करनी पड़ती। कहीं-कहीं धान के पूलों को लकड़ी के तख्तों पर पीट कर छुड़ाते हैं तो कहीं-कहीं मजदूर पैरों से कुचल कर ही छुड़ा लेते हैं। कहीं-कहीं रोलर भी चलाते हैं तो कहीं बांसों के मचान पर लम्बा रस्सा बांध देते हैं जिसे पकड़ कर मजदूर खड़े होते हैं और पांव से कुचलते हैं तो बीज नीचे गिर जाता है और पुआल ऊपर रह जाता है। यदि हवा कुछ चलती रही तो धान का कूड़ा-कर्कट भी उड़ जाता है। साधारणतः जिनके पास बैल होते हैं वे बैलों के पैर से कुचल-वाकर गहाई करते हैं। इसके लिए छोटी-छोटी कलें भी होती हैं। धान के साथ थोड़ा भूसा आता है उसे हवा से उडा कर साफ कर लेते हैं। धान की उपज[1] बोरों से ओस और आमन की ओस से अधिक होती है। उत्तम भूमि में आवश्यकतानुसार जल मिल जाय तो बंगाल में आमन की उपज चालीस-पचास मन और ओस की पचीस-छब्बीस मन प्रति एकड़ हो जाती है। वैसे औसत उपज बंगाल में ओस और बोरों की पन्द्रह-सोलह मन और आमन की बीस मन तक ली जा सकती है। उत्तरप्रदेश में रोप वाले की पन्द्रह-बीस मन और छींटे हुए की दस-बारह मन हो जाती है। भूसे की उपज यदि धान अच्छा बैठ जाय तो उसमें बराबर हो जाती है और नहीं तो उससे दूनी तक हो जाती है। गहरे पानी में होने वाली धान के भूसे की उपज से कई गुना अधिक होती है और धान काटने के बाद वह भाग सड़ जाता है। ऐसी जगह में धान छोटी नावों में बैठकर भी काटा जाता है।

धान चावल का अनुपात—धान से लगभग ६० से ७० % तक चावल और शेष छिलका और भूसा निकल जाता है।

धान के बीज को सुरक्षित रखना—बीज के लिए जो धान रखा

---

[1] **सोमर पेर, कुर्ग में श्री जंगम्मा. सी सांगपा ने लगभग १३६ मन उपज धान की दिखलाई और कृषि-पंडित की उपाधि प्राप्त की।**

Indian Farming, July, 1953 Supplement.

जाता है, प्रायः सब प्रांतों में धान को पुआल के रस्से बना कर उसमें रखा जाता है। कहीं-कहीं मटकों में भी रखा जाता है; लेकिन पुआल में रखा हुआ धान अच्छे अंकुर फेंकता है। चावल बहुधा बोरों में रक्खे जाते हैं। गृहस्थ लोग राख में मिलाकर भी रख लेते हैं ताकि कीट न लगे।

वितरण और व्यवसाय—धान का लगभग नौ-दस शतांश भाग बीज के काम में आता है। शेष का चावल बनता है। चावल निकालने की कई रीतियां हैं। जो चावल धान को उबाल कर निकाला जाता है उसे उसना कहते हैं। जो वैसे ही कूट कर निकाला जाता है उसे सैला कहते हैं। धान से चावल मजदूर, ढ़ेकी या कलों से निकाला जाता है।

जो चावल ओखल, मूसल, ढ़ेकी या चक्की से छुड़ाया जाता है वह हाथ-छटा कहलाता है और जो कारखानों में कलों से छांटा जाता है वह कलछटा कहलाता है। कल से छांटने में कुछ खाद्योज नष्ट हो जाते हैं। स्वास्थ्य के लिए हाथछटा चावल उत्तम होता है। उबाले हुए धान से निकाले हुए धान में टूट कम होती है। चावल बाजार में कृषकों की स्त्रियां कूट कर लाती हैं और बेचकर आवश्यकीय पदार्थ ले जाती हैं। बड़े कार-खानों से बोरो में भेजा जाता है।

उपयोग और गुण—धान से चावल के सिवाय चिवड़ा, परमल, मुर्री और लाही ऐसे पदार्थ भी बनाते हैं। धान को ठंडे अथवा गरम पानी से कुचल करके छिलका निकाल दिया जाय तो चिवड़ा बन जाता है। मुर्री खास जाति के चावल की अच्छी बनती है। लाही धान को भून कर बनाई जाती है। चावल या उसके पदार्थ खाने के काम आते हैं। भूसा और पुआल पशुओं को खिलाया जाता है। चावल के भी कई पकवान बनते हैं। नये चावल से पुराने चावल अच्छे होते हैं। वैद्यक मतानुसार—जल्दी पकने वाले चावल हलके, चिकने और त्रिदोष-नाशक होते हैं। आमन बादी और कफकारक होते हैं; परन्तु बलदायक और स्वर को उत्तम करने वाले होते हैं। लाही और मुर्री वैसे ही खाई जाती है। चिवड़ा पानी में भिगो कर दूध-दही या चीनी के साथ खाया जाता है अथवा उससे आलू

के साथ नमकीन पदार्थ भी बनाते हैं जिसे 'आलू पोहा' कहते हैं। छिलका जलाने के काम आता है। एक खास रीति से जलाया जाय तो इसका कोयला बन जाता है जो ऊख का रस साफ करने के काम आता है।

चावल की कन्नी और भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। सर्दी के दिनों में गरीब लोग भूसा बिछाकर इससे गद्दे का काम लेते हैं। इससे चटाइयां और जूते के तले भी बनते हैं। काम्पोस्ट बना कर खाद का काम भी लेते हैं।

चावल के पोषक पदार्थ

	जल	आमिष जातीय	प्रतिशत स्नेह	केल-शियम	फास-फोरस	लोहा	खनिज
हाथ-छटा	१४·५	६·८	१·४	०·०१	०·२१	·००३६	१·१
कल-छटा	१४·४	०·७०	०·७	०·०१	०·१६	·००१९	०·८

चावल की खेती की जापानी रीति जिसका प्रचार हो रहा है।

नर्सरी—एक एकड़ के लिए $\frac{१}{२०}$ एकड़ तीन इंच ऊंची, चार फुट चौड़ी।

खाद—२० मन गोबर या काम्पोस्ट और १० सेर सूपर फास्फेट और एमोनियम सल्फेट का मिश्रण उपयुक्त नर्सरी में डालना चाहिए।

बीज—उपर्युक्त नर्सरी में दस सेर बीज डालना चाहिए, जिनसे एक एकड़ के लिए पौधे मिलेंगे। बीज को नमक के पानी में डाल दो। जो डूबें वे ही बोने चाहिए। बोने के पहले बीज को Perenox (पेरेनाक्स) औषधि के घोल में २० मि. तक रखना चाहिए। बीज गिराने के बाद उन्हें $\frac{१}{२}$ इंच मिट्टी के तह से ढक कर पानी आवश्यकतानुसार देना चाहिए और घासपात निकालते रहना चाहिए। जब पौधों में छः पत्ते आ जायं तो रोप ऊखाड़ना चाहिए।

खेत में २० गाड़ी गोबर का खाद या काम्पोस्ट और सवा मन सूपर फासफेट और सवा मन एमोनियम सलफेट प्रति एकड़ डालना चाहिए।

रोपना—प्रत्येक स्थान में तीन-चार से अधिक पौधे नहीं लगाना और उनमें १० इंच की दूरी होनी चाहिए।

रोपने के एक महीना बाद सवा मन सूपर फासफेट और सवा मन एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

घासपात बराबर निकालते रहना चाहिए।

(३) जई Oats *Avena sterilis*

इसका पौधा गेहूं जैसा होता है; परन्तु बाल में बीज झूमर जैसे लटके रहते हैं। ठंडे नमीवाले वातावरण में इसकी उपज अच्छी होती है।

जमीन और जुताई—दुमट और मटियार-दुमट मिट्टी में जौ के लिए जैसी जुताई की जाति है वैसी करनी चाहिए।

जई में खाद्य पदार्थ प्र. श.

	जलांश	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
बीज	१०·४३	१·३७	०·५४	·४०
भूसा	९·८८	०.४३	०·२८	१·६३

खाद—अच्छी उपज के लिए दो सौ मन गोबर का खाद अथवा दस मन खली या ढाई मन एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—जल्दी पकने वाली फसल के लिए एन. पी. नं. १ और देरी से पकने वाली के लिए ए. पी. नं. ३ उत्तम है। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सितंबर-अक्तूबर) है। लगभग बीस सेर बीज प्रति एकड़ बोने चाहिए। इसे छींट कर भी बो सकते हैं; परन्तु ९ इंच की दूरी पर कतारों में बोना अच्छा है। हेरफेर दलहन की फसल या कपास के साथ उत्तम होगा।

निदाई—आवश्यकता नहीं।

सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—चैत्र-वैशाख (मार्च-अप्रैल) तक हो जाती है। हरे चारे के लिए माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) से काम में

लाते हैं । बीज की उपज लगभग २० मन और उससे दूनी भूसे की हो जाती है ।

वितरण और व्यवसाय—अधिकतर हरी फसल काट कर घोड़ों को खिलाई जाती है । व्यवसाय जव-जैसा—

उपयोग और गुण—हरा चारा घोड़े और दूध देने वाले पशुओं के लिए उत्तम होता है । अंग्रेज लोग बीज से चिवड़ा जैसा पदार्थ (Quaker oats) बनाकर खाते हैं ।

(४) जौ, जव Barley *Hordeum valgare*

ये पौधा गेहूं जैसा है लेकिन उससे कम ऊंचा । बीज, बालों पर दो-चार या छः कतारों में होते हैं । दो कतार वाले जौ उत्तम होते हैं ।

जौ में खाद्य पदार्थ प्र. श.

	जल	नाइट्रोजन	फा. पो.	फो. आ.
बीज	१४·५१	१·६०	०·५६	०·२७
भूसा	१४·३	०·६४	०.१९	१·०७

परन्तु उपज दूसरों की अच्छी होती है ।

जलवायु—अपेक्षाकृत गेहूं से इसमें शीतोष्णता सहन करने की शक्ति अधिक होती है । पानी भी कम लगता है ।

भूमि, जुताई और खाद—गेहूं की भूमि जैसे मिले तो अच्छा होता है; लेकिन उससे हलकी में भी जौ हो जाते हैं । गेहूं की अपेक्षाकृत कुछ ऊसर भूमि में जौ अच्छे हो जाते हैं । जुताई गेहूं जैसी । लगभग पौने दो सौ मन गोबर का खाद अथवा नौ मन खली या दो मन एमोनियम सलफेट के देना चाहिए ।

बीज, बुआई, मिश्रण और हेरफेर—एन. पी. २१ बहुत अच्छी जाति है । टी ३५।८४ और ३५।८६ सिंचाई वाली भूमि में और ३५।४४ तथा ३४।२४ बरानी खेतों में बोना चाहिए । पंजाब में टी. ४ और टी ५ । लगभग ३० सेर बीज प्रति एकड़ छींट कर या कतारों में बोना चाहिए । कतारों में बोना अच्छा होता है । कतारों की दूरी नौ इंच की रखनी चाहिए । यह रबी की

फसल है। आश्विन-कार्तिक (सितंबर-अक्तूबर) में बोना चाहिए।

हेरफेर—गेहूं जैसा !

जव के साथ किराओं, सरसों या चना बोना उत्तम है।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। गेहूं की भांति इसके बीज झड़ते नहीं, इसलिए पूरी बाढ़ पाने पर दिन में दोपहर के बाद भी काट सकते हैं। बरानी में आठ-दस मन तथा सिंचाई वाली भूमि में चौदह-पन्द्रह मन तक उपज हो जाती है। भूसे की उपज ड्योढ़ी लेनी चाहिए।

वितरण और व्यवसाय—गेहूं के समान।

उपयोग और गुण—बीज से शराब बनाते हैं—आटे से मनुष्यों के लिए रोटियां भी बनती हैं। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। इसके आटे का सत्तू भी बनता है, जो गेहूं-चने के सत्तू से ठंडा होता है।

जौ के पोषक पदार्थ प्र. श.—

जल	आमिषजातीय	स्नेह	खनिज	तंतुयुक्त	सर्करा-युक्त
१२.५	११·५१	१·३	१·५	३·९	६९·३

केलशियम	फा.	लोहा
०·०३	०·२३	·००३७

(५) जुवार Jowar *Sorghum vulgare*

भूमि की उर्वरा-शक्ति और जलवायु के अनुसार इसका पौधा पांच फुट से लेकर दस फुट तक ऊंचा हो जाता है। बाल जाति अनुसार बिखरे हुए या ठोस जमे हुए दाने वाले होते हैं। जुवार खाने वाली और चरी वाली अलग-अलग होती है। खाने वाली का दाना सफेद, मोतिया या पीले-रंग का होता है। चरी का दाना छोटा और भुट्टा बिखरा हुआ होता है। चरी वाली के बीज के साथ पुटपत्र चिपके हुए अधिक रहते हैं और इसकी कड़बी पतली होती है।

जुवारों के प्रचलित नाम—रामकेल, सावनेर, धामण, लाभकन्सी, डेथा, बेथरा इत्यादि मध्यप्रदेश में; साठी, चपटी, पीलियो, मोगर

आम्बे मोहर, दगड़ी बंबई की तरफ; गूगल, सफेद, चिकनी मध्यभारत में पाये जाते हैं। चरी वाली में पवन बन्दी आगढ़, मोतीचूरा, सूंडिया, लंगूर कालबोंडी, उतावली, मध्यप्रदेश के नाम हैं । बंबई की तरफ शालू नाम की जुवार चरी के लिए वोई जाती है ।

मध्यप्रदेश में रामकेल और सावनेर विशेष होती है। पहली का दाना सफेद और दूसरी का मोतिया रंग का होता है । पकने में पहली दूसरी से दो सप्ताह पहले तैयार हो जाती है ।

खाने में सफेद की अपेक्षा गुगल अच्छी होती है। गुजरात की तरफ पीलियो का दलिया अच्छा बनता है ।

चरी वाली में सूंडिया जल्दी पकने वाली उत्तम जुवार है। इसे पशु बड़े चाव से खाते हैं।

जलवायु—अच्छी वितरित तीस-पैंतीस इंच वर्षा वाले स्थान जुवार के लिए उत्तम होते हैं। यदि प्रारंभ में लगातार कुछ दिनों तक वर्षा हो जाय तो पौधे पीले पड़ जाते हैं और छोटे रह जाते हैं। बाल निकलने के पहले यदि कुछ वर्षा हो जाय तो बड़ा लाभ होता है। फूल आने पर हो जाय तो फसल बिगड़ जाती है ।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए काली अच्छे नितार वाली भूमि अच्छी होती है। जिसमें पानी लगता हो उसमें जुवार अच्छी नहीं होती। जुताई गर्मी के दिनों में करनी चाहिए। वर्षा होने पर एक बार बखर चला कर जुवार बोना होती है। दक्षिण भारत की तरफ रबी जुवार भी होती है सो वहां पर आश्विन के पहले खेत तैयार कर लेने चाहिए।

जुवार में काद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
बीज	—१०.८६	१.६६	०.६४	०.५
कड़वी	—१२.६४	०.४८	०.२३	२.१७
चरी	—१०.९७	०.५०	०.२३	२.१७

जुवार की उपज दस मन और कड़बी की ८० मन प्रति एकड़ मान-

कर गणना की जाय तो हमें दो मन के लगभग एमोनियम सलफेट, नौ मन के लगभग खली या १८० मन के लगभग गोबर का खाद देना होगा; परन्तु जुवार चूंकि सस्ती बिकती है इतना खाद देना आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं होगा। इसलिए इससे पहले वाली फसल को खाद देना चाहिए या इसे ही दिया जाय तो १०० मन के लगभग गोबर का खाद या कूड़ा-कर्कट वाला खाद मिले तो अच्छा होगा।

मिश्रण–जुवार के साथ मूंग और तूवर दोनों बो सकते हैं। मूंग नीचे, तूवर जुवार के पौधों की आधी ऊंचाई पर और जुवार ऊपर हो जाती है। कहीं-कहीं तिल और कुलथी भी डाल देते हैं।

बीज, बोआई, मिश्रग और हेरफेर—इसके लिए बीज की मात्रा पांच सेर से लेकर ८ सेर तक है। चरी वाली के लिए दस सेर से लेकर पचीस सेर तक बोते हैं। उपजाऊ जमीन में दस सेर काफी है। चरी की जुवार छींट कर और खाने की अरगड़ा, नाई या हलके तिफन से बोते हैं। कतारों में डेढ़ फुट से दो फुट का अन्तर काफी होता है। जुवार वर्षा-प्रारंभ होने के कुछ ही दिन बाद वो दी जाती है। दक्षिण भारत में जहां रवी जुवार भी होती है वहां उसे आश्विन में बोते हैं। कहीं-कहीं माघ-फाल्गुन में भी बोते हैं; पर उसे सींचना होता है।

बोने योग्य जातियां—मध्यप्रदेश यें सफेद बीज वाली रामकेल और मोतिया रंग की सावनेर अच्छी है। चुनी हुई जातियों में ई. वी. १ और नं. १२३ ए. उत्तम हैं।

उत्तर प्रदेश—नं० ५,१९,२३,४५ और ४७

मद्रास—१०३, नन्दयाल २९/६८,२२३,२२४ टी चरी के लिए ७५, टी १२

मध्यभारत—इंदौर ३, और इंदौर ९ ग्वालियर १२–२ चरी के लिए ६८ और सूंडिया

बम्बई—एम. ३५–१ पीलियो नं० ५३

हेरफेर—कपास या मूंगफली के साथ ।

मिश्रण—तूवर, मूंग के साथ ।

निंदाई—यह कार्य पौधों की कतारों के बीच कंडपा (डोरा) चलाकर किया जाता है । कतारों में ये घने पौधे निकाल कर उनमें एक-एक फुट का अन्तर कर देना चाहिए ।

सिंचाई—जहां आवश्यकता हो वहां करनी चाहिए । रबी और गर्मी में बोई जाने वाली फसल को सींचना होता है ।

फसल की तैयारी और उपज—चरी वाली फसल उस समय काटनी चाहिए जब बाल में दूध भरा हो । खाने वाली जुवार पूर्ण पकने पर ही काटी जाती है । यह जाति अनुसार चार महीने से ले कर छः महीने में तैयार होती है । कहीं-कहीं खड़ी फसल के भुट्टे काट लेते हैं और कहीं-कहीं फसल काट कर भुट्टे खलिहान में छुड़ाते हैं, जहां बैलों से गहाकर जुवार तैयार की जाती है । भूसा हवा में उड़ा कर ही दाना साफ करते हैं । अच्छी भूमि में जुवार की उपज[1] पन्द्रह मन तक हो जाती है । कड़बी की उपज ६० मन तक ले सकते हैं ।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद जुवार की खपत देश में ही हो जाती है । व्यवसाय साधारण रीतियों द्वारा होता है ।

उपयोग और गुण—अनाज खाने के काम में आता है और कड़बी-या चरी पशुओं को खिलाई जाती है । हरी जुवार पशुओं को जबतक फूल न आ जाय नहीं खिलानी चाहिए, क्योंकि इसमें एक प्रकार का विष होता है जो फूल आने तक नष्ट हो जाता है । सूखे हुए पौधों में विष नहीं रहता ।

वैद्यक मतानुसार जुवार हलकी, शीतल, वीर्यवर्धक, पित्तनाशक तथा रुधिर के विकार को दूर करने वाली होती है ।

---

१. कृषि-पंडित भीमगोंडा दादा पटेल कोल्हापुर जिले वाले ने लगभग ६५ मन जुवार प्रति एकड़ उपजाई । Indian Farming, July 1953 Supplement.

जुवार के पोषक पदार्थ प्र. श.—

जल	आमिपजातीय	स्नेह	खनिज
११.९	१०.४	१.९	१.८
सर्करा-युक्त	**कलशियम**	**फासफोरस**	**लोहा**
०.७४	०.०३	.०२८	.००६२

(६) वाजरा Bajra *Pennisetum typhoidis*

वाजरे का पौधा जुवार के पौधे जैसा लेकिन उससे कुछ छोटा और पतला होता है। वाल आठ-नौ इंच से लेकर दो फुट लम्बे होते हैं। वाजरा दो प्रकार का होता है। एक हरे रंग का और दूसरा कुछ भूरे रंग का।

बाजरे के व्यावसायिक नाम—काठियावाडी, भावनगरी, जामनगरी, जबलपुरी इत्यादि। मद्रास में इसे कुम्बु कहते हैं। अर्सी कुम्बु नाम की जाति के बीज वाल से वहुत जल्दी छूट जाते हैं। दूसरे वाजरे को कूटना पड़ता है।

जलवायु—वाढ़ के लिए तरीवाला उष्ण वातावरण चाहिए। जुवार की अपेक्षा कम वर्षा वाले स्थानों में बाजरा हो जाता है।

भूमि, खाद और जुताई—जुवार के लिए जिस प्रकार की भूमि चाहिये उससे हल्की अर्थात बलुआ-दुमट में अच्छा हो जाता है। जुताई जुवार जैसी होनी चाहिए।

बाजरे के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे	पो. आ.
बीज	११.३	१.६९	०.६८	०.४२

इसकी कड़बी के अंक प्राप्त नहीं हुए हैं। परन्तु चूंकि बीज के अंक करीब जुवार के बीज के समान हैं वाजरे की कड़बी के अंक भी उतने ही मान लेने चाहिये। यदि सात मान उपज बीज की और तीस मन कड़वी मान कर उपर्युक्त अंकों के आधार पर गणना की जाय तो लगभग साढ़े दस सेर नाइट्रोजन पड़ती है। इसकीं पूर्ति के लिए सवा मन एमोनियम सलफेट, पांच मन खली और गोबर द्वारा दुगनी मात्रा पहुंचाने के लिए एक सौ मन

गोबर का खाद चाहिए। आर्थिक दृष्टि से प्रयोगों द्वारा देखा गया तो इतना खाद अधिक होता है। इसके लिए एक सौ मन गोगर का खाद देना ही उचित है, ताकि यदि इससे विशेष लाभ न हो तो दूसरी फसल को लाभ पहुंचे। हेरफेर कपास या रहर के साथ उत्तम होगा। जहां मिश्रित फसल लेना होती है वहां अरहर, कुलथी, मूंग, तिल अम्बाड़ी इत्यादि लेते हैं।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—वर्षारम्भ के समय ही बोना चाहिए। परन्तु जब अन्य फसलें बोने का काम विशेष हो तो उनके बाद भी बाजरा बो सकते हैं। इसे छींट कर भी बो सकते हैं परन्तु कतारों में बोना अच्छा है। बोने के लिए बाजरे के बाल के बीच वाले बीज अच्छे होते हैं। कतारें डेढ़ फुट की दूरी पर होनी चाहिएं। छींट कर बोया जाय तो लगभग पांच सेर और कतारों में बोया जाय तो ढाई-तीन सेर बीज काफी होंगे। नम्बरी जातियों में न. ७००,२२२९,३६७,७०१, मद्रास की तरफ की आच्छी जातियां हैं। बाजरे का हेरफेर कपास, मूंगफली आदि के साथ अच्छा होता है।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई के लिए कतारों के बीच कड़पे चला देते हैं। सिंचाई की आवश्यकता हो तो करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—जुवार से पहले पकता है। कहीं-कहीं तीन महीने में ही फसल तैयार हो जाती है। चरी के लिए बोया जाय तो कभी भी काट सकते हैं। बाजरे की उपज[१] चार-पांच मन से लेकर आठ-दस मन प्रति एकड़ हो जाती है। कड़बी की उपज बीज से चौगुनी और चरी की उपज अस्सी से एक सौ मन तक ली जा सकती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद शेष की खपत देश में ही हो जाती है। व्यवसाय अन्य अन्नों की भांति होता है।

---

१. कृषि-पण्डित श्री वामन रामचन्द्र मराठे ने लगभग २८ मन उपज बाजरे की प्रति एकड़ दिखलाई, Indian Farming, July 1953 Supplement.

उपयोग और गुण—चूंकि बाजरे के साथ पुष्पपत्र चिपके रहते हैं उन्हें ओखली में कूटकर छुड़ाना पड़ता है। बाद में बीज का दलिया या आटा खाने के काम आता है। हरे बाल आग में भूंज कर भी खाते हैं। कड़वी और चरी पशुओं को खिलाई जाती है। बाजरा गर्म होता है।

बाजरे के पोषक पदार्थः प्र. श.—

जल	आमिपजातीय	स्नेह	खनिज	सर्करायुक्त	केलशियम
१२.४	११.६	४.०	२.७	६७.१	०.०५

फा.	लोहा
.३५	०.००८८

(७) मक्का Maiz *Zea mays*

मक्का का पौधा अजीब-सा है। सब धान्य वाली फसलों के बाल पौधों के सिर पर आते हैं; परन्तु इसके नर फूल सिर पर और बाल बीच धड़ पर आते हैं। इसका पौधा चार फुट से लेकर भूमि की उर्वरा-शक्ति के अनुसार सात-आठ फुट ऊंचा हो जाता है। बाल एक, दो और किसी-किसी में तीन तक भी आते हैं। अच्छी खाद वाली भूमि में अधिकांश पौधे दो भुट्टे वाले ही मिलेंगे।

व्यवसायिक जातियां—सफेद, पीली, मोटे छोटे दाने वाली, जौनपुरी, आजमगढ़ी इत्यादि। अमेरिकन जाति के छः वर्ग हैं। 'डेन्टकार्न', दान्त के आकार के बीज, 'फिलन्ट कार्न', गोल और कठोर बीज, 'स्वीट कार्न', मीठी मक्की। 'साफ्ट कार्न' आसानी से पीसी जाने वाली 'पॉप कार्न' फूले या धानी के लिए और 'पाडकार्न', इसमें प्रत्येक बीज छिलके से ढका रहता है।

जलवायु—मक्का पचीस से पचास इंच वर्षा वाले स्थानों में हो जाती है। परन्तु वह वितरित होनी चाहिये और धूप भी निकलनी चाहिए। प्रारम्भ में धूप ऐसी निकलती रहे कि घासपात समय पर निकाल सकें तो मक्का पचीस-तीस मन प्रति एकड़ हो जाती है और नहीं तो पांच मन की उपज भी कठिन होती है।

भूमि, जुताई और खाद–सर्वोत्तम भूमि दुमट है। मक्का ऐसी अम्लवाली मिट्टी में भी हो जाती है, जिसमें गेहूं नहीं हो पाता। जुताई गर्मी में काफी करनी चाहिए, क्योंकि वर्षा के आते ही मक्का बोना पड़ती है।

मक्का के खाद्य पदार्थ प्र. श.––

	जल	नाइट्रोजन	फा.पे.	पो. आ.
बीज	१४.४	१.६०	०.५७	०.३७
कड़वी	१५.०	०.४८	०.३८	१.६४

यदि मक्का की उपज १२ मन, कड़वी की ५० मन और डूडियों की चार मन मानकर गणना की जाय तो हमें १७ सेर नाइट्रोजन पहुंचे इतना खाद देना होगा, जिसके लिए दो मन एमोनियम सलफेट या ८ मन खली या दूनी मात्रा के लिए १६० मन गोबर का खाद देना चाहिए। चूंकि मक्का सस्ती विकती है अतः इतना खाद आर्थिक दृष्टि से ठीक नहीं जंचता। किंतु मक्का के वाद दूसरी फसल जल्दी ही बोई जाती है, जिसके लिए खाद देने का विशेषतः गोबर का खाद देने का समय नहीं मिलता। सो मक्का को जितना अधिक खाद दिया जायगा फायदा ही करेगा, क्योंकि दूसरी फसल भी अच्छी होगी। कुछ प्रयोगों से भी ऐसा ही सिद्ध होता है।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर––कतारों में बोने से पांच सेर बीज काफी होते हैं। पंक्तियां डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिएं और पंक्तियों में भी अच्छी खाद वाली भूमि में डेढ़ फुट कर देना चाहिए। कमजोर भूमि में १ फुट अच्छा होगा। इसके बोने का समय वर्षारम्भ का है परन्तु कहीं-कहीं बारहों महीने हरे भुट्टे मिलते रहते हैं सो कभी भी बो सकते हैं।

नम्बरी जातियां उत्तर प्रदेश में न. १३, १९, ४१, बिहार में जौनपुर, तीन पंखियां, केलिमपांग इत्यादि अच्छी जातियां पाई गई हैं।

हेरफेर जहां अफीम की खेती होती है वहां उसके साथ किया जाता है; वरना ये भी गेहूं आदि के साथ करना चाहिए। मिश्रण में मक्का के साथ उड़द, कपास इत्यादि देते हैं। जब कपास के साथ बोते हैं। मक्का बहुत कम बोई जाती है और उसे काटने पर कपास

लेते हैं। कहीं-कहीं धान, मरुवा, कंगनी इत्यादि के बीज भी मक्का के साथ बोते हैं। परन्तु मक्का के साथ उड़द बोना अच्छा रहता है। वैसे कपास के खेतों में भी मक्का कुछ बोई जाती है।

निंदाई और सिंचाई—पहले खुर्पी से नींदना होता है और मक्का के लिए यह क्रिया अत्यन्त आवश्यक है। जब पौधे एक फुट के करीब ऊंचे हो जायं तो कड़पे चलाकर निंदाई कर सकते हैं। सिंचाई बरसाती फसल को तो नहीं करना पड़ती, दूसरी को करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से दो-तीन महीने में फसल तैयार हो जाती है। कहीं-कहीं कुछ समय अधिक लगता है। आषाढ़ (जून) में बोई जाने वाली भादों (अगस्त) के अन्त तक तैयार होती है। माघ (फरवरी) वाली वर्षा के पहले तैयार हो जाती है। पकने पर कहीं-कहीं भुट्टे खेत में ही तोड़ लेते हैं और कहीं-कहीं फसल काट कर खलिहान में लाकर बाल से दाना लाठियों से पीट कर छुड़ाते हैं। मक्का की उपज का अनुमान कठिन है। लेखक के प्रयोगों में किसी साल ३२ मन बीज प्रति एकड़ और १६० मन कड़बी आई और किसी साल ५ मन बीज भी मुश्किल से आए। जैसा कि पहले बताया गया है इसपर जलवायु का बड़ा प्रभाव पड़ता है। प्रारम्भ में घासपात समय पर निकाले जाने का अवसर मिल जाय तो उपज काफी अच्छी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद इसकी भी खपत देश में ही होती है। व्यवसाय अन्य अन्नों की भांति होता है।

उपयोग और गुण—मक्का के हरे भुट्टे बड़े स्वादिष्ट होते हैं जिन्हें आग में भून कर या उबाल कर खाते हैं। हरे बीज से नमकीन हलवा भी अच्छा बनता है। बीज से दलिया और आटा बना कर खाते हैं। मक्का से फुटाण (फूले) और सत्तू भी बनाते हैं। कड़बी पशुओं को खिलाई जाती है। इसे चरी के लिए भी बोते हैं। डूंडिये जलाने के काम आते हैं।

हरी मक्का पुष्टिकारक, सूखी, मल-रोधक और रूखी होती है। बाल की मूछ का सत अमेरिका में दिल तथा पेशाब की व्याधियों में काम

में लाया जाता है ।

मक्का के पोषक पदार्थ प्र. श.—

	जल	आमिप-जातीय	स्नेह	सर्करा-जातीय	खनिज	के.	फ़ा.	लो.
सफेद	१३.४२	९.१२	३.६२	७०.५	१.२२	०.०१	०.३३	०.०२१
पीली	१३.४५	९.१६	४.१०	६८.८८	१.३४			

(८) मडुवा, रागी Marua, Ragi, *Eleusine Coracana*

रागी की खेती मद्रास में अधिक होती है। समस्त भारत के क्षेत्रफल का आधा हिस्सा मद्रास और आंध्र में पड़ता है। साधारण भूमि में कम परिश्रम से मरुवा अच्छी उपज दे देता है। इसके पौधे तीन-चार फुट ऊंचे और बाल चार या छः पंखड़ियों वाले होते हैं

जलवायु—पचीस-तीस इंच वर्षा वाले स्थान अच्छे होते हैं। वर्षा अधिक होने से उपज गिर जाती है।

जमीन, जुताई और खाद—वैसे सब प्रकार की भूमि में हो जाता है; परंतु इसका मान कम होने से हलकी भूमि में ही लगाते हैं। जुताई भी साधारण होनी चाहिए।

रागी के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

जल	ना.	फो. पे.
१२.५	०.९४	०.४

पन्द्रह मन उपज बीज की और पच्चीस मन भूसे की मान कर गणना की जाय तो लगभग ११ सेर नाइट्रोजन होगी। जिसके लिए पांच-छः मन खली या मन-सवा मन एमोनियम सल्फेट और दूनी मात्रा के लिए सौ-सवा सौ मन गोबर का खाद देना ठीक होगा।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसे छींट कर भी बोते हैं और रोप लगाकर भी। रोप लगाना अच्छा होता है, क्योंकि स्वस्थ पौधे रोपे जाते हैं। परन्तु जहां मजदूरों का अभाव हो, वहां छींट कर ही बोना होता है। रोप के लिए एक एकड़ के बीसवें भाग में यदि तीन सेर बीज गिरा

दिये जायं तो एक एकड़ के लिए काफी होंगे। रोप बीज बोने के समय से लगभग चार सप्ताह में तैयार हो जाते हैं। वर्षारम्भ से कुछ दिन पहले ही नर्सरी में बीज गिरा देना चाहिए, ताकि शुरू बरसात में रोप लगाये जा सकें। पौधों में लगभग चार-पांच इंच का अन्तर रखना चाहिए। जहां छींट कर बोना हो वहां चार-पांच सेर बीज मिट्टी या आलू में मिलाकर छींटना चाहिए। जब पौधे छंटनी के योग्य हो जायं तो उन्हें चार-पांच इंच की दूरी पर करना चाहिए। मद्रास की तरफ पहली फसल के लिए आषाढ़ (जून-जुलाई) और दूसरी के लिए पौष-माघ (जनवरी) में बोते हैं। हेरफेर जव-किराओं के मिश्रण, मूंगफली, कपास या रहर के साथ होना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो करनी चाहिए। मद्रास की तरफ जो फसल गर्मी के दिनों में तैयार होती है, सींचनी होती है।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। इसके बाल ज्यों-ज्यों पकते जाते हैं काट लेते हैं। साधारणतः दो बार काटना पड़ता है। थोड़ी फसल पीट कर और अधिक हुई तो बैलों से गहाई कर तैयार करते हैं। अनुकूल स्थितियों में उपज-बीस मन प्रति एकड़ तक हो जाती है। सिंचाई वाले खेतों में इससे ड्योढ़ी भी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—साधारण व्यवसाय द्वारा वितरण होकर देश में ही खपत हो जाती है।

उपयोग और गुण—मरुवा को खाने योग्य बनाने के लिए इसे पहले ओखली में कूटना पड़ता है। इसके आटे से रोटी, हलुआ इत्यादि बना सकते हैं।

मरुवे के पोषक पदार्थ प्र. श.—

जल	आमिष-जातीय	स्नेह	खनिज	सर्करा-जातीय	के.	फा.	लोहा
१३.१	७.१	१.३	२.२	७६.३	०.३३	०.२७	०.००५४

(९) अन्य छोटे धान्य

उपर्युक्त धान्य के सिवाय कुछ छोटे धान्य ऐसे हैं, जिनकी खेती

भारतवर्ष में हलकी भूमि में होती है। ऐसे धान्य निम्नलिखित हैं—

कंगनी, राला—Italian millet *Setaria italica*

कोदों, कोदरा Kodon *Paspolum scrobiculatium*

चीना, वारी Chenna Common millet *Panicun miliaceum*

शमई, कुटकी, गुडंली सावा Sava *Panicun miliare*

कंगनी का पौधा तीन-चार फुट ऊंचा, सात-आठ इंच लम्बे बाल वाला होता है। कंगनी पीली, सफेद और स्लेटी रंग की होती है।

कोदों—इसका पौधा दो-तीन फुट ऊंचा होता है और बाल पकते समय तक अन्तिम पत्ते में छिपा रहता है। बीज सरसों इतना वड़ा लेकिन चपटा होता है।

चीना—इसका पौधा दो-ढ़ाई फुट से लेकर तीन-चार फुट ऊंचा होता है। इसके बाल बिखरे हुए होते हैं और एक ही ओर झुके रहते हैं। बीज पीले रंग के चिकने और चमकीले होते हैं।

सावा—इसका पौधा भी तीन-चार फुट ऊंचा होता है। पत्ते कंगनी जैसे चौड़ाई में कुछ अधिक चौड़े होते हैं, लेकिन लम्बाई में कुछ कम होते हैं। दूर से देखने से इसका बाल जुवार के बाल जैसा नजर आता है, लेकिन लम्वा आठ-दस इंच होता है। एक जाति ऐसी भी होती है जिसका बाल बिखरा हुआ होता है। इसे झालरिया सावा कहते हैं, बीज सफेद या स्लेटी रंग के गोल होते हैं।

जलवायु—साधारणतः बीस-पचीस इंच वर्षा वाले स्थान इनके लिए उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इन्हें हलकी भूमि में ही स्थान मिलता है और जुताई भी साधारण-सी की जाती है।

इन्हें तो खाद साधारणतः नहीं दिया जाता; परन्तु अच्छी फसल पाने के लिए पचास-साठ मन से लेकर एक सौ मन तक गोबर का खाद

देना अच्छा होगा। उससे दूसरी फसल को भी लाभ पहुंचेगा।

छोटे धान्य में खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन
कंगनी	१०.४६	१.७६
कोदों	८.७८	१.०२
चीना	९.७८	१.५४
सावा	१२.९८	१.४५

हेरफेर—कंगनी के बाद कोई भी रबी की फसल ले सकते हैं। बिहार में बहुधा शकरकन्द लगाते हैं।

कोदों देरी से पकता है, इसलिए जहां कोदों लेना हो वहां गर्मी में चरी जैसी फसल ले सकते हैं।

चीना के बाद कोई भी रबी की फसल ली जा सकती है, यदि यह आषाढ़ में बोया जाय। जब माघ में बोयें तो खरीफ की फसल ले सकते हैं।

सावा के बाद कोई भी रबी की फसल ली जा सकती है।

जहां तक बने उपर्युक्त सब फसलों के बाद मटर, चना जैसी दलहन की फसल उत्तम होगी।

मिश्रण—कंगनी का छींटा कपास या मक्के में डाल सकते हैं

कोदों और सावा को कपास या जुवार के खेतों में स्थान मिल जाता है। चीना खरीफ की अन्य फसलों के साथ बोया जा सकता ह।

बीज और बोआई—

कंगनी—छींट कर बोना हो तो पांच सेर और यदि कतारों में बोना हो तो तीन-चार सेर बीज प्रति एकड़ बोना होगा। इसे आषाढ़-श्रावण में बोते हैं।

कोदों—इसे वर्षारम्भ के साथ बोते हैं। लगभग सात-आठ सेर बीज प्रति एकड़ बोया जाता है और छींट कर ही बोते हैं।

चीना—पहली फसल—आषाढ़ (जून) दूसरी भाद्रपद (अगस्त) और तीसरी माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) में बोते हैं। इसे छींट कर

बोते हैं। गर्मी में जो फसल बोई जाय उसे बोने के बाद जल्दी से बीज मिला करके पानी दे देते हैं। प्रति एकड़ चार-पांच सेर बीज छींटना चाहिए।

सावा—खरीफ वाली फसल के लिए तीन-चार सेर बीज और रबी के लिए चार-पांच सेर बीज प्रति एकड़ छींट कर बोना होता है। पहली फसल के लिए आषाढ़ (जून) में और दूसरी के लिए फाल्गुन (फरवरी-मार्च) में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार। गर्मी में जो फसल उपजाई जाय, उन्हें सींचना होगा।

फसल की तैयारी और उपज (प्रति एकड़)

	कंगनी	कोदों	चीना	सावां
बोने के समय से तैयारी	तीन-चार महीने में	चार महीने	तीन-चार महीने	तीन से पांच महीने
उपज बीज	चार-पांच मन से दस-बारह मन	चार-पांच मन से दस-बारह मन	तीन-चार मन से छः-सात मन	चार-पांच से आठ-दस मन

भूसा—बीज से दुगनी-तिगुनी उपज भूसे की आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—इसकी खपत देश में ही हो जाती है।

उपयोग और गुण—अधिकतर गरीब लोग ही इनका उपयोग करते हैं। कंगनी को ओखली में कूट कर बीज का पुटपत्र छुड़ा कर काम में लाना होता है। इसे कच्ची भूंज कर पीस करके आटा बनाते हैं, जिससे रोटी बन सकती है। बहुधा दलिया पका कर ही खाते हैं। यह शीतल, दाहनाशक और पित्त के विकारों को दूर करने वाली होती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

कोदों—इसे भी कूटना पड़ता है या मिट्टी के पाट की चक्की से दल कर छिलका छुड़ाते हैं। पचास-साठ शतांश तक उपयोगी पदार्थ मिलता है। इसे चावल की भांति उबालकर या खीर बना कर खाते हैं। इनके बीज

में कुछ मादकता होती है, भूसा पशुओं को खिलाया जाता है ।

चीना—इसे भी कूट कर इसका भात बना कर खाते हैं । रोटी भी बनाई जाती है । खीर भी बनाते हैं । यह शीतल, हलका और मलरोधक होता है । भूसा पशुओं को खिलाया जाता है ।

सावा—शीतल और कफ-पित्त-नाशक तथा मल-रोधक होता है । इसे भी कूट कर तैयार करना होता है और लगभग दो तिहाई भाग ही उपयोग के योग्य होता है ।

कंगनी, कोदों, चीना, सावा के पोषक पदार्थ प्र. श.—

	कंगनी	कोदों	चीना	सावां
जल	११.२	१२.८	११.९	११.५
आमिषजातीय	१२.३	८.३	१२.५	७.७
स्नेह	४.७	१.४	१.१	४.७
खनिज	३.२	२.९	३.४	४.८
सर्करा-जातीय	६०.६	६५.६१	६८.९	६३.७
केलशियम	०.०३	०.०४	०.०१	०.०२
फासफोरस	०.२९	०.२४	०.३३	०.३६
लोहा	०.००६३	०.००५२	५.७	०.०००१

सावा की एक जाति (*Paniceum crusgalli var frumentacea*) और होती है जो छः-सात सप्ताह में तैयार होती है । इसके बीज फलाहार के काम आते हैं ।

२—दलहन की खेती

भारत जसे शाकाहारी देश के लिए आमिषजातीय पदार्थ (Proteins) प्रचुर मात्रा में दालों से ही मिलते हैं । इनकी खेती से भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ती है । इनकी जड़ों पर भूरी-भूरी गठानें होती हैं, जिनमें एक प्रकार के सूक्ष्म जन्तु रहते हैं जो वायुमंडल की नाइट्रोजन का उपयोग कर उसे पौधों को देते हैं, जिससे उस फसल की नाइट्रोजन की मांग का असर भूमि पर बहुत कम पड़ता है । जो अंग फसल का भूमि के ऊपर

रहना है, उसका नाइट्रोजन वातावरण से ही सूक्ष्म जन्तु द्वारा प्राप्त होता है। इस वर्ग की फसलों को फासफोरस के खाद की विशेष आवश्यकता होती है, सो सूपरफासफेट या हड्डी के चूर्ण के रूप में देना चाहिए।

(१) उड़द Urid *Phaseolus mungo*

इसका पौधा डेढ़-दो फुट ऊंचा और फलियां डेढ़-दो इंच लम्बी रोएंदार होती हैं। उड़द मोटे दाने वाले काले और छोटे दाने वाले हरे या भूरे रंग के होते हैं। मूंग और छोटे दाने वाले उड़द की पहचान यह है कि मूंग की दाल पीली और उड़द की सफेद होती है।

जलवायु—पच्चीस-तीस इंच वर्षा वाले स्थान जहां का वातावरण तर और ऊष्ण हो अच्छा होता है।

भूमि, जुताई और खाद—दुमट जमीन, जिस फसल के साथ बोई जाय उसकी जुताई और दो-ढाई मन हडडी का चूरा या सूपरफासफेट देना चाहिए।

उड़द के खाद्य पदार्थ प्रतिशत

	जल	ना.	फा. पे.	पो. आ-
बीज	९.९३	३.६८	०.८५	––
भूसा	९.८९	१.३०	०.३५	२.६५

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी बीज में एन. पी. ४, ६, ७ और १४, ई. बी. ११० न ५५ और न ६३ अच्छे हैं। अकेली फसल के लिए ५ सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए। बोने का समय वर्षारम्भ है। कहीं-कहीं नीची तरी वाली भूमि में माघ (फरवरी) में भी बो देते है। अकेली फसल हो तो इन्हें कतारों में, जिनका अन्तर डेढ़ फुट का हो बोना चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर एक फुट उत्तम होगा। इसे बहुधा मक्का के साथ बोते हैं। हेरफेर के लिए गेहूं के साथ अच्छा होगा। जहां धान के बाद बोते हैं वहां धान के साथ हेरफेर हो जाता है।

निंदाई और सिंचाई—चूंकि बहुधा मक्का के साथ बोया जाता है और उसके लिए निंदाई काफी करनी होती है वही इसके लिए भी हो जाती

है। सिंचाई जहां आवश्यक हो करनी चाहिए ।

फसल की तैयारी और उपज—वर्षारम्भ के समय बोये जाने वाले काले उड़द की फसल भाद्रपद-आश्विन (सितम्बर) में तैयार हो जाती है। देरी से बोई जाने वाली उड़दी (छोटे दाने वाले उड़द) कार्तिक (अक्तूबर) तक और धान के बाद वाली बोने के समय से तीन-चार महीने में तैयार होती है । फलियां पकने पर सूखकर तड़क जाती हैं और बीज फेंक देती हैं। सो तड़कने के पहले सावधानी से फलियां तोड़ लेनी चाहिए। बीज की उपज चार-पांच मन और भूसे की लगभग बीज से तिगुनी हो जाती है ।

वितरण और व्यवसाय—साधारण व्यवसाय की रीति से वितरण और खपत देश में ही हो जाती है ।

उपयोग और गुण—बहुधा दाल के रूप में उपयोग होता है। दाल से पापड़, दहीवड़ा, इमरती आदि बनाते हैं। मद्रास की तरफ चावल के साथ मिलाकर अनेक पदार्थ बनाते हैं। उड़द भारी और बलदायक होता है। उड़द का भूसा पशुओं को खिलाया जा सकता है ।

उड़द की दाल के पोषक द्रव्य प्रतिशत

जल	आमिष-जातीय	स्नेह	सर्करा-युक्त	खनिज	केल-शियम	फ़ास-फोरस	लोहा
१०.९	२४.०	१.४	६०.३	३.४	०.२	.३७	०.००९८

(२) किराओ Kirao *Pisum arvense*

इसके बीज हरे पीले रंग के धब्बेदार होते हैं और खेती देशी मटर की खेती के समान होती है।

(३) कुलथी Horse gram *Dolichos biflorus*

इसकी लता फुट-डेढ़ फुट लम्बी और फलियों की नोक मुड़ी हुई होती है। बीज चपटे, चमकीले, भूरे, लाल, काले, इत्यादि रंग के होते हैं और प्रत्येक फली में पांच-छः बीज होते हैं।

जल-वायु—पचीस-तीस इंच वर्षा वाले स्थानों में खरीफ और अधिक वालों में रबी की मौसम में बोना चाहिए ।

भूमि, जुताई और खाद—हलकी भूमि और साधारण जुताई तथा दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट मिल सके तो दे देना चाहिए।

कुलथी के खाद्य पदार्थ प्र. श.——

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.
बीज	१०.२	३.४० प्र.श.	०.८१ प्र.श.
भूसा	५.६	१ ०९ प्र.श.	

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—लगभग दस सेर बीज प्रति-एकड़ आषाढ़, श्रावण (जून-जुलाई) या आश्विन-कार्तिक (सितंबर-अक्तूबर) में कतारों में जिनका अन्तर एक फुट का हो बोना चाहिए। चरी वाली फसल के लिए बीज की मात्रा डयोढ़ी होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो वहां करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—चार-पांच महीने में तैयार हो जाती है। खलिहान में बैलों से गहाई कर हवा में दाना साफ किया जाता है। बीज की उपज लगभग पांच मन और भूसे की उससे दूनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज तथा घर-खर्च इतनी रखकर शेष का साधारण व्यवसाय की रीति से देश में ही वितरण हो कर खपत हो जाती है। यह दाल और बीज दोनों के रूप में मिल जाती है।

उपयोग और गुण—हरे बीज की सब्जी और सूखे की दाल बनाते हैं। पशुओं को दी जाय तो उबाल कर देना चाहिए, वरना छिलका कठोर होने के कारण बीज वैसे ही निकल जाते हैं। भूसा और हरी फसल पशुओं को खिलाई जाती है।

कुलथी के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	११.८	आ. जातीय	२२.०
स्नेह	०.५	सर्कराजातीय	५७.३
खनिज	३.१	केलशियम	०.२८
लोहा	.००७६		०.३९

(४) खिसारी, लाख, लांग Khisari *Lathyrus sativus*

इसकी लता डेढ़-दो फुट लम्बी और बीज तूवर के बीज जैसे चपटे, पीले या भूरे रंग के धब्बेदार होते हैं। फलियां रोएंदार चार-पांच बीज वाली होती हैं।

जल-वायु—लगभग तीस इंच वर्षा वाले स्थान इसके लिए उत्तम हैं।

भूमि, जुताई और खाद—यह हर प्रकार की भूमि में यहां तक कि कुछ ऊसर भूमि में भी हो जाती है। जुताई साधारण-सी करना होती है। जब धान के बाद बोते हैं तो धान काटने के कुछ दिन पहले ही बीज छींट देते हैं। ढाई-तीन मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट देना उत्तम होगा।

खिसारी के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.
बीज	१२	३.९४	१.१२
भूसा	१०	१.८७	—

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर) म लगभग बीस सेर प्रति एकड़ के हिसाब से बीज छींटने चाहिएं। वैसे कतारों में बोना हो तो कतारें एक-एक फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में १५ सेर बीज प्रति एकड़ काफी होंगे। धान के बाद बोने से उसके साथ हेरफेर हो जाता है। वैसे किसी भी खरीफ की फसल के साथ हेरफेर कर सकते हैं। इसे जव या अलसी के साथ भी बोते हैं।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) तक तैयार हो जाती है। उपज दस-बारह मन बीज तथा उससे सवाई भूसे की हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज तथा घर-खर्च इतनी ही उपजाई जाती है। अधिक हो तो व्यवसाय की साधारण रीति द्वारा देश में ही खप जाती है।

उपयोग और गुण—इसकी दाल काम में लाई जाती है। बीज पशुओं को खिलाये जाते हैं। खिसारी की दाल हलकी और बलदायक होती है। इसमें कभी-कभी अटके (जंगली पौधा) के बीज मिल जाते हैं, जिन्हें निकाल देना चाहिए; वरना अधिक सेवन से उपयोगकर्ता लंगड़े हो जाते हैं।

खिसारी की दाल के पोषक द्रव्य—प्र.श.—

जल	आ.-जातीय	स्नेह	सर्करा-युक्त	खनिज	केल-शियम	फास-फोरस	लोहा
१०	२८.२	०.६	५८.२	३.०	०.११	०.५	.००५६

(५) ग्वार Guar *Cyamopsis psoraloides*

इसके पौधे भूमि की उर्वरा-शक्ति अनुसार चार फुट से लेकर आठ-दस फुट तक ऊंचे हो जाते हैं। फलियां डेढ़-दो इंच लम्बी खुरदरी होती हैं। सब्जी वाली ग्वार की फलियां साफ कोमल तथा चार-पांच इंच लम्बी होती हैं। इसकी फलियां चिकनी-लम्बी और मुलायम होती हैं।

जलवायु—तीस-पैंतीस इंच वर्षा वाले स्थान तथा ऊष्ण और तर जलवायु इसके लिए अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—यह हर प्रकार की भूमि में हो जाती हैं। तरकारी वाली ग्वार के लिए दूमट मिट्टी अच्छी होती है। बरसात के पहले साधारण जुताई से खेत तैयार कर लेने चाहिएं।

तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट देना अच्छा होगा।

ग्वार में खाद्य पदार्थ—प्र.श.

जल ८.४ नाइट्रोजन ४.४३

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—हरे खाद के लिए १५ सेर बीज प्रति एकड़ छींट कर बोना चाहिए। कतारों में बीज के लिए बोना हो तो कतारें दो फुट के अन्तर पर रखना उत्तम होगा।

हेरफेर जुवार या कपास के साथ किया जा सकता है। हरे खाद के लिए बोई जाय तो इसके बाद रबी की फसल ले सकते हैं। हरे खाद के

लिए १५ सेर बीज प्रति एकड़ छींट कर बोना चाहिए। कतारों में बीज के लिए बोना हो तो कतारें दो फुट के अन्तर पर रखना उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—तरकारी वाली ग्वार को दो बार नींदना आवश्यक होगा और पौधों की छंटनी करके उन्हें एक-एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। इसके पौधों में एक प्रकार के माईट नाम के जन्तु लग जाते है, सो पृष्ठ १०९ में दिये हुए उपचार का ध्यान रखना चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—तरकारी वाली ग्वार से मार्गशीर्ष (अक्तूबर-नवंबर) से फलियां मिलना शुरू हो जाती हैं। लगभग पचास-साठ मन फलियां प्रति एकड़ मिल जाती हैं। खाद वाली फसल भाद्रपद (अगस्त) में गाढ़ देनी चाहिए। पकी हुई फसल पोष तक काट ली जाती है और पीट कर दाना छुड़ाना पड़ता है।

वितरण और व्यवसाय—इसका व्यवसाय भी अन्तरप्रान्तीय व्यवसाय की साधारण रीति द्वारा होता है।

उपयोग और गुण—ग्वार की हरी फलियों की तरकारी बनाई जाती है। हरी फसल खाद के लिए या पशुओं को खिलाने के काम आती है। सूखे बीज उबाल कर पशुओं को खिलाये जाते हैं। ग्वार की तरकारी गर्म और दस्तावर होती है।

ग्वार की हरी फलियों के पोषक द्रव्य प्र. श.—जल ८२.५, आमिष-जातीय ३.७, स्नेह ०.२, सर्करायुक्त ९.९, खनिज १.५, केलशियम ०.१३ फो. ०.०५ लोहा .००५८%

(६) चना Gram *Cicer arietinum*

दालवर्ग की फसलों में चने का विशेष महत्व है, क्योंकि इससे नमकीन तथा मीठे कई प्रकार के पकवान बनते हैं। चने का पौधा फुट दो फुट ऊंचा होता है। प्रत्येक फल में एक या दो बीज रहते हैं। चने लाल, पीले, हरे, सफेद, काले और गुलाबी रंग के होते हैं। परन्तु दाल सबकी पीली या हलकी पीली होती है।

जल-वायु—इसके लिए पच्चीस से चालीस इंच वर्षा वाले स्थान अच्छे होते हैं। चने को पाले से बहुत हानि पहुंचती है, इसलिए इन्हें ऐसे स्थानों में बोना चाहिए जहां पाले से बचाव हो सके।

भूमि, जुताई और खाद—बलुआ को छोड़ कर सब प्रकार की भूमि में चने हो जाते हैं। इसके लिए गेहूं जैसी महीन जुताई नहीं करनी पड़ती। चने ढेलों में वो दिये जायं तो वहां भी निकल आते हैं, लेकिन एक-दो बार हल और एक-दो बार बखर अवश्य चलाना चाहिए।

चने को खाद नहीं दिया जाता। इससे पहले वाली फसल को देते हैं। वैसे मिल सके तो प्रति एकड़ एक सौ मन गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट देना चाहिए।

चने के खाद्य पदार्थ—प्र.श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा.पे.	पो. आ.
बीज	१०.३५	२.८८	०.५५	—
भूसा	९.४	०.९६	०.१	२.८

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—तिफन या नारी वाले हल से पंजाब की तरफ पंद्रह सेर, उत्तर प्रदेश में बीस-पच्चीस सेर, मध्यप्रान्त में पच्चीस-तीस सेर और बम्बई की तरफ लगभग पच्चीस सेर बोते हैं। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) है। कहीं-कहीं छींट कर भी बोते हैं। कतारों में नौ इंच से एक फुट का अन्तर रहना चाहिए।

उत्तम बीज—उत्तर प्रदेश और बिहार—एन. पी. १७, २५, ५३, ५८ टी ८५, कावुली २ बड़ा दाना, काबुली ९ छोटा दाना, एस. ४.

मध्य प्रदेश–मध्य भारत—ए. डी ५, ६, डी ८ (गुलाबी) धार २ (गुलाबी) इन्दौर ४ और ७०७.

बम्बई–चाफा (निफाड़) ८१६ दोहद पीला

खरीफ के साथ हेरफेर करना हो तो जुवार या कपास और रबी के साथ ही तो गेहूं या अलसी ठीक होंगे। गेहूं, जव, सरसों या अलसी के साथ चने बो सकते हैं।

निदाई और सिंचाई—निदाई साधारण और सिंचाई जहां आवश्यक हो ।

फसल की तैयारी और उपज—हरे चने बोने के समय से चार-पांच महीने में तैयार हो जाते हैं। पके हुए चने उस समय उखाड़े जाते हैं जब वे करीब-करीब सूखने लगते हैं, क्योंकि पूर्ण सूखने पर उखाड़ने से फल गिर जाते हैं। चने कहीं-कहीं उखाड़े न जाकर काटे जाते हैं। इनकी गहाई खलिहान में बैलों से कराई जाती है। चने की उपज[1] आठ-नौ मन और सिंचाई वाले खेतों से इससे ड्योढ़ी हो जाती है ।

वितरण और व्यवसाय—बहुत से स्थानों में चने के हरे खेत ही बिक जाते हैं और व्यापारी शहरों में ले जाकर बेचते हैं। उपज का १२ प्रतिशत के लगभग बीज में लग जाता है । शेष देश में ही खप जाता है। व्यवसाय अन्तर-प्रान्तीय है ।

उपयोग और गुण—छोटे-छोटे पौधों की कोंपलें साग के काम आती हैं। हरे चने कच्चे, आग में भूंज कर या उनकी सब्जी बना कर खाते हैं। सूखे चने के कई पदार्थ बनते हैं। इन्हें बालू में भून कर भी खाते हैं और सत्तू भी बनाया जाता है। चने पशुओं को विशेषतः घोड़ों के दाने के रूप में दिये जाते हैं। चना खून को साफ करने वाला, दस्तावर तथा ज्वरनाशक होता है ।

चने के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज	के.	फा.	लो.
९.८	१७.९	०.१९	६१.२	२.७	०.१९	०.२४	.००७८

(७) चवली, बोरा, बरबटी Cowpea *Vigea Catiang* और *Vigna sinensis*

इसका पौधा लता-सा होता है। फलियां आठ-दस इंच से एक

१. कृषि-पंडित श्री वलायती राम नम्बरदार, जिला लुधियाने ने लगभग ४६ मन उपज दिखाई : Indian Farming, July 1953 Supplement

फुट लम्बी होती हैं ।

जलवायु—उष्ण और तर तथा तीस-पैन्तीस इंच वर्षा वाले स्थान उत्तम होते हैं ।

भूमि, जुताई और खाद—वलुआ-दुमट में यह अच्छी होती है । जुताई के लिए एक बार हल और दो बार बखर चलाना चाहिए । लगभग तीन मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट भी डालना चाहिए ।

चवली में खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	ना.	फा.पे.	पो. आ.	चूना
बीज	१२	३.९३	१.१३	—	०.९८
भूसा	१०	२.००	०.५०	१.४७	—

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—सब्जी के लिए 'फिलीपाईन्स अर्ली' उत्तम जाति है । आठ-दस सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से वर्षारम्भ के समय कतारों में जिनमें फुट-डेढ़ फुट का अन्तर हो बोना चाहिए । यदि हरे खाद के लिए बोना हो तो बीज ड्योढ़ा डालना चाहिए और छींट कर बो सकते हैं । बीज के लिए नं. ३८७ अच्छी होती है । हेरफेर जुवार वा कपास के साथ अच्छा होगा । यदि इसे खाद के लिए उपजाया जाय तो इसके बाद गेहूं लेना चाहिए । इसे कहीं, कहीं मक्का के साथ बो कर हरे चारे के काम में लाते हैं ।

निंदाई और सिंचाई—साधारण निंदाई और जहां आवश्यकता हो, वहां सिंचाई करनी चाहिए ।

फसल की तैयारी और उपज—जाति अनुसार बोने के समय से तीन महीने से लेकर पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है । इसे उस समय काटना चाहिए जब अधिकांश फलियां पक गई हों; लेकिन फटी न हों । इसे भी खलिहान में बैलों से गहा कर तैयार करते हैं । बीज की उपज दस मन तथा उससे दूनी उपज भूसे की हो जाती है । हरी फलियां तरकारी के लिए तोड़ी

जायं तो लगभग ४० मन हो जाती हैं। हरी लतायें चारे के लिए काटी जायं तो लगभग २०० मन मिल जायंगी।

वितरण और व्यवसाय—हरी फलियां तरकारी के लिए बिकती हैं। बीज का व्यवसाय साधारण रीति से होता है। इसकी खपत देश में ही हो जाती है।

उपयोग और गुण—हरी फलियों की तरकारी बनाई जाती है। सूखे बीज की दाल बनाते हैं। पशुओं के दाने के लिए भी यह काम में आती है। चवली की तरकारी हल्की, दस्तावर परन्तु कुछ बादी करती है।

चवली के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्कराजातीय	खनिज	के.	फा.	लो.
१२.०	२४.६	०.७	५५.७	३.२	०.०७	०.४९	०.००३८

(८) तूवर, रहर, अरहर Tur *Cajanas cajan*

जाति अनुसार इसके पौधे खड़े या फैलने वाले, गुच्छेदार या फैली हुई फलियों वाले होते हैं। इसके बीज सफेद, बादामी, काले या भूरे होते हैं। पौधे चार-पांच फुट से लेकर सात-आठ फुट ऊंचे हो जाते हैं।

जलवायु—बीज उष्ण और तर वातावरण में अच्छे अंकुरते हैं। तूवर के फूलते समय यदि धूप अच्छी रहे तो फल अधिक बैठते हैं। उन दिनों में बादल हो जायं और कहीं वर्षा अधिक हो जाय तो फूल झड़ जाते हैं। वर्षा के विचार से तीस-चालीस इंच वर्षा वाले स्थान उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए कछार-दुमट मिट्टी अच्छी होती है, तूवर जहां जुवार-बाजरे के साथ बोई जाती है वहां तो जैसी उनके लिए जुताई होगी वहीं तूवर के लिए होगी। जहां अकेली बोना हो वहां गर्मी की जुताई के बाद और पहली वर्षा के बाद एक बार हल और एक बार बखर चलाकर बो देना चाहिए। तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सूपर-फासफेट भी देना चाहिए।

तूवर के खाद्य पदार्थ प्र.श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो.आ.
बीज	१०	३.३८	०.६	२.२
भूसा	१०	१.७८	—	—
डंडियां	—	०.४६	—	—

इसकी एक साल में एक ही फ़सल होती है। सो दूसरे साल मक्का, जुवार या गेहूं जैसी फसल लेना उत्तम होगा। मिश्रित फसल जुवार और बाजरे के साथ होती है। कहीं-कहीं कपास के साथ भी कुछ कतार लगा देते हैं।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—खड़ी जाति में टी ५१ और फैलने वाली में टी ८०, उत्तर प्रदेश में सी. १७,६६ और १३२, मध्य प्रदेश में इ. वी. ३ (सफेद) और इ. वी. ३८ (बादामी) तथा बम्बई प्रान्त में ८४ अच्छी है। अरगड़ा या नाली वाले हल से छः-सात सेर बीज प्रति एकड़ बोना चाहिए। छोटी जाति की तूर के लिए कतारों में अन्तर डेढ़ फुट का और अधिक ऊंची तथा फैलने वाली के लिए दो फुट रखना चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर फुट-डेढ़ फुट का ठीक होगा।

निंदाई और सिंचाई—प्रारम्भ में पौधों की बाढ़ बड़ी धीरे-धीरे होती है, सो उस समय दो-तीन बार निंदाई होनी चाहिए; वरना घासपात इसके पौधों को दबा देंगे। सिंचाई जहां आवश्यक हो करनी चाहिए। साधारणतः नहीं करनी पड़ती।

फ़सल की तैयारी और उपज—जल्दी तैयार होने वाली पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) तथा देरी वाली चैत्र (अप्रैल) तक होती है। इसे काट कर पिंडियां बांध दी जाती हैं और खलिहान में ले जाकर पीट करके बीज छुड़ाते हैं। छोटे पौधे वाले तूवर की उपज छः-सात मन तथा बड़े पौधे वाली जो देरी से पकती है उसकी उपज बारह से पन्द्रह मन तक हो जाती है। अच्छी उर्वरा भूमि में बीस-बाईस मन तक भी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—आवश्यकतानुसार बीज तथा घर-खर्च

के लिए रख कर शेष का वितरण अन्तरप्रान्तीय बहुत होता है। बिहार तथा उ. प्र. की दाल कानपुर की दाल के नाम पर बहुत बिकती है ।

उपयोग और गुण—दाल खाने के काम आती है—चूरी पशुओं को खिलाई जाती है। तूवर की डंडियां जलाने तथा टोकरियां बनाने के काम आती हैं। तूवर की दाल खून को साफ करने वाली होती है।

तूवर की दाल के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करा युक्त	खनिज	के.	फा.	लो.
१५.२१	२५.३	१.७	५७.२	३·६	०.१४	०.२६	०.००८८

(९) मसूर Lentil *Lens Culinaris* (*esculenta*)

मसूर का पौधा व्याधिग्रस्त चने के पौधे जैसा नजर आता है। फल चने के फल जैसे लेकिन कुछ लम्बे होते हैं। बीज का छिलका भूरा लेकिन दाल सेन्दूरी रंग की होती है।

जलवायु—चने की अपेक्षा सर्दी सहन करने की शक्ति इसमें विशेष होती है ।

जमीन, जुताई और खाद—मटियार-दुमट मिट्टी में यह अच्छी होती है। खाद पहली फसल को अच्छा दिया हो तो इसे देने की जरूरत नहीं। वैसे दो-ढ़ाई मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट देना अच्छा होगा। जुताई साधारण करना होती है । जहां धान के बाद इसे लेते हैं वहां तो धान के काटने के पहले इसके बीज छींट देते हैं सो जुताई नहीं करनी पड़ती।

मसूर के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.
बीज	८.०३	३.७४	१.५८
भूसा	१०·२३	०·८६	

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी बीजों में एन. पी. ११

और एन. पी. हरिब्रिड नं० १ अच्छी उपज देती हैं। बंगाल में पांच-छः सेर, बिहार व उत्तर प्रदेश में दस-बारह सेर तथा पंजाब में लगभग पन्द्रह सेर के करीब बीज छींट कर बोते हैं। इसे कतारों में भी बो सकते हैं, जिनकी दूरी छः से नौ इंच हो। इसे कार्तिक-पौष (अक्तूबर-नवम्बर) में बोना चाहिए। इसे जव, सरसों, गेहूं इत्यादि के साथ भी बो सकते हैं, जहां धान के बाद बोई जाती है वहां उससे हेरफेर हो जाता है।

निदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—फाल्गुन (फरवरी) में चने की भांति उखाड़ कर खलिहान में तैयार की जाती है। उपज भूमि अनुसार पांच-छः मन से दस-बारह मन तक हो जाती है। भूसे की उपज लगभग बीज के बराबर आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अन्तरप्रान्तीय।

उपयोग और गुण—इसकी दाल दो प्रकार की होती है—एक खड़ी यानी दोनों दल चिपके हुए हों और दूसरी दर्रा यानी जिसके दोनों दल अलग-अलग हों। ऊपर का भूरा छिलका दोनों में से निकल जाता है। दाल खाने के काम आती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। इसकी दाल में आमिष-जातीय पदार्थ की मात्रा काफी रहती है। यह सूखी, गरम तथा मलरोधक होती है। कफ़-पित्त का नाश करती है।

मसूर की दाल के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त
१२.४	२५.१	०.७	५९.७
खनिज	के.	फो.	लोहा
२.१	०.१३	०.२५	.००२

(१०) मटर, वटाला, वटाणा Peas *Pisum sativum*

मटर दो प्रकार की होती है। एक छोटी सफेद दाने वाली दूसरी मोटे दाने वाली, जिसके बीज पर झुर्रियां पड़ी हुई होती हैं। दूसरी मटर सब्जी के काम में अधिक आती है। यह पहली से मीठी होती है। इसके

पौधे जाति अनुसार एक फुट से लेकर चार-पांच फुट ऊंचे होते हैं।

जलवायु—तीस-पैंतीस इंच वर्षा वाले स्थान उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—वलुआ और भारी मटियार को छोड़ कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। जुताई कुछ महीने करना होती है। दो बार हल और दो बार बखर अवश्य चलाना चाहिए। डेढ़ सौ मन के लगभग गोबर का खाद और दो-ढ़ाई मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट विशेषतः वलायती मटर के लिए अवश्य देना चाहिए।

मटर के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
बीज	१०.१२	३.५२	०.८४	१.०१
भूसा	१०.००	२.४२	०.७२	१.२४

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जाति में ए. पी. २९ अर्ली वेजर, 'बोनी विली' बहुत अच्छी जातियां हैं। सब्जी वाली मटर के बीज उसकी बाढ़ के अनुसार पन्द्रह से तीस सेर और दूसरी के लगभग बीस सेर प्रति एकड़ बोना चाहिए। बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अ. न.) है। कतारें एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। मटर गेहूं और जौ के साथ भी बोई जाती है। हेरफेर मक्का के साथ हो सकता है।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई दो-तीन वार करना होगी। जिस मटर के लिए सहारे की आवश्यकता हो उसके लिए वैसा प्रबन्ध करना चाहिए। सिंचाई सब्जी वाली मटर के लिए अवश्य करना होगी।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल काटने योग्य हो जाती है; परन्तु हरी फलियां तीसरे महीने से ही मिलना प्रारम्भ हो जाती हैं। सूखी मटर बैलों से गहा कर तैयार करते हैं। मटर की उपज बरानी खेतों में सात-आठ मन और सिंचाई वाले में इस-की ड्योढ़ी हो जाती है। इतना ही भूसा भी हो जाता है। हरी फलियां सब्जी वाली मटर से तीस-चालीस मन मिल जाती हैं।

वितरण और व्यवसाय—अन्तरप्रांतीय।

उपयोग और गुण—हरे दाने सब्जी के काम में आते हैं। सूखे की दाल बनती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। वैद्यों के मतानुसार मटर मधुर, बलदायक, पित्तनाशक और दस्तावर होती है।

मटर की दाल के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज	के.	फा.	लो.
१६	१९.७	१.५	५६.६	२.१	०.०७	०.०३	०.००४४

(११) मूंग Moong *Phaseolus radiatus*

इसका पौधा एक फुट से लेकर अच्छी जमीन में दो-ढाई फुट ऊंचा होता है। फलियां साफ पतली और चार-पांच इंच लम्बी होती हैं।

जलवायु, भूमि, जुताई और खाद—उड़द जैसा।

मूँग के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.
बीज	१०.६४	३.८२	०.८६
भूसा	१०.९७	१.०७	०.७२

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में एन. पी. १८, २८ और ३६, कानपुर नं० १ कृष्णा नं. ११ (मध्य भारत) उत्तम है। बीज की मात्रा पांच सेर प्रति एकड़। बोने का समय—वर्षारम्भ या धान के बाद आश्विन-कार्तिक में धान के खेतों में। हेरफेर धान के साथ हो जाता है। खरीफ मूंग की फसल के बाद रबी की कोई भी फसल ले सकते हैं। मिश्रण बहुधा जुवार के साथ होता है। जुवार के साथ मूंग और रहर दोनों बो देते हैं। अकेली फसल बोई जाय तो कतारों में डेढ़-दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—जाति अनुसार तीन महीने से लेकर छः महीने में तैयार होती है। खलिहान में बैलों से गहा कर तैयार करते हैं। उपज पांच मन से लेकर दस मन तक हो जाती है। भूसे की उपज बीज से दूनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अन्तरप्रांतीय

उपयोग और गुण—सब दालों में जल्दी पचने वाली दाल मूंग की होती है। इनसे पापड़ भी बनते हैं तथा अन्य पकवान भी बनाये जाते हैं। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

मूंग की दाल के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज	के.	फा.	लो.
१०.४	२४.०	१.३	५६.६	३.६	.१४	.२८	.००८४

(१२) मोठ, माथ, मटकी Kidney Bean
Phaseolus aconitifoluis

इसके पौधे एक फुट ऊंचे लेकिन फैलने वाले होते हैं। पौधों पर रोएं बहुत होती हैं। फलियां मूंग की फली जैसी लेकिन लम्बाई में छोटी और प्रत्येक दो-दो बीज के बाद सिकुड़ी हुई होती हैं। बीज का रंग भूरा होता है।

जलवायु, भूमि-जुताई और खाद—मोठ, उड़द और मूंग की अपेक्षा कम वर्षा वाले स्थानों में हो जाती है। भूमि भी हल्की ही इसके लिए उत्तम है। जुताई और खाद उड़द जैसा।

बीज, बोआई, हेरफेर और मिश्रण—नम्बरी जाति में नं. ८८ और १३५ (मध्य प्रदेश) अच्छी है। अकेली बोना हो तो चार सेर बीज प्रति एकड़ काफी होंगे। बहुधा ज्वार-बाजरे के साथ ही बोते हैं, सो दो सेर बीज डालना चाहिए। अकेली बोई जाय तो कतारों में डेढ़ फुट का अन्तर उत्तम होता है। हेरफेर रबी की फसल के साथ उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—कार्तिक मार्गशीर्ष (अक्तूबर-नवम्बर) में तैयार हो जाती है। खलिहान में मूंग की भांति तैयार करते हैं।

उपयोग और गुण—इसे चने के समान भूंज कर भी खाते हैं, दाल

खाने के काम में आती है। पापड़ भी बनाये जाते हैं। इसकी दाल मूंग की दाल के समान शीतल और जल्दी पचने वाली होती है। कफ-पित्त के विकारों को दूर करती है।

(१३) सायबीन Soybean *Lycine max* (*Hispida*)

इसकी खेती चीन और जापान में अधिक होती है। जाति अनुसार पौधों की ऊंचाई डेढ़-दो फुट से लेकर चार-पांच फुट तक होती है। फलियां रोएँदार एक इंच से लेकर ढाई इंच तक होती हैं। बीज हरे, पीले, भूरे, काले ऐसे कई रंग के होते हैं।

जलवायु—ठंडा वातावरण और तीस से पचास इंच वाले स्थान अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद— दुमट या मटियार-दुमट इसके लिए अच्छी होती है। गर्मी में एक बार हल से जोतकर खाद दे करके बरसात आते ही बखर से तैयार करके बो सकते हैं। लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद और लगभग तीन मन हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट देना चाहिए।

सायबीन में खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	ना.	फा. पे.	पो-आ
बीज	४.७७	६.५१	१.३६	१.८२
भूसा	—	०.९	०.१२	०.८९

बीज, बोआई, मिश्रण और हेर-फेर—वर्षारम्भ के समय आठ-दस सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए। जाति अनुसार कतारें डेढ़-दो फुट दूर होनी चाहिए। हरे खाद के लिए बोना हो तो लगभग पन्द्रह सेर बीज गिराना होगा। हेर-फेर के लिए दूसरे वर्ष में कपास या रबी की फसल लेनी हो तो गेहूं बोना उचित होगा।

निंदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—जब पत्ते पीले पड़कर बहुत से झड़ जायं तब काट लेना चाहिए। माघ (जनवरी) में तैयार हो जाती है। इसे

खलिहान में बैलों से गहा कर तैयार करते हैं। उपज लगभग पन्द्रह मन तक हो जाती है। बीज से ड्योढ़ी उपज भूसे की आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अभी इसकी खेती बहुत कम होती है। व्यवसाय भी नहीं के बराबर है। अन्य देशों में इसके कई पकवान बनाते हैं।

उपयोग और गुण—पोषक द्रव्यों की मात्रा के हिसाब से देखा जाय तो इसकी दाल सब दालों में उत्तम है। परन्तु न तो यह जल्दी पकती है और न अच्छी स्वादिष्ट है। हरे पौधे खाद के लिए अथवा पशुओं को खिलाने के काम आते हैं। हरी फलियां तरकारी के काम आ सकती हैं। बीज से रोटी-बिस्किट इत्यादि बना सकते हैं। इनसे तेल भी निकाला जाता है, जिसका उपयोग तिल, मूंगफली या अलसी के तेल की भांति होता है।

सॉयबीन के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज	केलशियम	फो.	लोहा
८.१	४३.२	१९.५	२०.९	४.६	७.२	०.६९	०.११५

(१४) सेम, पोपट, वाल वल्रोर Sem *Dolichos Lablab*

इसके खेत गुजरात तथा दक्षिण भारत में बोते हैं। उत्तर भारत में अधिकांश लोग बाडियों के घेरों पर अथवा घर के आसपास मचानों पर कुछ लताएँ चढ़ा देते हैं, जिनसे तरकारी के लिए फलियां मिल सकती हैं। ये कई प्रकार की होती हैं। किसीके बीज चपटे तो किसीके गोल, किसी-के बड़े तो किसीके छोटे। गुजरात में सूरती, पापड़ी नाम की सेम तरकारी के लिए अच्छी मानी गई है।

जलवायु—तीस-चालीस इंच वर्षा वाले स्थान अच्छे होते हैं।

सेम में खाद्य पदार्थ प्रतिशत—

	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.
बीज	९.६	३.९८	१.०३
भूसा	१०.०	.०९१	

भूमि, जुताई और खाद—मटियार-दुमट जमीन इसके लिए अच्छी होती है। गर्मी की जुताई के बाद वर्षारम्भ के समय बखर से भूमि तैयार करके बोते हैं। हड्डी का चूरा या सूपरफासफेट भी लगभग तीन मन प्रति एकड़ के हिसाब से देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—वर्षारम्भ के समय इसके बीज बोये जाते हैं। थोड़े बीज तो खुर्पी से गढ़े खोद कर बो सकते हैं और लताएँ घेरे या मचान पर चढ़ा देते हैं। खेतों में नारी वाले हल से या अरगड़े से बो सकते हैं। खरीफ वाली फसल के लिए लगभग पन्द्रह सेर और रबी वाली के लिए बीस सेर बीज प्रति एकड़ लगता है। पंक्तियों में खरीफ वाली के लिए चार फुट और रबी वाली के लिए दो-ढाई फुट का अन्तर उत्तम होगा। इसे जुवार-बाजरे के खेतों में भी बो देते हैं। हेरफेर के लिए दूसरे साल रबी के अनाज की फसल लेनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—खरीफ वाली से मार्गशीर्ष (नवम्बर) में फलियां मिलना प्रारम्भ हो जाती है। रबी वाली से चैत्र में फलियां मिलती हैं। सूखी फसल पांच-छः महीने में तैयार होती है, सो काट कर खलिहान में बैलों से गहा कर तैयार कर लेते हैं। बीज की उपज दस-बारह मन और उतनी ही भूसे की हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—साधारण अन्तरप्रान्तीय

उपयोग और गुण—इसकी फलियों से सब्जी बनाते हैं। सूखे बीज से दाल बनाई जाती है। इसकी तरकारी सूखी, मंदाग्नि करने वाली होती है। वायु-विकार भी बढ़ता है।

सेम की दाल के पोषक द्रव्य प्रतिशत—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज	केलशियम	फा.	लोहा
९.६	२४.९	०.८	६०.१	३.२	०.०६	०.४५	.००२

३—तिलहन की खेती

तिलहन अर्थात् उन फसलों की खेती, जिनसे तेल निकाला जाता है। ऐसी फसलों में अलसी, एरंडी, कुसुम, खसखस, तिल, मूंगफली, रामतिली, सरसों, तोरिया, राई और तारामीरा की गणना है। वैसे तेल खोपरे और कपास का भी होता है; परन्तु इनमें से पहले की गणना वार्षिक फसलों में न होकर फलों में होती है। इसलिए इसका वर्णन 'फलों की खेती और व्यवसाय' में दिया गया है और चूंकि कपास का सम्बन्ध अधिकतर रूई या कपड़ों से है इसलिए इसका वर्णन ताग की फसलों में दिया है। इनके सिवाय करंज और महुए से भी तेल निकाला जाता है; परन्तु इनके बीज पेड़ से प्राप्त होते हैं। इनके लिए जिसे खेती कहना चाहिए, नहीं की जाती।

तिलहन की खेती से हमें बीज के सिवाय तेल और खली भी मिलती है। कुछ दिन पूर्व तेल का उपयोग खाने, जलाने, उबटन लगाने, इत्र बनाने, गाड़ियों के पहियों और चरखे या अन्य यंत्रों में लगाने, चमड़े की चीजों को मुलायम रखने अथवा किवाड़-पाट इत्यादि लकड़ी की वस्तुओं पर लगाने के लिए ही किया जाता था और खली पशुओं को खिलाई जाती थी।

वर्तमान समय में उपर्युक्त सूची बहुत बड़ी हो गई है। तेलों से साबुन भी बनाया जाता है, ग्लिसरीन प्राप्त करते हैं, मोमजामा (oil cloth) बनाते हैं और सबसे अधिक तो वनस्पति घी के लिए इनका उपयोग किया जाता है। खलियां पशुओं को खिलाने या जलाने के काम में लाई जाती हैं।

बीज से तेल निकालने के लिए अधिकतर देशी घानी ही काम में लाई जाती है। कहीं-कहीं कोल-भील इत्यादि जातियां बीज को कुचल कर गरम करके दबाव देकर निकालते हैं। वर्तमान समय में कई कारखाने भी तेल निकालने के खुल गये हैं; परन्तु खाने के लिए तो देशी घानी का तेल ही उत्तम होता है।

तेल निकालने की घानी के सिवाय दूसरी युक्तियां—

(१) **रोटरी घानी**—यह देशी घानी जैसी ही होती है परन्तु खूंट और

लाठ दोनों लोहे के होते हैं, और देशी घानी में जैसे लाठ घूमती है वैसे इसमें लाठ और खूंट दोनों ही घूमते हैं। यह एंजिन से चलाई जाती है। इसमें कई घानियां एकसाथ लगी रहती हैं। दस घानियों से दस घण्टे में करीब ६० मन बीज का तेल निकाला जाता है। देशी घानी की अपेक्षा रोटरी घानी से दो-चार शतांश तेल भी अधिक निकलता है।

(२) **हाइड्रालिक प्रेस**—इसमें बीज को कुचलने या दलने के पश्चात भाप से गरम करके कपड़ों में (जो इसके लिए एक खास प्रकार के होते हैं) दबा कर तेल निकालते हैं। दबाने से तेल निकल जाता है और खली कपड़ों में रह जाती है जो बाद में निकाल लेते हैं।

(३) **एक्स्पेलर**—इनमें बीज कुचल कर या वैसे ही डाल देते हैं। यंत्र द्वारा बीज दबाये जाते हैं। यंत्र एक जालीदार बेलन (Cylinder) में रहता है। सो तेल इसके छिद्रों से बाहर निकल आता है और खली यंत्र के दूसरे मुंह की तरफ से बाहर निकल जाती है।

(४) **रासायनिक उपचार**—इसमें तेल के कुचले हुए बीज पर ऐसा रासायनिक पदार्थ डाला जाता है कि जिसमें तेल घुल जाता है। इसके लिए बहुधा बेनजीन (Benzene) काम में लाते हैं। इसके उपयोग से करीब-करीब सब तेल निकल आता है। कहीं-कहीं खलियों से तेल निकालने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। जब तेल बेनज़ीन मिश्रण निकल आता है तो उसे अर्क खींचने की भांति गरम करके बेनज़ीन को अलग कर लेते हैं।

इस रीति से तैयार किया हुआ तेल खाने के काम में नहीं आता, क्योंकि उसमें कुछ बेनज़ीन रह जाता है। खली भी पशुओं को खिलाने के काम की नहीं रहती, क्योंकि उसका स्नेह सब खींच लिया जाता है। वह बेकार हो जाती है। केवल खाद के लिए अच्छी रहती है।

(१) अलसी, तीसी Linseed *Linum usitatissimum*

अलसी का पौधा नीले या सफेद फूल वाला दो-ढाई फुट ऊंचा होता है।

इसके दो वर्ग हैं। एक के पौधे दौंजी अधिक फेंकते हैं और दूसरे वर्ग के कम। अच्छी तरी वाली भूमि में जैसी बिहार में होती है दौंजी फेंकने वाली अलसी अच्छी होगी। मध्य प्रदेश तथा राजपुताने की तरफ कम दौंजी फेंकने वाली बोनी चाहिए। अलसी के बीज भूरे, पीले और सफेद ऐसे तीन रंग के होते हैं। बीज के आकारानुसार अलसी छोटी-बड़ी ऐसी दो प्रकार की होती है।

जलवायु—तीस-पैन्तीस इंच से लेकर पचास-साठ इंच वर्षा वाले स्थान अलसी के लिए अच्छे होते हैं। फूलते समय बादल आ जायं तो गर्भाधान ठीक नहीं होता।

भूमि, जुताई और खाद—मटियार-दुमट मिट्टी में अलसी अच्छी होती है। जुताई गेहूं जैसी महीन होनी चाहिए। खाद गोबर का दो सौ मन के लगभग देना अच्छा होगा। खली या एमोनियम सल्फेट का खाद देना हो तो लगभग १० मन खली या ढाई मन एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

अलसी में खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	जल	ना.	फा. पे.	पो. आ.
बीज	६·३	३·६८	१·५३	१·१३
भूसा	—	१·१६	०·१९	२·८२

बीज, बोआई मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में उत्तर प्रदेश के लिए कानपुर ४७७ और ११९३ मध्य प्रदेश के लिए ई. बी. ३ और ५५ मध्य भारत के लिए टी ६ (मालवे के लिए) और बुन्देल-खण्ड के लिए नं० १२०६ अच्छी सिद्ध हुई है। एन. पी. १२,१२१ १२४ और ४५ भी अच्छी जातियां हैं। नं० ४५ पर हरदे का असर नहीं होता। बिहार के लिए बीहार नं० १ अच्छी है। अलसी कार्तिक (अक्तूबर) में बोई जाती है। कहीं-कहीं छींट कर भी बोते हैं। इसे नाई या तिफन से बोयें तो कतारों में नौ इंच का अन्तर रखना चाहिए। लगभग छः सेर बीज प्रति एकड़ बोना होंगे। जब गेहूं, जौ, चना के साथ बोई जाय तो दो सेर बीज प्रति एकड़ काफी होंगे। हेरफेर—जुवार, कपास, चना या मक्का के साथ उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई प्रायः नहीं की जाती। सिंचाई जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—इसे उस समय उखाड़ना चाहिए जब फल पक जायं; लेकिन पौधे टूटने जैसे न हों। कहीं-कहीं पौधे हंसुए से काटे भी जाते हैं। बाद में खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। अलसी छः-सात मन प्रति एकड़ की उपज अच्छी माननी चाहिए। वैसे कहीं-कहीं बीस-बाईस फी मन तक की उपज भी आई है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का तीन-चार शतांश भाग बीज के लिए रखकर शेष का अन्तरप्रान्तीय वितरण और कुछ का निर्यात भी होता है। इसका व्यवसाय बीज, तेल और खली तीन पदार्थों में होता है। शुद्ध अलसी में ३९ से ४८% तक तेल रहता है; परंतु देशी घानी से पचीस-तीस शतांश तक निकलता है। रोटरी घानी या प्रेस से तैंतीस से छत्तीस शतांश तक निकल आता है। अलसी का आयात तो नहीं लेकिन निर्यात काफी है।

उपयोग और गुण—अलसी के बीज और खली पशुओं को खिलाये जाते हैं। तेल खाने और जलाने के काम आता है। लकड़ी पर लगाने तथा छापे की रोशनाई में भी इसका उपयोग होता है। खली खाद के काम भी आती है। अलसी बलकारक, पित्तनाशक और वात को दूर करने वाली होती है। उवाली हुई अलसी जुलाब का काम करती है।

पशुओं के लिए अलसी के पोषक द्रव्य प्र. श.—

	बीज	खली
जल	६.६	८.७
आ. जा.	२०.३	२७.०
स्नेह	३७.१	१३.२
सर्करा जा.	२८.८	३७.६
खनिज	२.४	६.८

(२) एरंडी Castor *Ricinus communis*

खरीफ में होने वाली एरंडी के पौधे आठ-दस फुट ऊंचे और रबी

वाली के चार-पांच फुट ऊंचे होते हैं। बीज कठोर छिलके वाले कई रंग के होते हैं।

जलवायु—पचीस-तीस इंच से लेकर पचास-साठ इंच वर्षा वाले स्थान में एरंडी हो जाती है।

भूमि, जुताई और खाद—खरीफ वाली के लिए बलुआ-दुमट या दुमट और रबी वाली के लिए दुमट या मटियार-दुमट अच्छी होती है। खरीफ की फसल अकेली कम बोई जाती है। सो जिस फसल के साथ बोते हैं उसके लिए जो जुताई होती है वही इसके लिए भी है। रबी की फसल अकेली लगाई जाती है, साधारण जुताई करनी होती है। खाद लगभग एक सौ मन प्रति एकड़ देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नंवरी जातियों में बंबई न २० और मद्रास में आर. सी. २१५ अच्छी हैं। खरीफ एरंडी की कतारें जुवार, बाजरा कपास या तूवर के साथ लगा देते हैं। रबी में धान काटने के बाद जल्दी से जमीन तैयार करके एरंडी और सेम बो देते हैं। अकेली बोई जाय तो खरीफ के लिए सात-आठ सेर और रबी के लिए दस सेर बीज प्रति एकड़ लगेंगे। सिंचाई की सुविधा हो तो खरीफ वाली एरंडी को जेष्ठ (मई) में, और नहीं तो वर्षा होने पर बोना चाहिए। रबी की फसल आश्विन (अक्तूबर) में बोई जाती है। खरीफ की कतारें सात-आठ फुट तथा रबी की दो फुट की दूरी पर होनी चाहिए। कतारों में पौधे तीन फुट और दो फुट की दूरी पर होने चाहिए।

निदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—खरीफ वाली पोष-माघ (दि. ज.) से पकना शुरू होती हैं। सो ज्यों-ज्यों फल पकते जायं उन्हें तोड़ते जाना चाहिए। उसी भांति रबी की फसल फाल्गुन (फरवरी) से पकना शुरू होती है। एरंडी की उपज छः मन से लेकर दस मन तक पाई जाती है। रबी की अपेक्षा खरीफ की उपज अधिक होती है।

वितरण और व्यवसाय—छिलका सहित बीज पर तेल की गणना की जाय तो ४० से ४४% तक रहता है। इसका व्यवसाय बीज, तेल और

खली ऐसे तीन पदार्थों के रूप में होता है।

उपयोग और गुण—एरण्डी के बीज में एक प्रकार विष रहता है। इससे इसकी खल पशुओं को नहीं खिला सकते। भाप द्वारा निकाला हुआ तेल जुलाब के काम आता है। जलाने, कलों में देने तथा लिनोलियम (Linolium) इत्यादि बनाने के काम भी आता है। खली खाद के काम में आती है। एरंडी का तेल दस्तावर और बालों को मुलायम करने वाला होता है।

(३) कुसूम, करड़ी Safflower *Carthamus tinctorious*

वैसे कुसूम की अनेक जातियां हैं परन्तु दो मुख्य हैं। एक फूल वाली जिनकी पंखड़ियों से रंग निकाला जाता है और दूसरी से तेल। कुसूम का पौधा जाति अनुसार डेढ़ फुट से लेकर तीन फुट तक ऊंचा होता है। बीज सफेद होते हैं।

जल-वायु—इसके लिए पचीस से चालीस इंच वर्षा वाले स्थान और ठंडा जल- वायु उत्तम होता है।

भूमि, जुताई और खाद—हलकी बलुआ-दुमट भूमि इसके लिए अच्छी होती है। साधारण जुताई और लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद उत्तम होगा। खली देना हो तो सात-आठ मन देनी चाहिए।

कुसूम में खाद्य पदार्थ बीज २.१२ प्रतिशत नाइट्रोजन, भूसे में १.४० प्रतिशत नाइट्रोजन

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—एन. पी. १ नम्बर बीज के लिए अच्छी है। एन. पी. १. बम्बई गड़ग २-१०-१. म.प्र. एन ७, निफाड़ ६.३० अच्छी जातियां हैं। आठ-दस सेर बीज प्रति एकड़ कतारों में बोना चाहिए। कतारों में डेढ़ फुट का अन्तर उत्तम होगा। बोने का समय आश्विन-कार्तिक है। हेरफेर कपास या मूंगफली के साथ अच्छा होगा।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो। निंदाई के समय साग वाले पौधों को छह-छह इंच की दूरी पर और बीज वालों को एक-

एक फुट की दूरी पर कर देना अच्छा होगा ।

फसल की तैयारी और उपज—रंग निकालने के लिए आजकल कुसूम की खेती नहीं होती । तेल वाली जाति की ही होती है । बीज की उपज दस-बारह मन तक हो जाती है । जब पौधे सूख जाते हैं तो खलिहान में पीट कर बीज छुड़ाना होता है, क्योंकि इसमें कांटे होते हैं । फसल फाल्गुन-चैत्र तक हो जाती है ।

वितरण और व्यवसाय—फूल, बीज, तेल और खली ऐसे चार पदार्थों के रूप में इसका व्यवसाय होता है । रंगरेज़ फूलों का रंग निकाल कर कुसूमल रंग तैयार करते हैं । बीज में २५ से ३० शतांश तक तेल रहता है । घानी से निकालने में तीन-चार शतांश कम आता है ।

उपयोग और गुण—छोटे पौधों की तरकारी बनाई जाती है । यदि बीज के छिलके निकाल कर तेल निकाला जाय तो वह साफ और पीले रंग का होता है । उबाल कर ठंडे पानी में डाला जाय तो एक प्रकार का सीमेंट बन जाता है, जिससे कांच और 'टाइल्स' जमाते हैं । बीज भूंजकर भी खाये जाते हैं । खली पशुओं को खिलाई जाती है और खाद का काम भी देती है । बीज दस्तावर होते हैं । गठिया, बाई और लकवे में इसका उपयोग किया जाता है ।

कुसूम की खली में पशुओं के लिए पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज
६.८३,	४२.१३	६.७२	३४.५१	५.४३

(४) खसखस पोस्त Poppy *Papaver somniferum*

इसकी खेती अफीम के लिए की जाती है; परन्तु बीज का उपयोग भी बहुत होता है । बीज राजगिरे के आकार के परन्तु बहुत छोटे होते हैं । पौधे दो-ढाई फुट से लेकर तीन-चार फुट ऊंचे हो जाते हैं । इसके फूल कई रंग के होते हैं । फल डोड़े कहलाते हैं ।

जल-वायु—तीस से पचास इंच वर्षा वाले स्थान में अफीम अच्छी

होता है। पाले से इसको बहुत हानि पहुंचती है। जब फलों से दूध (अफीम) निकालने का समय हो उस समय रातें ठंडी रहें तो दूध फलों पर अच्छा जम जाता है और उसे इकट्ठा करने में सरलता होती है।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए दुमट या बलुआ-दुमट जमीन अच्छी होती है। खसखस रबी की फसल है और सिंचाई से ही हो सकती है। इसके पहले मक्का की फसल ली जाती है जिसे बहुत-सा खाद देते हैं, ताकि खसखस को नहीं देना पड़े। यदि इसे ही देना हो तो सात-आठ मन खली या दो मन एमोनियम सलफेट प्रति एकड़ देना चाहिए। जुताई काफी अच्छी करनी होती है। अन्तिम जुताई के बाद क्यारियां और पानी देने की नालियां बना लेनी चाहिएं।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—बीज पिछली फसल के ही बोने चाहिए। प्रति एकड़ दो-ढाई सेर बीज काफी होंगे। इन्हें छींट कर बोते हैं। इनके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर) है। इसकी पारियों पर लहसुन लगा देते हैं। धनिया और ज़ीरा भी थोड़ा छींट दिया जाता है। अगली फसल के लिए बीज रखना हो तो चुने हुए फल ही रख लेने चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—दोनों काफी करनी पड़ती हैं। हर निंदाई के समय कुछ पौधे उखाड़े जाते हैं ताकि पौधों में दूरी बढ़ाई जा सके और उखाड़े हुए पौधों से सब्जी बनाई जाय। अन्तिम निंदाई तक पौधे छः-छः इंच की दूरी पर कर दिये जाते हैं, सिंचाई साधारणतः चार-पांच बार और कहीं-कहीं अधिक भी करनी होती है। फल जब दूध निकालने की स्थिति पर पहुंचे तो दस-पन्द्रह दिन पहले पानी बन्द कर देना चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—फाल्गुन-चैत्र में फल ऐसे आकार के हो जाते हैं कि उनसे दूध निकाला जा सकता है। फलों पर जब भूरा-भूरा पदार्थ जम जाय और वे कठोर मालूम पड़ने लगें तब उनमें तीन नोक वाले यंत्र से चीरा दिया जाता है। यह कार्य दोपहर बाद होता है। फलों से निकला

हुआ सफेद दूध रात भर में फलों पर जम जाता है और दूसरे दिन सुबह छरपले (दूध इकट्ठा करने का यंत्र) से प्रत्येक डोडे पर से इकट्ठा किया जाता है। दो-चार दिन बाद उसी फल में फिर चीरा देकर दूध निकालते हैं। वैशाख तक फल सूख जाते हैं। सो उन्हें तोड़ लेते हैं और पीट कर दाना छुड़ाते हैं। अफीम की उपज आठ-दस सेर प्रति एकड़ और बीज की दो-तीन मन तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अफीम सरकार ही खरीदती है। बीज का वितरण अन्तरप्रान्तीय होता है। इनमें ४० शतांश तक तेल रहता है। अफीम का निर्यात भी होता है।

उपयोग और गुण—छोटे-छोटे पौधों की तरकारी बनती है। इन्हें सुखा कर भी रख लेते हैं और बाद में सब्जी बना लेते हैं। अफीम औषधि के काम आता है। बीज खाये जाते हैं। उनसे तेल भी निकाला जाता है। चित्रकारों के रंग के लिए खसखस का तेल बहुत उत्तम माना गया है। अफीम, पेचिश, कै, आंखों की व्याधियों में तथा पेटदर्द में भी काम देता है। खली पशुओं को खिलाई जाती है। मनुष्य भी इसे खाते हैं।

(५) तिल Til Ginjelly *Sesamum orientale*

इनमें कुछ जातियां फैलने वाली और कुछ खड़ी होती हैं। पौधों की ऊंचाई जाति अनुसार दो से पांच फुट तक होती है। तिल लाल, सफेद, काले और भूरे ऐसे चार रंग के होते हैं।

जलवायु—पच्चीस से पैन्तीस इंच वर्षा वाले स्थान तिल के लिए अच्छे होते है।

भूमि, जुताई और खाद—तिल अधिकतर हलकी भूमि में ही बोये जाते हैं, वैसे दुमट मिट्टी भी अच्छी होती है। इन्हें अधिकतर जुवार, कपास, बाजरा आदि के खेतों में भी बो देते हैं। यदि अकेले बोना हो तो एक बार हल और दो बार बखर चला कर बो देना चाहिए। खाद इससे पहली फसल को देना अच्छा है या जिस फसल के साथ बोया जाय उसके लिए

जो खाद दिया जाय इसके भी काम आवेगा।

तिल के खाद्य पदार्थ—प्र. श.—

	जल	ना.	फ. पे.	पो. आ.
बीज	५.१	२.९३	१.३	—
पत्ते और डंडी	—	०.५७	०.३	१.१७

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में एन. पी. ३, ७, २९, मद्रास में एस. आई. ८९ अच्छी पाई गई हैं। २९ की अपेक्षा नं० ३ और ७ जल्दी पकती हैं और न ३ नं० ७ की अपेक्षा कम फैलने वाली है। तिल छींट कर बोये जाते हैं। लगभग तीन सेर बीज प्रति एकड़ काफी होंगे। मध्यभारत और गुजरात की तरफ आषाढ़ (जून-जुलाई) में बोते हैं। मध्य-प्रदेश, उड़ीसा और दक्षिण की तरफ तथा उत्तर प्रदेश के तराई वाले भाग में खरीफ और रबी दोनों फसलें होती हैं। खरीफ वर्षारम्भ के समय और रबी आश्विन में बोना चाहिए। बंगाल की तरफ जिस जमीन में पानी बहुत रहता है माघ-फाल्गुन (ज. फ.) तक बोते हैं। तिल जुवार-कपास के साथ भी बोये जाते हैं। इस स्थिति में ये मुख्य फसल की कतारों में आ जाते हैं। हेरफेर जल्दी आने वाले तिल के बाद चने के साथ अच्छा होगा। खरीफ की फसल के साथ हेरफेर करना हो तो बाजरा या छोटे धान के साथ करना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—जाति अनुसार बोने के समय से साढ़े तीन महीने से पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। जब इनके कुछ फल फटने लगें तब काट लेना चाहिए। बाद में पिंडियां बांध कर खलिहान में खड़ी रख देनी चाहिए। ऐसा करने से कुछ दिनों में सब फल फट जायंगे। फिर पिंडियों को उलटा कर डंडे से पीट कर बीज नीचे गिरा लेते हैं और साफ कर लेते हैं।

वितरण और व्यवसाय—तिल, तेल और खली ऐसे तीन पदार्थों

का व्यवसाय होता है। इसके तेल का कुछ निर्यात होता है।

उपयोग और गुण—तिल खाने के काम आते हैं। इनसे गजक और रेवड़ी बहुत बनाई जाती है। तेल से कई सुगंधित तेल बनाते हैं। तेल खाने तथा जलाने के काम भी आता है। खली मनुष्य तथा पशु खाते हैं। इसे खाद के काम भी ला सकते हैं। तिल बलदायक, उष्ण, कफकारक, बाल तथा त्वचा के लिए हितकारी हैं। खूनी बवासीर में मक्खन के साथ पीस कर दिये जायं तो लाभ होता है।

तिल के पोषक पदार्थ प्र. श.—

	बीज	खली
जल	५.१	१०.०७
आ. ज.	१८.३	३१.६६
स्नेह	४३.३	१०.९
सर्करायुक्त	२५.२	२९.५९
खनिज	५.२	५.७०
केलशियम	१.४५	
फा. पे.	०.५७	
लोहा	०.०१	

(६) मूंगफली, भूई मूंग, चीना बादाम
Groundnuts *Arachis hypogea*

मूंगफली खड़ी और फैलने वाली ऐसी दो प्रकार की होती है। खड़ी में फलियां छोटी होती हैं। मूंगफली का फूल तो ऊपर खिलता है; लेकिन गर्भाधान के बाद वह जमीन में चला जाता है जहां फलियां बनती हैं। खड़ा पौधा डेढ़-दो फुट ऊंचा होता है।

जल-वायु—यह साठ-सत्तर इंच से अधिक वर्षा वाले स्थानों में अच्छी नहीं होती।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए उत्तम भूमि दुमट होती है।

खड़ी वाली के लिए बलुआ-दुमट भी उत्तम होगी। इसके लिए जमीन की जुताई काफी अच्छी करनी चाहिए ताकि फलियां जो भूमि के अन्दर बैठती हैं अच्छी बन पायं। लगभग १५० मन गोबर का खाद, तीन मन हड्डी का चूरा और मिल सके तो मन-सवा मन पोटेशियम सलफेट देना चाहिए। पोटेशियम सलफेट के अभाव में दस-बारह मन राख भी दे सकते हैं।

मूंगफली में खाद्य पदार्थ प्र. श.—

	न.	फा. पे.	पो. आ.
फलियां	३.८७	१.१५	०.६६
भूसा	१.१८	०.३३	०.५५

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में मद्रास में फैलने वाली में ए. एच. २५ तथा गुच्छे वाली में ए. एच. ४५ अच्छी है। बम्बई के लिए नं. ८, ५-१, के १. और के ३, मध्य प्रदेश और मध्य भारत के लिए, ए. के. ८-१२ और १२-२४ तथा उत्तर प्रदेश के लिए अकोला १० अच्छी है। मोटे पतले छिलके अनुसार पैंसठ से पचहत्तर शतांश तक मूंगफली के बीज प्राप्त किये जाते हैं। प्रति एकड़ करीब तीस सेर बीज बोना होता है। मद्रास की तरफ एक मन तक भी बोते हैं। मद्रास को छोड़ कर अन्य स्थानों में मूंगफली आषाढ़-श्रावण में बोई जाती है। मद्रास में छोटे दाने वाली माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) और बड़े दाने वाली ज्येष्ठ से आषाढ़ (मई-जून) तक बरानी खेतों में बोते हैं। वर्षा से पहले बोई जाने वाली को सींचना होता है। मूंगफली हाथ से या नारी वाले हल से अथवा अरगड़े से बोई जाती है। कतारें जाति अनुसार एक फुट से डेढ़-दो फुट होनी चाहिए। फैलने वाली की कतारें डेढ़-दो फुट की दूरी पर रखना होगी। कतारों में बीज पांच-छः इंच की दूरी पर गिराना चाहिए। मूंगफली को मक्का व कपास के साथ भी बोते हैं। हेरफेर मूंगफली का कपास के साथ बड़ा अच्छा होता है।

निंदाई और सिंचाई—प्रारम्भ में निंदाई काफी करना पड़ती है। जब फूल की सफेद डंडियां गर्भाधान के बाद भूमि में जाने लगें उस समय निंदाई सावधानी से करनी चाहिए। यदि वह बाहर निकल आयेंगी तो फल नहीं बैठेंगे। सिंचाई जहां आवश्यकता हो होनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—जब पत्ते पीले पड़ जायं और आधे सूख जायं तब मूंगफली उठाई जाती है। छोटे बीज वाली के पौधे खींच लिये जाते हैं। बड़ी तथा फैलने वाली के लिए हल जोत कर या मजदूरों से खुदवा कर फलियां चुनवाई जाती हैं और सुखा लेते हैं। मूंगफली की उपज पन्द्रह मन से लेकर तीस मन तक हो जाती है। बीज के लिए अथवा मूंगफली को रखने के लिए छिलके सहित रखना अच्छा होता है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का लगभग १३ प्रतिशत बीज के काम आता है। शेष खाने के काम आती है या तेल निकाला जाता है। इसका व्यवसाय भी बीज, तेल और खली तीनों रूप में होता है। तेल से वनस्पति घी बहुत बनता है। मूंगफली के बीज में ४८ से ५० प्रतिशत तक तेल रहता है; परन्तु घानी द्वारा निकालने से ४० से ४५ प्रतिशत तक ही मिलता है।

उपयोग और गुण—मूंगफली बालू में भूंज कर खाई जाती है। इसके कई पकवान भी बनते हैं। तेल खाने के काम में आता है। डालडा वनस्पति घी इसी तेल का बना हुआ होता है। खली मनुष्य तथा पशु खाते हैं। इसे खाद के लिए भी काम में लाते हैं।

मूंगफली के पोषक द्रव्य प्र. श.—

	बीज	खली
जल	७.९	७.४७
आ.ज.	२६.७	४३.९१
स्नेह	४०.१	११.७८
सर्करायुक्त	२०.३	२७.६५
खनिज	१.९	४.४

	बीज	खली
केलशियम	.०५	
फा.	०.३९	
लोहा	.००१६	

(७) रामतिली, रामतिल Niger *Guizotia Abyssinica*

इसके पौधे तीन से पांच फुट ऊंचे होते हैं। फूल सूरजमुखी के जैसा लगभग एक इंच व्यास का होता है। बीज पतले, करीब आध इंच लंबे, काले और चमकीले होते हैं।

जलवायु—पचीस-तीस इंच वर्षा वाले स्थान इसके लिए अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इसे भी हलकी जमीन में ही बोना अच्छा है। जुताई खरीफ की फसलों जैसी होनी चाहिए। खाद भी इसे नहीं दिया जाता; परन्तु यदि मिल सके तो सौ सवा सौ मन तक गोबर का खाद दे देना चाहिए।

रामतिली में खाद्य पदार्थ ना. ३ प्रतिशत

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसे वर्षारम्भ के समय बोना चाहिए। इसे छींट कर भी बोते हैं। वैसे कतारों में बोई जाय तो उनमें एक-एक फुट का अन्तर उत्तम होगा। करीब चार सेर बीज प्रति एकड़ बोना होगा। रामतिली बहुधा रागी, कंगनी, जुवार, बाजरा, कपास, कुलथी और मूंग के साथ बोई जाती है। मुख्य फसल की कतारों में इसकी कतारें बो देते हैं। यदि अकेली बोना हो तो उपर्युक्त फसलों के साथ हेरफेर हो सकता है।

निदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में तैयार हो जाती है। पौधे जब सूख जायं तब फसल काट लेनी चाहिए। खलिहान में लाकर डंडों से पीट कर बीज छुड़ा लेते हैं। यदि अधिक हुई तो फूल काट कर गहाई कर लेते हैं। बीज की उपज करीब पांच मन तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—इसका व्यवसाय भी बीज, तेल तथा खली तीनों पदार्थों के रूप में होता है। इसके बीज में लगभग ४० प्रतिशत तेल रहता है। देशी घानी से ३५ प्रतिशत तक प्राप्त हो जाता है।

उपयोग और गुण—हरे पौधे विशेपतः भेड़ों को खिलाये जाते हैं। बीज की चटनी बनाकर भी खाते हैं। इसके तेल से एक प्रकार की बू आती है। ताजा तेल खाने तथा पुराना जलाने के काम आता है। खली दुधारू पशुओं के लिए बहुत उपयोगी मानी गई है। यह खाद के काम भी आती है।

रामतिली के पोषक द्रव्य प्र. श.—

	बीज	खली
जल	६.१५	७.४२
आ. ज.	२०.०७	३८.५९
स्नेह	४१.१४	९.३
सर्करायुक्त	१५.०८	२५.४८
खनिज	४.३७	९.२५

(८) तारामीरा Taramira *Eruca sotiva*
तोरिया Toria *Brassca campastris var-Gauca*
राई Mustard *Brassica juncea*
सरसों Rape *Brassica campastris var-Toria*

उपर्युक्त चारों फसलें एक जाति की हैं और खेती की रीति सबकी समान ही है। इनके पौधे दो-तीन फुट से लेकर चार-पांच फुट ऊंचे हो जाते हैं। सरसों का बीज पीला या भूरा और चिकना होता है। राई का खुरदरा होता है। तोरिया के बीज गोल, भूरे, नीले छाई लिये हुए होते हैं। तारामीरा के बीज गोल होते हैं।

जल-वायु—तीस से पचास-साठ इंच वर्षा वाले स्थानों में ये अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इनके लिए कछार-दुमट भूमि अच्छी होती

है। जुताई गेहूं की जुताई से कुछ कम करनी होगी। इसके लिए १५० मन गोबर का खाद या सात-आठ मन खली या दो मन एमोनियम सल्फेट देना चाहिए। इसे फासफोरस के खाद से अच्छा लाभ पहुंचता है, सो दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट देना चाहिए।

उपर्युक्त फसलों में खाद्य पदार्थ प्र. श. (नाइट्रोजन) —

तारामीरा ४.२ तोरिया ३.२५ राई ३.७४ सरसों ३.२८

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इनके बोने का समय आश्विन-कार्तिक है। पंजाब में तोरिया कहीं-कहीं भाद्रपद (अगस्त) में भी बोया जाता है। तोरिया के लिए कतारों में एक फुट का और अन्य के लिए फुट-डेढ़ फुट का अन्तर ठीक होगा। तारामीरा की कतारें बहुधा चने के साथ बोई जाती हैं। हेरफेर खरीफ की फसल में मक्का, उड़द या कपास के साथ कर सकते हैं। रबी की फसल के साथ करना हो तो चना, मटर, जव इत्यादि के साथ कर सकते हैं। बीज की मात्रा राई के लिए दो-ढ़ाई सेर और अन्य के लिए कतारों में बोना हो तो चार-पांच सेर और छींट कर बोना हो तो छः-सात सेर तक छींटना होगा।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से तीन सप्ताह में सरसों के पौधे साग के योग्य हो जाते हैं। पकी हुई फसल सरसों और राई की माघ या फाल्गुन तक तैयार हो जाती है। गेहूं के क्रम की भांति इसकी फसल विविध स्थानों में पृथक्-पृथक् समय में तैयार होती है। बम्बई की तरफ जल्दी और पंजाब की तरफ देरी से होती है। तारामीरा की फसल अन्य की अपेक्षा कुछ देरी से होती है। राई और तारामीरा की उपज पांच-छः मन, तोरिया की सात-आठ मन और सरसों की आठ-दस मन प्रति एकड़ हो जाती है। खलिहान में पीट कर या बैलों से गहा कर तैयार करते हैं।

वितरण और व्यवसाय—इनका व्यसवाय बीज-तेल और खली के रूप में होता है। तारामीरा में लगभग ३० शतांश, तोरिया में लगभग ४० शतांश, राई में ३०-३९ शतांश और सरसों में ४१ से ४७ शतांश तक

तेल रहता है। इनका आयात नहीं के बराबर है। निर्यात काफी होता है।

उपयोग और गुण—सरसों के पत्तों की सब्जी बनाई जाती है। तेल खाने, जलाने तथा साबुन बनाने के काम आता है। राई अधिकांश मसाले का काम देती है। तोरिया और तारामीरा का तेल भी सरसों के तेल की भांति काम में लाया जाता है। खलियां पशुओं को खिलाई जाती हैं और खाद के काम आती हैं।

राई तीक्ष्ण, गर्म, कफनाशक पाचक और क्षुधावर्धक होती है। सरसों और तोरिया में कुछ अंश तक ऐसे ही गुण होते हैं।

खली के पोषक द्रव्य प्र. श.—

	तारामीरा	तोरिया	सरसों
जल	७.८३	१४.६२	९.७३
आ. ज.	३३.७५	२८.६२	३०.१९
स्नेह	८.३४	१२.१८	१२.४७
सर्करायुक्त	२७.५१	२८.७९	२६.८
खनिज	१३.७०	७.३४	१०.१६

४—ताग वाली फसलों की खेती

(१) अम्बाडी Ambadi *Hibisicus connabis*
पटुआ Patua ,, *Subdariffa*

इसके पौधे आठ-दस फुट ऊंचे होते हैं। वैसे तो इसकी कई जातियां हैं, परन्तु उन्हें हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। एक वह जिसमें फूलों का पुटपत्र (Calyx) मोटा और रसभरा हो और जिससे चटनी और मुरबा बन सकें। दूसरे वर्ग में वह अम्बाड़ी है जिसके पुटपत्र पतले होते हैं और सन निकाला जाता है।

जलवायु—तीस-चालीस इंच वर्षा वाले स्थान उत्तम होते हैं।

जमीन जुताई और खाद—इसे बहुधा जुवार-बाजरे के साथ बोते हैं सो उनके लिए जैसी जुताई और खाद होगी वही इसके लिए ठीक है।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—जितना बीज डालना चाहें जुवार, बाजरे के बीज के साथ मिला कर बोते हैं। लगभग १ सेर प्रति एकड़ काफी होगा। कहीं-कहीं कुछ कतारें जुवार या बाजरे की और एक-दो कतारें इसकी बोते हैं।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) तक फसल तैयार हो जाती है। इसके पौधे उखाड़ कर पिंडियां बांध ली जाती हैं। जब पौधे सूख जाते हैं तो उन्हें पीट कर पत्ते और बीज छुड़ा देते हैं। बाद में पानी में गला कर सन निकाल लेते हैं। पहले दो-तीन दिन तक पिंड़ियां खड़ी और बाद में आड़ी गाढ़ कर गलाई जाती हैं। जब वे इतनी गल जाती हैं कि ताग जल्दी से छूट जावें तो मजदूरों द्वारा ताग छुड़ा लिया जाता है। बाद में धो कर सुखा लेते हैं। इसका ताग सफेद और मुलायम होता है।

वितरण और व्यवसाय—घर-खर्च इतना रख कर शेष बेच दिया जाता है।

उपयोग और गुण—कोमल पत्ते तरकारी के काम आते हैं। यदि पटुआ हो तो पुटपत्र चटनी, मुरब्बा इत्यादि बनाने के काम आते हैं। सन से टाट पट्टी, रस्से इत्यादि बनाते हैं। इसके रस्से सन के रस्से से कुछ कमजोर होते हैं।

(२) कपास Cotton *Gossypium variaties*

कपास का पौधा जाति अनुसार दो फुट से लेकर सात-आठ फुट ऊंचा होता है। फल खुल जाते हैं तो कपास उनमें से लटकता रहता है जो चुन लिया जाता है।

जलवायु—कपास की बाढ़ के लिए उष्ण और तर वातावरण चाहिए। फल बैठने लगे उस समय से ठंडा और सूखा वातावरण चाहिए ताकि फल फूट सकें। कपास को पाले से बहुत हानि पहुंचती है यही कारण

है कि जहां सर्दी का भय अधिक रहता है वहां कपास सिंचाई के आधार पर वर्षा के पहले ही बोया जाता है। वर्षा के विचार से देखा जाय तो २५ से ४० इंच वर्षा वाले स्थान उत्तम होते हैं। जहां कपास की बाढ़ के समय ७०° फे. से ९०° फे. तक तापमान रहता है वहां कपास की बाढ़ अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—भारतवर्ष में कपास के लिए काली मिट्टी अच्छी सिद्ध हुई है जो मध्य प्रदेश, मध्य भारत, गुजरात, हैदराबाद और मद्रास में पाई जाती है। इससे दूसरे नम्बर की कछार भूमि पंजाब, उत्तर-प्रदेश, बिहार की है। कपास की काली मिट्टी की जुताई विशेषतः वर्षा होने के बाद बड़ी सावधानी से करनी होती है। अधिक गीली जोती जाय तो उसमें ढेले पड़ जाते हैं। इसके लिए तो पहली फसल उठा कर ही हल चलाकर छोड़ देनी चाहिए। वर्षा आने के कुछ दिन पहले गोबर का खाद डाल कर मिला देना चाहिए। खाद मिलाने के बाद पहली वर्षा होते ही जल्दी से जोत कर कपास बो देना चाहिए। कपास के लिए यदि पहली वाली फसल को अच्छा खाद दिया हुआ हो तो इसे देने की आवश्यकता नहीं। यदि न दिया हो तो साठ-सत्तर मन गोबर का खाद देना चाहिए। भाद्रपद (अगस्त) में एमोनियम सलफेट आध मन प्रति एकड़ देना भी उत्तम होगा। एमोनियम सलफेट के अभाव में चार-पांच मन प्रति एकड़ खली का खाद भी दिया जा सकता है।

कपास की फसल के खाद्य पदार्थ[1] प्रतिशत—

	जड़	धड़	पत्ते	फल	बीज	रुई
नाइट्रोजन	.४८	.६४	२.२५	१.८३	३.५४	.१८
फा.पे.	.२६	.२१	.४८	.७८	१.४	.०९
पो. आ.	.९०	.८५	१.०९	१.६	१.१३	.५९

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—कपास के नम्बरी बीज पृथक-पृथक प्रान्तों में भूमि की स्थिति अनुसार कई हैं, सो स्थानीय कृषि-विभाग की

1. Brown HB. 1933 Cotton p. 220 originally compiled by Anderson.

सम्मति से बोना चाहिए। यहां पर नम्बर[1] दिये जाते हैं। कोष्टक[2] वाले अंक कपास से प्रतिशत रूई कितनी निकलती है यह दिखलाते हैं ।

बम्बई—कल्याण (३९.९) **विजय** (४०.४) **सुयोग** (३४) **सूरत** (१०२७) ए. एल. एफ (३६) **जड़ीला** (३५) **बर्नार** (३८) **जयधर** (३०) **लक्ष्मी** (३६) **मद्रास—कम्बोडिया** २ (३१) **मद्रास उगंडा** (३१) **करुंगनी** २ (३०) **करुंगनी ५** (३०) **एच** ४२०(३६) **एन** १४ (२४) **सी** २ (३०) **मध्य प्रदेश**—नं. ९१, (३६) देशी (३३-३४) .०३९४ एम-५ ए (३६) **उत्तर प्रदेश**—३५।१ (३६.८) २१६ एफ (३२.५) **हैदराबाद**—परभावी-अमेरिकन (२९.४) गोरानी ६ (३०) **गौरानी** १२ (३२.२) **मैसूर**—एम ए. ५ (३५) **मध्य भारत— जड़ीला** ३५.० **बुरनार** १९७ (३८.९) इंदौर २ (३३) **राजस्थान-इन्दौर** १ (२९.३) सी ५२० (३८.२) जी १, (३८) २१६ एफ (२९) **पेप्सू** २१६ एफ (३१) ३२० एफ (३३.३) **पंजाब** अमेरिकन एल-एस-एस (३५) **पंजाब** एल. एस. एस., (३३.३) एम ६० (३८.३) २१६ एफ, (३३.४) ३२० एफ. (३४.०) एम ३९ (३५.५) २३१ आर ४२.३ ।

कपास के बीज प्रति एकड़ पांच-छः सेर बोना होते हैं। इसके बीज रोए के कारण चिपके रह जाते हैं और बोने में कठिनाई होती है। इसलिए उनमें गोबर और चिकनी मिट्टी मिलाकर रस्सी वाले खाट में से नीचे गिराते हैं जिसमें वे अलग-अलग हो जायं। कहीं-कहीं बिना खाट के ही मिट्टी मिला देते हैं। अधिकांश स्थानों में कपास पहली वर्षा के बाद बोया जाता है। परन्तु सिंचाई का सुभीता हो तो बरसात के पहले भी बो सकते हैं। ऐसा करने से एक तो दूसरी फसलें जो बरसात शुरू होने पर बोई जाती हैं, उनके बोने का

1. Indian Central Cotton Committee, 31st Report 1952.

(२) श्री पी. डी. नायर, सेक्रेटरी, कपास कमेटी की कृपा से प्राप्त ।

समय मिल जाता है दूसरे जहां सर्दी में पाले का भय हो वहां कपास जल्दी आ जाता है। मद्रास में भाद्रपद से आश्विन (अगस्त-सितंबर) तक बोया जाता है। बोने के लिए पंजाब की तरफ छींट कर बोते हैं। कतारों में बोने के लिए अरगड़ या नाली वाले हल अच्छे होते हैं। कतारों में दूरी अठारह इंच की और जो अधिक फैलने वाला हो तो दो फुट की दूरी अच्छी होगी। गुजरात में कहीं पांच फुट की दूरी पर बोकर बीच में मूंगफली या मूंग बो देते हैं। कपास के साथ मूंगफली का हेर-फेर अच्छा होता है; परन्तु जहां जंगली जानवरों से मूंगफली को विशेष हानि हो अथवा पशुओं के लिए चारे की आवश्यकता हो तो जुवार लेना पड़ेगी।

निंदाई और सिंचाई—कपास में दो-तीन बार निंदाई अवश्य करनी चाहिए ताकि घासपात इसे दबा न सके। सिंचाई जहां आवश्यकता हो करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—कपास के फल से जब कपास लटकने लगे तब चुनना पड़ता है और चुनाई करीब तीन-चार बार होती है। पहली चुनाई में लगभग ३५%, दूसरी में ४५% और शेष तीसरी और चौथी चुनाई में चुन लिया जाता है। पंजाब में यह कार्य आश्विन से माघ तक, मद्रास में माघ से आषाढ़ तक और अन्य स्थानों में कार्तिक से माघ तक होता है कपास की उपज तीन मन से लेकर छः मन तक होती है। वैसे कहीं-कहीं खाद और सिंचाई के आधार पर इससे दुगनी-तिगुनी भी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—आजकल भारतवर्ष में अनाज की मंडियां जैसे 'काटन मार्केट' खुले हुए हैं। वहां पर कपास लम्बे या छोटे रेशे वाला, अथवा पहली, दूसरी, तीसरी चुनाई का अथवा उसकी सफाई के आधार पर यदि उसमें पत्ते वगैरह तो नहीं हैं—देखकर मूल्य ठहराया जाता है या गाड़ियां नीलाम होती हैं और कृषक जीनघर पर डाल आते हैं। जहां रुई छुड़ाई जाती है वहाँ रूई की कच्ची या पक्की गांठों को बांध कर मिलों में चालान कर दिया जाता है।

उपयोग और गुण—रूई से कपड़े बनते हैं। कपासिये पशुओं को

खिलाये जाते हैं। इनसे वनस्पति बनता है इनमें १७ से २०% तक तेल रहता है। खली पशुओं को खिलाई जाती है या खाद के काम आती है। डंडियों से टोकरियां बनती हैं।

कपासिय के पोषक द्रव्य प्र. श.—

जल	आ. जा.	स्नेह	सर्करायुक्त	खनिज
९.०	१६	१८	३४	४

(३) पाट Jute *Carchorus Copsularis olitarius*

भूमि की उर्वरा शक्ति के अनुसार इसके पौधे पांच-छः फुट से लेकर आठ-दस फुट ऊंचे होते हैं। वैसे कहीं-कहीं पन्द्रह फुट तक की ऊंचाई भी पाई जाती है।

जलवायु—इसकी बाढ़ उष्ण वातावरण में अच्छी होती है। जिन स्थानों का तापमान ८०°फे० से कम न हो वे स्थान अच्छे पाये गये हैं। वर्षा भी ७०-८० इंच के लगभग और सम हो तो अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है; परन्तु पहाड़ी हिस्से वाला पाट मजबूत होता है। पाट की खेती ऐसी जगह होती है, जहाँ बरसात में पानी भरा रहता है। पौष-माघ में पांच-छः बार हल से जुताई कर लेनी चाहिए। ढेले पठार से तोड़े जा सकते हैं। खाद पहाड़ी ऊंची भूमि में देना होता है सो लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—चार-पांच सेर बीज प्रति एकड़ छींट कर बोये जाते हैं। यदि कतारों में बोना हो तो कतारें आठ-नौ इंच की दूरी पर होनी चाहिएं। जहां बरसात में पानी भर जाता है वहां माघ-फाल्गुन में ही वो देते हैं, ताकि बाढ़ आने के पहले पौधे बढ़ जायं अन्यथा फाल्गुन से वैशाख तक बोते हैं। पाट के बीज सब जगह अच्छे नहीं होते। पाट बंगाल में अच्छा होता है, परन्तु बीज आसाम और बिहार से ले जाते हैं।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई की क्रिया आवश्यकतानुसार होनी

चाहिए। सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती परन्तु बोते समय यदि तरी कम हो और सींचनें की सुविधा हो तो सींच सकते हैं।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से लगभग चार महीने में फसल तैयार हो जाती है। जब इनके फल झड़ने लगें तब काटना चाहिए। उपज प्रति एकड़ बीस-पचीस मन तक आ जाती है। पचास-साठ मन डंडियां भी मिल जाती हैं। बीज की उपज छः-सात मन तक होती है। अम्बाड़ी जैसे गला कर ताग छुड़ाया जाता है।

वितरण और व्यवसाय—धुले हुए सन को स्थानीय व्यापारी खरीदकर मिलों तक पहुंचा देते हैं। पाट के ताग का मूल्य उसकी लम्बाई, रंग तथा मुलायमी पर होता है।

उपयोग और गुण—ताग से अनाज तथा चीनी भरने के बोरे बनाये जाते हैं अथवा कपड़ों की गांठों पर चढ़ाने वाली चट्टियां बनाते हैं। इसके गलीचे भी बनाते हैं। जो पाट अच्छा नहीं होता कागज बनाने के काम में लाते हैं। बीज में लगभग २०% तेल रहता है जो चर्म-रोगों पर काम आता है। पाट के बीज जहरीले होते हैं। पशु खा जायं तो मर जाते हैं सो सम्हाल कर रखने चाहिएं।

(४) सन Sannhemp *Crotalaria juncea*

इसका पौधा पांच-छः फुट ऊंचा होता है और यदि भूमि अच्छी हुई तो और भी ऊंचा हो जाता है। यह दाल वर्ग की जाति का पौधा है और सूक्ष्म जन्तु द्वारा वायुमंडल की नाइट्रोजन से लाभ उठाता है।

जलवायु—इसकी फसल उष्ण और शीतोष्ण भागों के मैदानों में अच्छी होती है। पहाड़ों पर यह अच्छा नहीं होता। चालीस से साठ इंच वर्षा इसके लिए उत्तम है। इससे अधिक वर्षा वाले स्थान म बाढ़ अच्छी नहीं होती।

भूमि, जुताई और खाद—सन के लिए दुमट और बलुआ-दुमट मिट्टी उत्तम होती है। पानी लगने वाली मिट्टी अच्छी नहीं होती। इसके लिए

तीन-चार मन हड्डी के चूरे का या दो-ढाई मन सूपर फासफेट का खाद उत्तम होगा। जुताई साधारण बरसात के पहले कर लेनी चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसका हेरफेर किसी भी फसल के साथ हो सकता है। बहुधा इसे हरे खाद के लिए काम में लाते हैं सो इसके बाद गेहूं, ईख आदि फसल लेते हैं। इसके बीज छींट कर बोये जाते हैं। एक मन बीज गिराना चाहिए ताकि पौधे लम्बे हों और उनमें टहनियां न फूटें। इसे वर्षारम्भ के समय बोना उत्तम है।

निंदाई और सिंचाई—नहीं करनी पड़ती। यदि बरसात के पहले बोया जाय तो सिंचाई करना होगी।

फसल की तैयारी और उपज—हरे खाद के लिए उस समय गाढ़ देनी चाहिए जब फूलों की कलियां दिखलाई दें अथवा फसल आठ-दस सप्ताह की हो जाय। यह भी देखना चाहिए कि इसमें गाढ़ने के बाद एक बरसात अच्छी-सी हो जाय, नहीं तो इसके सड़ने में पानी सूख जायगा। ताग वाली फसल बोने के समय से पांच-छः महीने में तैयार होती है। ऐसी फसल को काट कर अम्बाड़ी की भांति गला कर ताग निकालना चाहिए। ताग के लिए फसल पूर्ण पकने पर काटी जाय तो बीज मिल जाते हैं और पत्तों के झड़ जाने से भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि यदि फसल पूर्ण पकने दी जाय तो ताग कमजोर हो जाता है। 'एम्पायर मार्केटिंग बोर्ड' की रिपोर्ट से तो ऐसा मालूम होता है कि ताग कमजोर नहीं होता। सन के ताग को धोने के बाद बाजार में बेच दिया जाता है।

जो सन हरे खाद के लिए गाढ़ा जाता हो उसकी उपज २०० से ३०० मन प्रति एकड़ हो जाती है। ऐसे खाद में लगभग ७५% जल और ०.४ से ०.५ शतांश नाइट्रोजन की मात्रा रहती है।

सन के ताग की उपज पांच-छः मन, डण्ठल साठ-सत्तर मन और बीज भी छः-सात मन तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—ताग और सन के बीज का व्यवसाय

अन्तरप्रांतीय ही होता है।

उपयोग और गुण—सन के ताग से जो रस्सी बनती है वह पानी में भिगोने से जल्दी सड़ती नहीं। हरे पौधों से खाद बनता है। पशुओं को भी कहीं-कहीं हरे पौधे खिलाये जाते हैं। फूलों की पकोड़ियां और तरकारी भी बनाते हैं। ताग से सुतली और रस्से बनते हैं। सुतली से टाट पट्टियां भी बनती हैं। डंडियां टट्टे बनाने तथा जलाने के काम आती हैं। बीज यदि अधिक हों तो गेहूं के लिए खाद का काम अच्छा देते हैं। इनमें लगभग ६ प्रतिशत नाइट्रोजन रहती है। लगभग १० सेर नाइट्रोजन पहुंचे इतने बीज डालना चाहिए।

५—अन्य द्रव्यदाई फसलों की खेती

(१) तम्बाकू Tobacco *Nicotiana tabacum rustica*

तम्बाकू का आगमन १६०५ में पोर्चुगीज द्वारा भारत में हुआ ऐसा अनुमान है। 'टेबेकम' जाति के पत्ते बिना डंडी के नोकीले होते हैं। 'रस्टीका' के पत्ते की नोक गोल होती है। पहली के फूल गुलाबी रंग के बिखरे हुए होते हैं। दूसरी के पीले और घने होते हैं। तम्बाकू के पत्ते साधारणतः जितने चौड़े होते हैं उससे दूने लम्बे होते हैं।

जलवायु—बाढ़ के समय उष्ण और तर वातावरण चाहिए, परन्तु पकते समय सूखा और ठंडा होना चाहिए। इसे पाले से बहुत जल्दी हानि पहुंचती है। चौड़े पत्ते वाली को ओले से भी काफी नुकसान होता है।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए गांव के निकट की बलुआ-दुमट मिट्टी अच्छी होती है। जुताई भी काफी अच्छी करनी चाहिए। चूंकि पौधे रोपे जाते हैं, अतः जुताई के लिए समय भी अच्छा मिल जाता है। खाद अधिक नहीं देना चाहिए। लगभग सौ-सवा सौ मन गोबर का खाद काफी होगा। तम्बाकू के लिए पोटेशियम के खाद का महत्व विशेष है, सो दूसरा खाद न हो तो दस-बारह मन राख देनी चाहिए।

तम्बाकू के खाद्य पदार्थ प्र. श.—

सूखे पत्तों में नाइट्रोजन	फो. पे.	पो. आ
२.९२	०.६३	१.३९

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—उत्तर भारत के लिए एन. पी. १९ और एन. पी. २० अच्छी हैं। हुक्के के लिए एन. पी १९ और खाने के लिए एन. पी. २०, ४० और ५३ अच्छी होती है। गुजरात में गाड़ियों नं ६ और पीलियों नं. ४५ और नं. २४ अच्छी उपज देती है। तम्बाकू के बीज नर्सरी में गिराकर पौधे तैयार करना होते हैं। एक एकड़ के लिए आधी छटांक बीज महीन बालू में मिलाकर पांच फुट चौड़ी और तीन फुट लम्बी नर्सरी में बोना काफी होगा। इसके पौधे छ-सात सप्ताह में रोपने योग्य हो जाते हैं। नर्सरी में बीज गिराने का समय पृथक्-पृथक् स्थानों में अलग-अलग है। अधिकांश स्थानों में श्रावण-भाद्रपद (अगस्त-सितम्बर) है। सहारनपुर और झांसी की तरफ वैशाख-ज्येष्ठ (ए. मई), बंगाल की तरफ श्रावण से आश्विन (आ. से अक्तूबर) पंजाब में कार्तिक-अगहन (अक्तूबर-नवम्बर) हैं। रस्टीका जाति के पौधे जो छोटे और कम फैलने वाले होते हैं उन्हें डेढ़ से दो फुट की दूरी पर रोपना चाहिए। हुक्के वाली टेबेकम जाति के पौधे ३′ × २.५′ की दूरी पर और सिगरेट वाली को २.५′ × २.५′ पर रोपना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—नर्सरी में पौधों को छांट कर उन्हें छः-छः इंच की दूरी पर कर देना चाहिए। ठोकरा नाम का घातक पौधा निकल आवे तो उसे नष्ट कर देना चाहिए। पौधे जब रोपे जाते हैं तो उन्हें टिड्डे काट देते हैं सो उनसे बचाने की ओर ध्यान रखना चाहिए। तम्वाकू के पौधों में बढ़ती हुई कोंपल तोड़ना और बगल से निकली कोंपल तोड़ना ऐसी दो क्रियाएं और होती हैं। जब दस-बारह पत्ते आ जाते हैं तो बढ़ती हुई कोंपल तोड़ दी जाती है। कहीं-कहीं कोंपल तोड़ने के बाद उस स्थान पर बांस का सूआ भोंकते हैं ताकि ऊपर की बाढ़ बन्द हो जाय और पत्ते अच्छे बनें। सिगरेट वाली तम्बाकू में पन्द्रह-सोलह पत्ते छोड़कर ऐसा करना चाहिए।

जहां पत्ते पहले ही मोटे हों वहां कोंपल नहीं तोड़ने चाहिए। ऐसी सूरत में नीचे के कुछ पत्ते छोड़कर ऊपर के पत्ते सिगरेट और सिगार के काम आ सकेंगे। जिन पौधों से बीज देना हो उनकी ऊपर की कोंपलें भी नहीं तोड़नी चाहिए। बाजू वाली अवश्य तोड़नी चाहिए। सिंचाई की जहां आवश्यकता हो करना होगी।

फसल की तैयारी और उपज—रोपने के समय से चौथे-पांचवें महीने में तैयार होती है। टेब्रेकम से रस्टीका कुछ दिन पहले तैयार होती है। पत्तों में जब हलका-सा पीला रंग और कहीं भूरे धब्बे से नजर आवें तब पत्ते काटने योग्य होते हैं। चूंकि सब पत्ते एकसाथ तैयार नहीं होते, ज्यों-ज्यों तैयार होते हैं काटते जाते हैं। काटने के पश्चात् इन्हें खास रीति से सुखाना और तैयार करना पड़ता है, जिससे सौरभ और सुगंध (Aroma) चाहिए वैसी आ जाय। सिगरेट वाली तम्बाकू को खास प्रकार की भट्टियों में सुखाते हैं, जिनका वर्णन लेखक की 'खेती की रीति' के तीसरे भाग में दिया है। इसके सिवाय विभिन्न रीतियों से सुखाने तथा तैयार करने का वर्णन भी उसमें है। उपज के विचार से देखा जाय तो हुक्के वाली तम्बाकू से लगभग पचीस मन पत्ते मिल जाते हैं। सिगरेट वाली की उपज इसकी एक-तिहाई होती है। डंठलों की उपज कहीं-कहीं पत्तों से आधी और कहीं-कहीं पांचवें भाग तक आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—तम्बाकू के कहीं-कहीं खड़े-खड़े खेत बेच दिये जाते हैं। कहीं-कहीं तम्बाकू तैयार करने वाली कम्पनियां होती हैं, जिन्हें बुलाकर बेचने के लिए तैयार की जाती हैं। बीड़ी के लिए चूरा तैयार करके बेचते हैं। सिगरेट वाली के पत्तों का चालान बक्सों में होता है। कहीं-कहीं पत्ते पर्तवार जमाकर चट्टियों से बांध कर भेजते हैं। मार्केटिंग विभाग से तम्बाकू के ग्रेड भी बने हुए हैं। हुक्के वाली तम्बाकू को खास रीति से तैयार करते हैं। इसमें केला, अमरूद, अनानास, कटहल इत्यादि डालते हैं।

उपयोग और गुण—तम्बाकू खाने, पीने और सूंघने के काम आती

है। उपज का ५९% भाग चिलम या हुक्के द्वारा काम में आता है। शेष का उपयोग अन्य प्रकार का होता है। तम्बाकू का काढ़ा लाही जैसे कीट के लिए अच्छा विष होता है। तम्बाकू के बीज में २५.३०% तेल रहता है जो खाने के काम का तो नहीं अन्य व्यवसाय के काम का है। खली खाद का काम दे सकती है। सूंघने वाली तम्बाकू से सर्दी या जुकाम में काफी आराम पहुचता है। तम्बाकू का चूर्ण दन्तमंजन का काम देता है। पीने वालों का कहना है कि इससे थकावट दूर होती है। अधिक खाने और पीने से हाजमा बिगड़ जाता है।

(२) ईख, गन्ना, ऊख, सांठा—Sugarcane

Saccharum officinarum

गन्ने के पौधे से ग्रामीण तथा नागरिक सब परिचित हैं। ऊंचाई में जाति अनुसार उपयोगी भाग की ऊंचाई पांच फुट से लेकर सात-आठ फुट होती है। मोटे तौर पर गन्ने की तीन श्रेणियां हैं। जल्दी पकने वाला, मध्यम श्रेणी का तथा देरी से पकने वाला। गन्ने की मोटाई का विभाजन किया जाय तो पतला मध्यम श्रेणी का तथा मोटा ऐसी तीन श्रेणियां होंगी। साधारणतः पतला बहुत कठोर और मोटा बहुत मुलायम होता है।

भूमि, जुताई और खाद—गन्ने के लिए सर्वोत्तम भूमि दुमट-कछार होती है; परन्तु अब तो वैज्ञानिकों ने ऐसी जातियां निकाल दी हैं कि हर प्रकार की भूमि के लिए एक-न-एक जाति मिल जाती है। गन्ने के लिए जुताई काफी करना होती है और खाद भी बहुत-सा देना पड़ता है, क्योंकि फसल को पूरे बारह महीने की खुराक देना होती है। खाद देने की उत्तम रीति यह होगी कि सबसे पहले सन का खाद दिया जाय। उसके बाद गोबर, खली या एमोनियम सलफेट देना उत्तम होगा। कुछ खाद के प्रयोगों के आधार पर हम निम्नलिखित मात्राएं देते हैं, जिन्हें खली या एमोनियम सलफेट के रूप में दे सकते हैं। गोबर का खाद मिल सके तो लगभग तीन सौ से चार सौ मन देना चाहिए।

उत्तर बिहार	२० सेर नाइट्रोजन प्रति एकड़
दक्षिण ,,	३० ,, ,, ,, ,, +२० सेर फा. पे.
उत्तर प्रदेश	५० ,, ,, ,, ,,
मध्यप्रदेश	५० ,, ,, ,, ,,
मद्रास	७५ ,, ,, ,, ,,
बंबई	१५० ,, ,, ,, ,,

खली या एमोनियम सलफेट की आधी मात्रा गन्ना लगाते समय और आधी मिट्टी चढ़ाते समय दे सकें तो अच्छा है अन्यथा पूरी मात्रा प्रारंभ में ही दे सकते हैं।

गन्ने के भागों में खाद्य पदार्थ[1] प्र. श.—

	नं०	फा. पे.	पो. आ.	के. आ.
जड़ें और खूटियां	०.३०	२.१३	१.६२	१·०८
सूखे पत्ते	०.२३	०.०९	१.२७	०.७०
बांड और हरे पत्ते	०.५९	०.४३	०.७६	०.३३
पैरने जैसे गन्ने	०.२०	०.३६	०.३४	०.०९
पैरने जैसे हरे गन्ने	०.०५	०.०९	०.०८	०.०२

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—कृषि-विभाग की सम्मति से ही गन्ने की जाति चुननी चाहिए। वैसे कुछ प्रचलित जातियां यहां दी जाती हैं। **बिहार**—को ४५३, बी. १० और बी. ११ **उत्तर बिहार**—उपर्युक्त के सिवाय सी. ओ. के .३२ **दक्षिण बिहार** के लिए बी. ओ. (२४ नीची पानी लगने वाली जमीन के लिए) **पंजाब**—को एल. ९, को ३१२, को २८५, को ४२१ **बंगाल**—को ४२१, ५२७, ४५३, ३१३, ४१९ **बंबई** ४९०, ४७५, ५२७ **मद्रास**—को ४४९, ५२७, ४७१ **उड़ीसा**—को ४१९, को ४२१। गन्ने के टुकड़े लगाये जाते हैं जो फुट-डेढ़ फुट लम्बे होते हैं। प्रत्येक टुकड़े में तीन से पांच आंखें होती हैं। ये टुकड़े दो रीति से लगाये जाते हैं। एक आंख से आंख मिला कर और दूसरा छोर से छोर मिलाकर। जहां दीमक का भय अधिक हो वहां पहली रीति अच्छी होती है। दोनों रीति से लगाने में कितने

(१) सहस्त्रबुद्धे. बम्बई कृषि-विभाग बुलेटिन १७४, १९३३. पृ. ३६

टुकड़े लगेंगे, इसकी गणना निम्नलिखित सूत्र से हो सकती है। छोर से छोर मिलाकर—

$$\frac{\text{४३५६०}}{\text{गन्ने के टुकड़े की लम्बाई फुट में} \times \text{कतारों की दूरी फुट में}} = \text{टुकड़े प्रति एकड़}$$

आंख से आंख मिलाकर—

$$\frac{\text{४३५६०}}{\left.\begin{matrix}\text{टुकड़े की पहली आंख से अन्तिम} \\ \text{आंख की दूरी फुट में}\end{matrix}\right\} \times \text{कतारों की दूरी फुट में}} = \text{,,}$$

उपर्युक्त टुकड़ों में गन्ने की लम्बाई का भाग देने से संख्या गन्ना प्रति एकड़ निकल आयेगी

यदि बीज का वजन निकालना हो तो कुछ गन्नों का वजन करके संख्या प्रति एकड़ पर गणना करके निकाल सकते हैं। साधारणतः छीला हुआ पतला गन्ना लनभग सत्तर-पचहतर मन और मोटा अस्सी-नवे मन प्रति एकड़ लगता है। गन्ना लगाने के लिए निर्माणित दूरी पर हल से चास (नालियां) निकाल कर उनमें गन्ने दबा दिये जाते हैं। कहीं-कहीं नालियों में पहले पानी देकर गन्ने के टुकड़े पांव से गीली मिट्टी में दबा दिये जाते हैं। कहीं-कही ऐसा भी किया जाता है कि गन्ने के टुकड़ों को एक-दो रोज के लिए पानी में डाल देते हैं। ऐसा करने से उपज में कुछ लाभ होता है, क्योंकि आंखों में तरी काफी आ जाती है, जिससे वे जल्दी फूट जाती हैं। गन्ना बहुधा माघ-फाल्गुन (फरवरी) में लगाया जाता है। दक्षिण भारत में माघ-फाल्गुन से वैशाख (फ. से ए.) तक लगाते हैं। कतारों की दूरी कमजोर भूमि में डेढ़-दो फुट काफी होगी। उपजाऊ भूमि में दो से ढाई फुट तक बढ़ा देनी चाहिए।

रखत, पड़ी या खूंटी—गन्ने की खेती वाले एक साल गन्ना बोते हैं। उसे काटने के पश्चात खूटियां वैसी ही छोड़ देते हैं, जिनसे नये कोंपल निकल कर फसल तैयार हो जाती है। ऐसी फसल को रखत, पेड़ी या खूंटी कहते हैं।

गन्ने के साथ मिश्रण का प्रश्न तो प्रथम वर्ष में होता है, सो उस साल गन्ने

की कतारों में मेथी जैसी दलहन की फसल ले लेनी चाहिए।

गन्ने का हेर-फेर—(१) सन-गन्ना—गन्ना (खूंटी) पड़त—गेहूं (२) मूंगफली—गन्ना—गन्ना (खूंटी)—पड़त—गेहूं उतम होगा।

निदाई और सिंचाई—दोनों बहुत करना पड़ती है। पौधों पर मिट्टी भी चढ़ाना होती है और मिट्टी चढ़ाते समय खली या एमोनियम सलफेट का खाद भी देना होता है। गन्ना गिरने न पाये इसलिए कुछ गन्नों को इकट्ठे करके बांध भी देते हैं ताकि एक-दूसरे के सहारे से सब खड़े रहें। गन्नों में पांच-छः महीने के बाद जो दौजियां निकलें, उन्हें भी छोड़ देना चाहिए। गन्ने में कहीं-कहीं सिंचाई नहीं करनी पड़ती। अधिकांश स्थानों में तीन से लेकर दस-बारह बार सिंचाई करना पड़ती है।

फसल की तैयारी और उपज—दीपावली (अक्तूबर) के समय से फसल तैयार होने लगती है, परन्तु गन्ना पीलने जैसा पौष (दिसम्बर) से ही होता है और जाति अनुसार चैत्र तक चलता रहता है। गन्ने के पकने की पहचान उसके रस में चीनी की मात्रा से करते हैं। जब यह मात्रा चौदह-पन्द्रह शतांश तक गन्ने के रस में पहुंच जाती है तब गन्ना काटने योग्य होता है। साधारण कृपक पत्तों के रंग से, बाढ़ के रुकने से तथा गन्नों को तोड़ कर पहचान लेते हैं। जब पत्ते पीले पड़ जाते हैं और गन्ना खेत में से तोड़ते समय जल्दी टूट जाय तो समझना चाहिए कि गन्ना पक गया। गन्ने के पकने की पहचान ब्रिक्स हायड्रोमीटर नाम के यंत्र से भी होती है। रस में डालने से जब यह इतना डूबे कि उसपर के अंक १९° से २०° बतलाये तो गन्ना पका हुआ माना जाता है। गुड़ या चीनी के लिए जब गन्ना भेजा जाता है तो उसके छिलके छील दिये जाते हैं। गन्ने की कटाई हंसुए से होती है और उसीसे छीला भी जाता है। साधारणतः अच्छे खेतों में पतले गन्ने की उपज चार सौ से पांच सौ मन तक हो जाती है। चीनी के व्यवसाय की रिपोर्ट में उपज के निम्नलिखित अंक दिये हैं। उत्तर प्रदेश ३९१ मन; बिहार ३०४ मन; बंगाल ४५१ मन; पंजाब २०६ मन; मद्रास ६४८ मन; बंबई ५७७ मन प्रति एकड़।

गन्ने से चीनी तो कारखानों में बनती है; परन्तु गुड़ कृषक स्वयं बना लेते हैं। इसके लिए लोहे की चर्खियों द्वारा रस निकाला जाता है। ऐसी चर्खियों से साठ-सत्तर शतांश रस निकाला जा सकता है। बैल जोड़ियां अच्छी हों तो तीन-चार मन गन्ना प्रति घंटा पीला जा सकता है। गन्ने के रस को कढ़ाह में उबाल कर गुड़ बनाते हैं। इसका मैल निकालने के लिए दूध, चूने का पानी, भिंडी, सेमल, फालसा, मुखल्लाई की छाल का रस काम में लाते हैं। 'एक्टिवेटेड चारकोल' से छान कर रस शुद्ध किया जाय तो गुड़ अच्छा बनता है।

जब गरम होते-होते रस का तापमान ११६° से १२०° शतांश तक आ जाय तो समझना गुड़ अच्छा बनेगा। यदि ११०° से ११२° शतांश से कम पर उतार लिया जाय तो गुड़ पतला होगा।

गुड़ बनाने के यंत्र (पृष्ठ ६६)

वितरण और व्यवसाय

गन्ने की व्यावसायिक रिपोर्ट में वितरण के अंक निम्नलिखित हैं। बीज ६·६%; पशुओं के लिए १·१%; चूसने के लिए ८·५%; चीनी के लिए १७·४%; खांड ४.५% गुड़ ६१·१% अन्य ·०१%

गुड़ कृषक खास बड़ी मंडियों में ले जाकर बेच आते हैं। वहां से वितरण होता है। चीनी कारखानों से ही वितरण के लिए बिकती है।

उपयोग और गुण—मोटा या पौंडा गन्ना चूसने के काम आता है। बाजार में गन्ने की गंडेरियां कार्तिक से वैशाख तक बिकती रहती हैं। मध्यम श्रेणी और पतले गन्ने का रस बाजारों में बिकता रहता है। इससे चावल पकाकर मीठे बनाये जाते हैं जिसे रसाल कहते हैं। चीनी और गुड़ से कई प्रकार के पकवान बनते हैं। चोआ का उपयोग पीने की तम्बाकू के लिए किया जाता है। पत्ते पशुओं को खिलाये जाते हैं। रस निकाल लेने पर गूदा बच जाता है, उससे जलावन का काम लेते हैं। ऐसे गूदे का उपयोग कागज, नकली रेशम, कोयले का चूर्ण तथा पशुओं को खिलाने के लिए किया जाता है। गन्ने पर जो सफेद पदार्थ रहता है उससे मोम बनाते हैं।

६—चारे की खेती

भारत को आजकल दूध का अभाव बहुत खटक रहा है, जिसका कारण चरागाह या गोचर-भूमि की कमी है। इसकी पूर्ति खेतों में हरा चारा उपजा कर ही होसकती है। ऐसे चारे कई प्रकार के हैं; परन्तु यहां पर हम कुछ मुख्य-मुख्य का वर्णन करते हैं। इनमें गिनीवास और हाथीकांडा अनाज वर्ग के हैं और बरसीम, लूसर्न शफताल, सेंजी दाल वर्ग के हैं। पहले दो की अपेक्षा इनमें पोषण-शक्ति अधिक होती है परन्तु एक निर्माणित मात्रा से विशेष इन्हें नहीं खिला सकते, क्योंकि अधिक खिलाने से आफरे की व्याधि हो जाती है।

दाल वर्ग की घास उपजाने के लिए यदि पहली बार उपजाई जाय तो खेतों में एक खास प्रकार के जन्तु प्रयोगशाला से मंगवाकर छोड़ना चाहिए। यदि प्रांतीय प्रयोगशाला में न हो तो इण्डियन एग्रिकलचरल रिसर्च इंसटीट्यूट, दिल्ली से मंगवाना चाहिए। इस क्रिया को 'इनाक्युलेशन' कहते हैं।

(१) गिनी घास Guinea grass *Panicum maximum*

भूमि, जुताई और खाद—यह बलुआ को छोड़ हर प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। एक बार लगाने से कई साल तक एक स्थान पर रहता है। जुताई अच्छी गहरी करनी चाहिए। खाद के लिए छाना हुआ शहर का कूड़ा-कर्कट लगभग तीन सौ मन प्रति एकड़ देना चाहिए और हर चौथे साल खाद देना चाहिए।

लगाना—पुराने पौधों से कूंचे काटकर बरसात में दो-ढाई फुट की दूरी पर लगा देना चाहिए।

सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी, उपज और उपयोग—घास लगभग तीन फुट ऊँचा होता जाय तो काटते रहना चाहिए। पहले साल छः-सात और बाद में आठ-दस कटाई प्रतिवर्ष मिल जाती है। प्रत्येक कटाई में सौ-सवा सौ मन हरा घास मिल जाता है। इसे पशुओं को खिलाया जाता है।

(२) हाथीकांडा Elephant grass or Napier grass *Pannicum purpeureum.*

इसकी खेती गिनी घास जैसी ही होती है। रोपने के समय से चार-पांच महीने में पहली कटाई मिलती है। इसके बाद डेढ़-दो महीने के अन्तर पर कटाव ले सकते हैं। लगभग दो सेर प्रति मन हरा घास प्रति कटाव प्रति एकड़ मिल जाता है।

(३) बरसीम Berseem Egyptian clover *Trifolium alexandrium.*

भूमि, जुताई और खाद—भारी को छोड़ कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। मक्का जैसी खरीफ की फसल को काट कर खेतों की जुताई करके क्यारियां बना लेनी चाहिए। इसके लिए तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट का खाद देना चाहिए और गोबर या खाद लगभग ढाई सौ मन देना चाहिए।

बीज, बोआई और हेरफेर—अच्छे साफ खेतों में दस-बारह सेर और दूसरे में लगभग पन्द्रह सेर बीज प्रति एकड़ आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर) में छींटना होंगे। बीज को पहले भिगोकर फुला लेना चाहिए और बाद में क्यारियों में पानी भरकर गीली जमीन पर छींट देना चाहिए अथवा पहले छींट कर फिर पानी दे देना चाहिए। भींगे हुए बीज छींटने में कठिनाई न हो इसलिए उन्हें थोड़ी मिट्टी के साथ मिला लेना चाहिए। हेरफेर मक्का-जैसी फसल के साथ हो सकता है। यदि रबी की फसल लेना हो तो गेहूं लेना चाहिए—

सिंचाई—आवश्यकतानुसार—

फसल की तैयारी, उपज और उपयोग—बोने के दो महीने बाद पहला कटाव और फिर हर महीने एक कटाव ले सकते हैं। ऐसे पांच-छः कटाव मिल जाते हैं। प्रत्येक कटाव में एक सौ मन हरे चारे की उपज मिल जायगी। दूधारू पशुओं के लिए यह चारा अच्छा उपयोगी है। सूखे चारे या भूसे के

साथ मिलाकर खिलाना चाहिए। दो भाग भूसे के साथ एक भाग बरसीम होना चाहिए।

(४) लूसर्न Lucern Alfalfa *Medicago sativa*

इसकी खेती बरसीम जैसी ही होती है, परन्तु एक बार बो देने के बाद यह तीन-चार साल तक एक जगह रहता है। सो प्रतिवर्ष कुछ खाद दे देना चाहिए। इसके लिए सात-आठ सेर बीज प्रति एकड़ बोना काफी होंगे। इससे प्रति वर्ष पांच-छः कटाव मिल जाते हैं और प्रत्येक कटाव में लगभग एक सौ मन हरा घास मिल जाता है। इसे भी सूखे घास के साथ मिलाकर खिलाना चाहिए।

(५) शफताल Persian clover *Trifolium rescupinatum*

जैसे बरसीम की खेती मिश्र में विशेप होती है वैसे ही इसकी खेती ईरान में होती है। इसकी खेती बरसीम की खेती के समान ही होती है। इसका पौधा बरसीम के पौधे से कुछ छोटा होता है। इससे साल भर में तीन कटाव मिल जाते हैं।

(६) सेंगी Indian clover *Melilotus parviflora*

इसका पौधा बरसीम से कुछ छोटा पीले फूल का होता है। खेती बरसीम की खेती के समान ही होती है। परन्तु इसका माघ (फरवरी) में एक ही कटाव मिलता है, इससे इसे खाद कम देना चाहिए। बीज की मात्रा प्रति एकड़ बीस सेर होगी। इसकी उपज डेढ़ सौ से दो सौ मन तक हो जाती है। इसे भी सूखे चारे के साथ मिला कर खिलाना चाहिए। पांच सेर से अधिक किसी पशु को नहीं देना चाहिए।

तीसरा खण्ड

साग-भाजी की खेती

वर्तमान समय में उत्तम स्वास्थ्य रखने के लिए साग-भाजी का उपयोग बहुत बढ़ गया है और दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। इसकी खेती ऐसी है कि अल्प पूंजी से कुछ-न-कुछ आमदनी होती रहती है विशेषत: नगरों के निकट इसकी खेती विशेष लाभप्रद होती है। यदि सिंचाई का उचित प्रबंध हो तो कृषक ही नहीं, हर कोई शिक्षित युवक थोड़ी पूंजी लगाकर अपना तथा अपने आश्रितों का जीवन-निर्वाह कर सकता है।

सागभाजी को पांच-छ: भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) कन्दवाली अर्थात् जिनका उपयोगी भाग भूमि के अन्दर हो। जैसे गाजर, मूली, आलू, शकरकन्द।

(२) वे जिनके पत्ते या कोमल डंडियां काम में आती हों जैसे बंध-गोबी, साग।

(३) वे जिनके फूल या फली की डंडी काम आती है जैसे पटुआ, फूल-गोभी।

(४) वे जिनके फलों का उपयोग होता हो जैसे परवल, टमाटर।

(५) वे जिनकी फलियां या बीज काम में आते हों जैसे ग्वार, मटर।

(६) इस वर्ग में हम मसाले इत्यादि की गणना करेंगे

लेखक की 'साग-भाजी की खेती' नाम की पुस्तक में प्रत्येक तरकारी की खेती का विवरण निम्नलिखित स्तम्भों में किया गया है। स्थानाभाव के कारण इस ज्ञानकोष में कुछ स्तम्भों का वर्णन सामूहिक रूप में ही दिया है (१) जमीन, जुताई और खाद, (२) बीज बोना, बोने की रीति का वर्णन तो प्रत्येक तरकारी के साथ दिया है परन्तु बोने के समय का वर्णन परिशिष्ट में दिया है, क्योंकि विभिन्न भागों में यह समय अलग-अलग है।

संख्या पौधा प्रति एकड़ बीज की मात्रा का अनुमान भी परिशिष्ट में दिया है।

यहां पर यह भी बतला देना उचित होगा कि कुछ साग-भाजियों के बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं और बाद में पौधे जब दो-तीन इंच ऊंचे हो जाते हैं तब खेतों में लगाते हैं। नर्सरी में बोने का विशेष अभिप्राय यह होता है कि साग-भाजियों के पौधे बाल्यावस्था में खेतों की शीतोष्णता सहन न कर सकें अथवा उन्हें कीट से हानि न पहुंचे। थोड़े क्षेत्रफल में होने से उनकी रक्षा सरलता से हो सकती है।

नर्सरी का आकार आवश्यकतानुसार लम्बा लेकिन ४–५ फुट से अधिक चौड़ा नहीं होना चाहिए ताकि निंदाई-सिंचाई सरलता से हो सके। बरसात में जो नर्सरी बनाई जाय वह नौ-दस इंच ऊंची होनी चाहिए।

(३) निंदाई और सिंचाई—(४) फसल की तैयारी—(५) उपयोग और गुण तथा

(६) कीट और व्याधियों का वर्णन पृष्ठ (९९) पर दिया गया है।

१—कन्दवाली तरकारियां

अर्थात् वे फसलें जो भूमि के अन्दर होती हैं। चूंकि इनकी बाढ़ भूमि के अन्दर होती है इनके फलने के लिए ऐसी मिट्टी चाहिए, जो जल्दी से दवकर इन्हें फूलने की जगह दे दे, न कि काली और भारी मिट्टी, जो अपने आप ही फूलकर इन्हें दबा दें। ऐसी मिट्टी बलुआ-दुमट होती है जो कन्द की बाढ़ को नहीं रोकती। भारी मिट्टी इन्हें दबा देती है जिससे कन्द सुन्दर आकार के न होकर टेढ़े-मेढ़े हो जाते हैं। ऐसी फसलों के लिए जुताई गहरी और अच्छी करना होती है। कार्बनिक खाद भी अधिक मात्रा में देना इनके लिए उचित है। साधारणतः लगभग २०० मन सड़ा हुआ गोबर और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट का खाद इन्हें देना चाहिए। इसके साथ फसल से होने वाली आय के अनुसार कृत्रिम खाद भी दे सकते हैं। डेढ़-दो मन एमोनियम सलफेट और दो-ढाई मन सुपर फासफेट भी देना चाहिए। जहां की भूमि में पोटेशियम कम हो सवा

मन के लगभग पोटेशियम सलफेट भी देना चाहिए।

कन्द वाली फसलें दो प्रकार की होती हैं। एक वह जिसकी जड़ें काम में लाई जाती हैं और दूसरी वह जिसके धड़ रूपांतरित होकर भूमि के अन्दर बाढ़ पाते हैं।

जड़वाली तरकारियां

(१) गाजर Carrot *Daucus carota* (२) मूली Radish *Raphanus sativus* (३) शलजम Turnip *Brassica rapa* (४) चुकन्दर Beet *Beta vulgaris* (५) पारस्निप Parsnip *Pastinaca sativa* (६) साल्सीफाई Salsify *Tragopogon porifolius* (७) रुटे बागा Rutabaga *Brassica nahobrassica* (८) स्किरेट *Skirret Sium sisamum* उपर्युक्त में से पहले चार की खेती जरा विशेषरूप से होती है। दूसरे चार को बागीचों में कहीं-कहीं स्थान मिल जाता है।

१. **गाजर**—इसके बीज कतारों में जिनकी दूरी एक फुट हो बोई जाती है। जब पौधे निकल आवें तो उनकी छंटनी करके पांच-छः इंच की दूरी पर कर देने से गाजर अच्छी बैठती है। साधारण निंदाई-सिंचाई करते रहने से फसल तीन-चार महीने में तैयार हो जाती है। गाजर के बीज तैयार करना हो तो कन्द के नीचे का आधा भाग काटकर ऊपर का आधा भाग अच्छी उपजाऊ जमीन में लगा देना चाहिए। इनमें अन्तर लगभग दो फुट का रखना चाहिए। कुछ दिनों के लिए गाजर रखना पड़े तो बालू में रख सकते हैं। गाजर सुखा करके भी रखी जा सकती है। इसके लिए कदूकस में कीस कर सुखाना चाहिए।

उपयोग और गुण—कच्ची खाई जाती है। दूध-चीनी के साथ। हलवा भी अच्छा बनता है, इसकी तरकारी भी बनाते हैं। आंख की रोशनी के लिए, दांतों के लिए तथा संग्रहणी और बवासीर के लिए इसका सेवन अच्छा होता है।

२. **मूली**— कतारों में अन्तर एक फुट का और पौधों में पांच-छः इंच का ठीक होता है। जौनपुरी मूली के लिए दस-बारह इंच का अन्तर अच्छा होगा। मूली के बीज क्यारी अथवा पारी पर बोना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से डेढ़ महीने में पत्ते, दो महीने में जड़ें और ढाई महीने में फल तैयार हो जाते हैं। बीज की तैयारी गाजर के समान। इसे पन्द्रह-पन्द्रह दिन की दूरी पर बोयी जाय तो कई दिनों तक मूलियाँ मिलती रहती हैं।

उपयोग और गुण—मूलियां कच्ची खाई जाती हैं। पत्ते, जड़ और फल की तरकारी बनती है। पत्ते पाचक, जड़ पाचक और स्वर को उत्तम करने वाली तथा नेत्रों को लाभ पहुंचाने वाली होती है।

३. **शलजम**— इसके बीज कतारों में जिनका अन्तर एक फुट का हो बोना चाहिए। इन्हें पारियों पर भी बोते हैं। कतारों में पौधों का अन्तर पांच-छः इंच का होना चाहिए। बराबर सिंचाई करने से ढाई महीने में फसल सब्जी के योग्य हो जाती है। २५० से ३०० मन उपज प्रति एकड़ आ जाती है। इसके बीज गाजर की भाँति तैयार करते हैं परन्तु ये पहाड़ों पर ही होते हैं।

उपयोग और गुण—जड़ और पत्तों की सब्जी बनाई जाती है। शलजम पाचक और वीर्य-वर्धक होते हैं।

४. **चुकन्दर**—इसके बीज भी कतारों में क्यारियों में या पारियों पर बोना चाहिए। पंक्तियों में अन्तर एक फुट का और पौधों से पांच-छः इंच का होना चाहिए। इसकी फसल छः महीने में तैयार होती है और उपज पचास-साठ मन तक हो जाती है। इसके बीज भी पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में होते हैं।

उपयोग और गुण—जड़ और पत्तों की तरकारी बनती है। जर्मनी

और रूस में चीनी भी बनती है। इसका आचार भी बनाया जाता है। इसका सेवन पाचन-शक्ति को बढ़ाता है।

५. पारस्निप ६. साल्सीफाई, ७. रुटेबागा ८. स्किरेट—इनकी खेती विशेष रूप से नहीं होती। यदि किसी की इच्छा हो तो गाजर की भांति जमीन तैयार करके एक-दो क्यारी लगा सकते हैं। पारस्निप और साल्सीफाई की कतारें डेढ़ फुट दूर होनी चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर छः इंच का उत्तम होगा। बोने के समय से छः महीने में इनकी फसल तैयार होती है।

रुटेबागा की खेती शलजम की खेती के समान होती है। शलजम के पत्ते हरे और खुरदरे होते है और इसके साफ और नीले रंग के होते हैं। बोने के समय से पांच-छः महीने में फसल तैयार होती है।

स्किरेट की जड़ तक न हो कर गुच्छे के रूप में होती है। जड़ें मीठी और भूरे रंग की होती हैं। इसे बीज और खूंटी दोनों से तैयार करते हैं। बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार होती है। इसकी तरकारी भी बनाई जाती है।

कन्द वाली वे तरकारियां जिनके रूपांतरित धड़ या शाखाएं भूमि में बैठती हैं——

(१) आलू Potatoes *Solanum tuberosum* (२) अर्वी, घुईयां Aru m *Colocasia esculenta* (*antiquorum*) (३) शकरकन्द Sweet Potatoes *Ipomoea batatas* (४) गांठगोभी[१] Knolkhol, *Brassica Caulorapa* (*oleracea Var gongylodes*) (५) सूरन Elephants foot *Amorphophallus Campanulatus* (६) गराडू Yams *Diascoria alata Vor*

१. गांठगोभी भूमि के अन्दर तो नहीं होती परन्तु कुछ भूमि में रहती है और चूंकि यह एक रूपान्तरित धड़ है इसको इस वर्ग में ले लिया है।

globosa (७) रताल् Yams, *Diascoria purpura* (८) सुथनी Kidney shaped yams *Diascoria fasciculata* (९) कच्चू jerusalem artichoke *Helianthus tuberosus* (१०) अरारूट Arrowroot *Muranta arundinacca* (११) टेपियोका Tapioca *Munihot* (*Utilisima*) (१२) एसपेरेगस Asparagus *Asparagus officinalis.*

इनमें से पहले ४ की खेती प्राय: सब प्रांतों में; ५,६,७ की गुजरात तथा दक्षिण भारत में, ८ की बिहार में और ११ की ट्रावनकोर-कोचीन में विशेष रूप से होती है। १० और १२ को कहीं-कहीं छोटी-मोटी क्यारियों में स्थान मिल जाता है।

१. **आलू**—इसके लिए ढाई सौ से तीन सौ मन गोबर का खाद या दस-पन्द्रह मन सरसों की खली का खाद अच्छा होगा। इन्हें थोड़ी जमीन चीर कर कतारों में (छोटे आलू हों तो समूचे और बड़े हो तो टुकड़े करके) लगाते हैं। पहाड़ी आलू के लिए कतारों में अन्तर डेढ़ फुट का और मैदान वालों के लिए दो ढाई फुट का अन्तर रखना चाहिए।

कतारों में पहले छः इंच का और दूसरे में नौ इंच का अन्तर उत्तम होगा। इन्हें इतने गहरा रोपना चाहिए कि दो-तीन इंच मिट्टी की तह से ढक जाय। निंदाई के समय जब पौधे सफेद-सफेद बह फेंकने लगें तो ऊपर मिट्टी चढ़ाना चाहिए। करीब तीन-चार बार मिट्टी चढ़ाना होगी। मिट्टी चढ़ाने से जो नालियां बनती जाती हैं उनमें जहां आवश्यकता हो सिंचाई करनी चाहिए। बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है और उपज पचास मन से लेकर २५० मन प्रति एकड़ तक हो जाती है। वैसे कृषि-पंडितों[१] ने सात सौ मन से अधिक उपज भी प्राप्त की है। अगली फसल के लिए बीज

१. श्री जयपालचन्द बुलन्दशहर वालों ने लगभग ७३५ मन उपज दिखलाई है Indian Farming, July 1953 Supplement.

रखना हो तो नींबू के आकार के आलू बड़े गोदाम में या कोयले के चर्ण में रखना चाहिए। आलू सुखा[1] कर भी रखे जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी और मीठे या नमकीन पदार्थ बनाये जाते हैं। नसे स्टार्च भी बनाते हैं। इनकी तरकारी मृर्त्री, बलदायक और अग्निदीपक होती है। मोटे मनुष्यों को आलू का उपयोग बहुत कम करना चाहिए।

२. अर्वी, घुईयां—डेढ़ सौ से दो सौ मन गोबर का खाद या लगभग दस मन खली का खाद ठीक होगा। अर्वी की गांठें क्यारियों में अथवा नालियों में लगानी चाहिए। पंक्तियों में दो फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर अच्छा है। ज्यों-ज्यों पत्ते बढ़ते जायं, निंदाई के समय कुछ मिट्टी चढ़ाते जाना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से पत्ते दो-तीन महीनों में और कन्द चार-पांच महीने में तैयार हो जाते हैं। अर्वी की उपज लगभग तीन सौ मन तक हो जाती है। अगली फसल के लिए सूखे तथा हवादार कमरों में मचानों पर इसकी गांठे रखनी चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्तों की तरकारी, पकोड़े इत्यादि अच्छे बनते हैं। कन्द की तरकारी बलदायक चिकनी और भारी होती है।

३. शकरकन्द—लगभग दो सौ मन गोबर का खाद देकर भूमि तैयार कर लेनी चाहिए। जहां सिंचाई देना पडे वहां क्यारियां बना कर उनमें लगाना चाहिए। एक-एक हाथ की दूरी पर लताओं के टुकड़े लगाये जाते हैं। जबतक लताएं भूमि ढकने नहीं पातीं निंदाई करना होगी। आश्विन में लगाई गई लता से तीन महीने में और माघ वाली से चार महीने में कन्द मिल जाते हैं। उपज एक सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती

१. लेखक की 'सागभाजी की खेती' आठवां संस्करण, पृष्ठ ११७ में सुखाने की रीति दी है।

है। बीज के लिए लताएं रखने के लिए आश्विन वाली से माघ की फसल के लिए और माघवाली से आषाढ़ में कुछ लताएं लगा देते हैं, जिससे आश्विन में फिर बीज मिल जाता है। एफ. ए. १७ सफेद अच्छी जाति है।

उपयोग और गुण—उबालकर, आग में भूंज कर अथवा सब्जी बनाकर खाते हैं। इसके टुकड़े करके सुखा भी सकते हैं। आटा भी इसका बनाया जा सकता है। पत्तियां पशुओं को खिलाई जाती हैं। शकरकन्द भारी, बलदायक और कुछ दस्तावर होते हैं।

४. **गांठगोभी**—दो सौ मन गोबर का खाद देकर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। इसके बीज नर्सरी में लगाकर रोप तैयार करके लगाने चाहिए। इसकी कतारें लगभग १५ इंच दूर और कतारों में पौधे ६ इंच की दूरी पर रखने चाहिए। निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार करने से तीन-चार महीने में फसल तैयार हो जाती है। ज्यों-ज्यों गोभियां काम के योग्य होती जायं उनकी तरकारी बनाई जा सकती है। उपज लगभग १५० मन प्रति एकड़ तक हो जाती है। इसके बीज ठंडे स्थानों में ही बनते हैं सो वहां से मंगवाना होंगे।

उपयोग और गुण—तरकारी बनाई जाती है। पशुओं को भी खिलाते हैं। इसकी सब्जी कुछ दस्तावर होती है।

५. **सूरन**—इसके लिए कम सड़ा हुआ खाद भी काम देगा। लगभग २०० मन खाद देना चाहिए। इसके लगाने के लिए बड़ी सूरन के आस पास छोटी गांठें निकल आती हैं वे लगाई जाती हैं। इनका वजन लगभग एक छटांक होता है। पूरी बाढ़ पाई हुई सूरन चार साल में तैयार होती है। ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है हर साल कुछ दूरी बढ़ा कर वही गांठें क्यारियों में लगाई जाती हैं। पहले साल १′, दूसरे साल १.५′, तीसरे साल २′ और चौथे साल ३′—४.५′ के अन्तर पर लगाते हैं। आवश्यकतानुसार निंदाई-

सिंचाई करते रहने से चौथे साल में जो सूरन तैयार होती है उसका वजन लगभग पांच सौ मन प्रति एकड़ हो जाता है। हर साल बोने के समय तक गांठों को हवादार मकान में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण—कन्द की तरकारी बनाई जाती है। इसका आचार भी बनता है। यह कफ-नाशक और अग्नि-वर्धक होती है।

६. गराड़ू ७. रतालू—खेतों की अन्तिम जुताई के बाद तीन-तीन फुट की दूरी पर दो-दो फुट चौड़ी नालियों में खाद भरवा देना चाहिए। इसके लिए कन्द के टुकड़े विशेषत: ऊपरी भाग के काट कर खाद भरी हुई नालियों में लगाना चाहिए। कतारों में अन्तर पांच फुट का और पौधों में तीन फुट का काफी होगा। लगाने के बाद कुछ दिन तक घास से ढक कर रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से सात-आठ महीने में फसल तैयार हो जाती हैं। दो सौ से ढाई सौ मन कन्द प्राप्त हो जाते हैं। हवादार मकान में रखने से कन्द वैसे ही कई दिनों तक रखे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण—कन्द की तरकारी बनती है। यह अग्निदीपक और सूखी होती है। बवासीर और कफ वालों के लिए विशेष लाभप्रद होती है।

८. सुथनी—इसकी खेती बिहार में होती है। इसके कन्द एक-एक फुट की दूरी पर खेतों में लगा दिये जाते हैं और बिना सिंचाई के हो जाती है। लगाने के समय से छ:-सात महीने में फसल तैयार होती है। उपज दो सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती है। कन्द मचानों पर हवादार मकानों में रख सकते हैं।
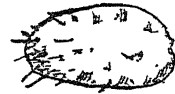
उपयोग और गुण—शकरकन्द की भांति उबाल कर खाते हैं। यह सूखी और भारी होती है।

९. कच्चू—इसके लिए लगभग दो सौ मन गोबर का खाद या १० मन खली देना अच्छा होगा। इसके लिए कच्चू के टुकड़े लगाये जाते हैं। पंक्तियां ढाई फुट और उनमें पौधे एक-एक फुट की दूरी पर होने

चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से छः-सात महीने में फसल तैयार हो जाती है। लगभग १०० मन कच्चू मिल जाते हैं। बीज के लिए मिट्टी में गाढ़ कर कच्चू रखने चाहिएं।

उपयोग और गुण—आलू की भांति उबाल कर तरकारी बनाते हैं। आलू की अपेक्षा यह जल्दी पचने वाली होती है।

१०. अरारूट—इसकी गांठें एक-एक फुट की दूरी पर लगाई जाती हैं और पौधों पर मिट्टी चढ़ाना होती है। फूल आते जायं तो उन्हें तोड़ डालना चाहिए। सिंचाई की जहां आवश्यकता हो करना होगी, लगाने के समय से आठ-दस महीने में फसल तैयार होती है और लगभग दो सौ मन कन्द मिल जाते हैं, जिनसे १५% स्टार्च मिल जाता है। कच्चू की गांठों की भांति इसकी गांठें भी बोने के लिए रख ली जाती हैं।

उपयोग और गुण—गांठों की तरकारी बना सकते हैं; परन्तु अधिकतर स्टार्च बनाने के काम आता है। यह हलका और जल्दी पचनेवाला होता है।

११. टेपियोका—इसके लिए १५० मन गोबर पत्तों का खाद काफी होगा। वर्षारम्भ के समय एक फुट व्यास के एक फुट गहरे गढ़ों में इसकी डंडी के टुकड़े लगाये जाते हैं। टुकड़ों का दो-तिहाई भाग गाड़ना होता है। पौधों में २ फुट का अन्तर रखना चाहिए। इनपर मिट्टी भी चढ़ाना होती है। छः-सात महीने में कन्द तरकारी के योग्य हो जाते हैं। स्टार्च के लिए पत्ते झड़ने लगें और जमीन फटने लगे तब उखाड़ना चाहिए। उपज सौ-सवा-सौ मन प्रति एकड़ आ जाती है।

उपयोग और गुण—कन्द छीलकर शकरकन्द की भांति काम में लाते हैं। इनसे सब्जी और मिठाई भी बनती है। चूर्ण से साबूदाना भी बनाते हैं। कन्द को छील कर छोटे-छोटे टुकड़े करके सुखाकर भी रख लेते हैं।

१२. एसपेरेगस—इसके लिए गोबर कूड़ाकर्कट लगभग तीन सौ मन प्रति एकड़ डालना होगा। इसके बीज या रोप पंक्तियों में लगाना चाहिए।

पंक्तियां डेढ़ फुट की दूरी पर होनी चाहिए। उनमें रोप एक-एक फुट की दूरी पर लगा सकते हैं। इनपर मिट्टी चढ़ाना होती है। तीसरे साल में इसके डंठल तरकारी के योग्य होते हैं और दस बारह साल तक मिलते रहते हैं। जिन ठंडलों पर मिट्टी नहीं चढ़ती वे हरे हो जाते हैं। प्रतिवर्ष लगभग ५० मन डंठल मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—डंठलों की तरकारी बनाई जाती है जो बलदायक होती है।

२—पत्ते और कोमल डंडियां काम में लाई जाने वाली तरकारियाँ

इनके लिए नाइट्रोजन का खाद विशेष लाभप्रद होता है। लगभग दो मन प्रति एकड़ फासफेट का खाद भी देना अच्छा होगा ताकि पौधे स्वस्थ हों और कीट और व्याधियों का आक्रमण विशेष न हो। जुताई भी गोभी जैसी दो-एक फसलों को छोड़कर अधिक गहरी नहीं करनी पड़ती। भूमि बलुआ और मटियार को छोड़कर सब प्रकार की अच्छी होती है। इस वर्ग में निम्नलिखित तरकारियां है।

(१) प्याज Onion *Allium cepa* (२) लहसुन Garlic *Allium sativum* (३) लीक Leek *Allium porrum* (४) गंधन Shallot *Allium ascolonicum* (५) शाईव Shive *Allium schoe-noprosum* (६) सिबाल Sibol *Allium fistulosum*

उपरोक्त तरकारियां प्याज की जाति की हैं और अधिकतर तरकारियों को स्वादिष्ट करने के काम आती है। इनमें की पहली दो मुख्य है, शेष को कहीं-कहीं स्थान मिल जाता है।

(७) कुसुम Safflower *Carthamus tinctorius* (८) खस-खस Poppy *Papaver somniferum* (९) खिसारी Khesari *Lathyrus sativus* (१०) चौलाई Chaulai *Amarantus*

blitum (११) पालक Spinach *Spinosa oleracea* (१२) पालक खट्टा Sorrel *Rumex vasicarius* (१३) पोई Malabar night shade *Basella alba and Basella rubra* (१४) बथुआ Bathua *Chenopodium album* (१५) मेथी Fennugreek *Trigonella foenum-graecum* (१६) राई Rai *Brassica juncea* (१७) राजगिरा Rajgira *Ammarantus Caudatus paniculatus* (१८) लूणिया Purslane *Portulaca oleracea* (१९) सरसों Sarson *Brassica Campestris* (२०) सरसों सफेद Sarson white *Brassica alba* (२१) साग लाल और मरसा Sag *Amarantus gangaticus*

उपरोक्त ७ से २१ तक की खेती भारतवर्ष में बहुत दिनों से होती चली आ रही है। इनके लिए दो मन फोसफेट के खाद के साथ सवा सौ मन गोबर का खाद काफी होता है। यह सब प्रकार की भूमि में हो जाती है।

(२२) बंधगोभी Cabbage *Brssica oleracea* (२३) चीनी गोभी Chinese cabbage *Brassica oleracea gemmifera* (२४) ब्रुसेल्स स्प्राट्स Brusells sprouts *Brassica oleracea acephela* (२५) लेट्यूस Lettuce *Lectuca sativa*

उपर्युक्त चार (२२ से २५) का आगमन विदेशों से हुआ है। बंध-गोभी की खेती विशेष रूप से, लेट्यूस की उससे कम तथा शेष दो की कहीं-कहीं होती है।

इनके लिए गोबर का खाद दो सौ से ढाई सौ मन, फासफेट का खाद दो-ढाई मन, हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट और मन-सवा मन एमो-नियम सलफेट या चार-पांच मन खली का खाद देना लाभप्रद होगा। इनके लिए दुमट भूमि अच्छी होती है।

निम्नलिखित का आगमन भी विदेशों से ही हुआ है। जबतक अंग्रेज थे उनके बगीचों में कहीं-कहीं इन्हें स्थान मिल जाता था। अब इनकी खेती की संभावना नहीं है। फिर भी किसीकी इच्छा हो तो निज के बगीचों में

स्थान दे सकते हैं। इनके लिए दो सौ मन गोबर का खाद और दो-ढ़ाई मन हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट प्रति एकड़ काफी होगा।

(२६) एण्डाईव Endive *Chicorium endiva* (२७) औरेक Orach *Atriplex hortense* (२८) कशनी Chicory *Chicorium intybus* (२९) कार्न सलाद Corn salad *Valleianella olitoria* (३०) कार्डून Cordoon *Cyneria cardunculus* (३१) केल Kale *Taraxacum officinale* (३२) कोलार्डस Collards *Brassica olcracea acephelia* (३३) चार्डस chards *Beta valgaris* var *cicela* (३४) डेण्डेलियन Dandelion *Toraxacum Officinalis* (३५) पार्सले Parsley *Petroselinum hortense* (३६) रूबंब Rhubarb *Rheumrha ponticum* (३७) शेरविल Shervil *Anthricus cerefolium* (३८) सिसरी Sage *Salvia offlcinales* (३९) सेलेरी Celery *Apium graveolens*

१. प्याज—गोबर का खाद इससे पहली फसल को देना अच्छा होगा। प्याज को ही देना हो तो दस मन खली और दस-बारह मन राख देना अच्छा है। लेखक के प्रयोग में सन के बीज का खाद भी अच्छा पाया गया। सन की फसल को ताग और डंठल के लिए काट कर बीज उसी खेत में भिगोकर अंकुरित कर के छींट दिये गये थे। इसकी तुलना हरे सन को गाढ़ कर भी की गई थी। जिस खेत में बीज डाला गया था उससे ८.३ मन सन का ताग, ६९ मन डंठल और ८९ मन प्याज हरे खाद वाले खेत से अधिक आए।

इसके बीज नर्सरी में डालकर रोप लगाये जाते हैं। रोप जब चार-पांच इंच ऊंचे हो जायं तो पांच-पांच इंच की दूरी पर लगा देना चाहिए। प्याज में पानी काफी देना पड़ता है सो समय-समय पर अवश्य देना चाहिए। निंदाई साधारण। रोपने के समय से पांच महीने में प्याज उठाने जैसे हो

जाते हैं। वैसे सब्जी के लिए तीन महीने बाद से भी उखाड़े जा सकते हैं। इसके बीज प्राप्त करने की यह रीति है कि पिछली फसल के बड़े-बड़े चुने हुए प्याज लगा देना चाहिए। इनके फूल में जो बीज आते हैं। उन्हें नमी से बचाकर रखना चाहिए। प्याज की उपज २०० से २५० मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण—इनकी तरकारी बनाई जा सकती है और इससे तरकारियां स्वादिष्ट भी की जाती हैं। प्याज पाचक, बलवर्धक, उत्तेजक, कफ और ज्वर-नाशक, सर्दी और खांसी को कम करनेवाला होता है। हैजे के दिनों में इसका सेवन विशेष रूप से करना चाहिए। चीनी के साथ इसका रस देने से खूनी बवासीर में लाभ पहुंचता है।

२. लहसुन—प्याज की भांति भूमि तैयार कर के इसकी कलियां क्यारियों में छः-छः इंच की दूरी पर लगा देना चाहिए। अन्य फसलों की क्यारियों की पारियों पर लगा देने से भी लहसुन हो जाते हैं। रोपने के समय से पांच-छः महीने में फसल तैयार हो जाती है और उपज लगभग ५० से ७५ मन तक आ जाती है।

उपयोग और गुण—तरकारियों को स्वादिष्ट करने के काम में लाई जाती है। इसका तेल लकवा और बादी में काम देता है। बुखार, खांसी, सर्दी पर लहसुन का सेवन अच्छा होता है।

३. लीक—लीक के पौधों पर मिट्टी चढ़ाना पड़ती है। पंक्तियां और पौधों में पांच-छः इंच का अन्तर रखना चाहिए। शेष कार्य प्याज के समान।

५. शाईव—इसकी खेती स्काटलैंड में होती है। प्याज की भांति भमि तैयार कर खूंटी से लगाते हैं।

६. सिबाल—इसे बीज या खूंटी से लगाते हैं। एक साल लगाने से दो साल तक पत्ते मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—३,४,५,६ का उपयोग तरकारियों को स्वादिष्ट

करने के लिए किया जाता है। गुण करीब करीब प्याज जैसे।

७. **कुसूम**—(पृष्ठ १९७)

८. **खसखस**—(पृष्ठ १९८)

९. **खिसारी**—(पृष्ठ १७६)

१०. **चौलाई**—इसे क्यारियों में छींट कर बोते हैं। पौधे कोमल मिलते रहें, इसलिए इसे एक मास के अन्तर पर बोना चाहिए। ऐसे क्रम से चार-पांच महीने तक तरकारी मिलती रहती है। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देना चाहिए।

उपयोग और गुण—कोमल पौधों की तरकारी बनाई जाती है। इसकी तरकारी हलकी, पाचक और खून को साफ करने वाली होती है।

११. **पालक**—छींट कर क्यारियों में या पंक्तियों में बो सकते हैं। पंक्तियों में एक फुट का अन्तर रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से ४-५ महीने तक पौधे मिलते रहते हैं। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देने चाहिए।

उपयोग और गुण—पौधों से तरकारी बनाई जाती है जो पाचक और खून को साफ करने वाली होती है।

१२. **पालक खट्टा**—खेती पालक जैसी। इसकी तरकारी स्कर्वी नाम की व्याधि में लाभप्रद होती है।

१३. **पोई**—पोई लाल और हरे पत्ते वाली अलग-अलग होती है। इसके खेत-के-खेत नहीं लगाये जाते हैं। इसकी बेल छप्परों पर या मचानों पर चढ़ा देते है। बरसात में इसके पुराने पेड़ के पास जो नई बेल निकल आती है लगा देना चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्तों की तरकारी बनाई जाती है। पकोड़े-समोसे आदि भी इससे अच्छे बनते हैं। इसकी तरकारी स्वास्थदायी और ठंडी होती है। रक्तपित्त के विकार इससे शांत होते हैं।

१४. **बथुआ**—इसे छींट कर या पंक्तियों में बोते हैं। पंक्तियों में नौ इंच का अन्तर अच्छा होता है। पर गेहूं के खेतों में आपसे आप निकल आता

है सो काम में ला सकते हैं। बोने के समय से एक महीने में पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं । इससे भी चार-पांच महीने तक तरकारी मिलती रहती है।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी पाचक हलकी और दस्तावर होती है । तिली, बुखार, बवासीर आदि में गुणदायक ।

१५. **मेथी**—चूंकि यह दलहन की फसल है इसके लिए फासफेट का खाद अवश्य देना चाहिए—ढाई मन के लगभग हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट देना उत्तम होगा। गोबर का खाद यदि पहली फसल को नहीं दिया हो तो सौ सवा सौ मन इसे दे देना चाहिए । इसे क्यारियों में छींट कर बोते हैं । आवश्यकतानुसार निंदाई करते रहने से एक माह में इसके पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। बीज चार महीने में तैयार होते हैं। लगभग आठ-दस मन बीज प्रति एकड़ मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—हरी मेथी की तरकारी बनती है। इसे सुखाकर भी रख सकते हैं ताकि अभाव के समय काम आवे। बीज की तरकारी चने की दाल के साथ बनती है। मेथी क्षुधावर्धक, बलदायक, वातनाशक, पेचिश के दस्तों को रोकनेवाली, बड़ी हुई तिल्ली तथा खांसी में भी काम की है। गठिया बादी इसके सेवन से छुटती है ।

१६. **राई**—सरसों जैसे

१७. **राजगिरा**—छींटकर या पंक्तियों में बोते हैं। पंक्तियों में डेढ़ फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर काफी होगा। कुछ अंतर पर बीज बोने से चार-पांच महीने तक सब्जी मिलती है। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देने चाहिए ।

उपयोग और गुण—कोमल पौधे और पत्तों से तरकारी बनाते हैं। जो हलकी पाचक होती है। बीज से लावा बनाकर फलाहार के काम में लाते हैं।

१८. **लूणिया (कुलफा) साग**—छींट कर क्यारियों में बोना चाहिए। यह दो जाति का होता है। एक हरे पत्ते वाला और दूसरा सुनहरे पत्ते वाला। बोने के समय से तीन-चार सप्ताह में पौधे सब्जी के योग्य तैयार

हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—कोमल पौधों की तरकारी बनाई जाती है। स्वाद में लूणिया कुछ खारा और खट्टा होता है। इसकी तरकारी पाचक और अग्निदीपक होती है।

१९. **सरसों**—(पृष्ठ २०६)

२०. **सरसों सफेद**—सरसों जैसी।

२१. **साग**—राजगिरा जैसी इसकी भी खेती होती है।

२२. **बंधगोभी**—दुमट भूमि और दो सौ से ढाई सौ मन गोबर का खाद, दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट और पांच मन खली या मन सवा मन एमोनियम सलफेट देना अच्छा होगा।

इसके बीज नर्सरी में गिरा कर पौधे तैयार किये जाते हैं। चार-पांच सप्ताह के होने पर इन्हें क्यारियों में या पारियों पर लगा सकते हैं। पंक्तियों में डेढ़ से दो फुट का अन्तर और पौधों में एक फुट से डेढ़ फुट का अन्तर अच्छा होगा। इसके पौधों की जड़ों पर थोड़ी मिट्टी चढ़ानी चाहिए। बोने के समय से जल्दी आने वाली ढाई-तीन महीने में और देरी वाली चार-पांच महीने में तैयार होती है। उपज १५० से २५० मन तक हो जाती है। बीज पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में ही होते हैं। चुनी हुई गोभियां एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान में लगा दी जायं तो वे फूट जाती है और बीज बन जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी बनाई जाती है, जो दस्तावर और स्वास्थदायी होती है।

२३. **चीनी गोभी**—यह बंधगोभी जैसी होती है परन्तु चपटी न होकर उलटे लट्टू के आकार की होती है।

२४. **ब्रसेल्स स्प्राउण्स्**—इसमें ऊंची डंडी पर बंधगोभी के

आकार की छोटी गोभियां लगती हैं । इसके रोप भी नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। इन्हें दो-ढाई फुट की दूरी पर लगाना चाहिए । निंदाई के समय पौधों पर कुछ मिट्टी चढ़ाना होगी । बोने के समय से पांच-छः महीने में गोभियां तोड़ने जैसी होती हैं। खेती की क्रिया बंधगोभी जैसी ही है।

उपयोग और गुण— बंधगोभी जैसे ।

३५. लेट्यूस—खाद की मात्रा बंधगोभी से लगभग आधी दी जाय। इसे बीज या रोप से तैयार करते हैं। पंक्तियां छः इंच और पंक्तियों में पौधे भी छः इंच की दूरी पर होने चाहिए । निंदाई के समय ज्यों-ज्यों पत्ते बनते जायं उन्हें बांधते जाना चाहिए, जिससे वे कोमल रहें। इसके पत्ते कुछ खुली हुई बंधगोभी जैसे होते हैं ।

उपयोग और गुण—पत्ते सलाद के काम आते हैं अथात् कच्चे ही खाते हैं। स्वाद के लिए नमक, मसाला, नीबू का रस डाल सकते हैं। यह ठण्डी और खून को साफ करने वाली होती हैं।

जैसा कि पहले कहा गया है निम्नलिखित फसलों की खेती भारत में कहीं-कहीं अंग्रेजों के बगीचों में हुआ करती थी और अब तो बहुत ही कम होती है । फिर भी किसीकी इच्छा हो तो बंधगोभी के लिए जिस तरह से भूमि तैयार करते हैं, करके इन्हें निम्नलिखित दूरी पर लगा सकते हैं। चूंकि ये ठंडे देश की चीजें हैं इन्हें आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) में बोना चाहिए। ये सब बीज से पैदा की जाती हैं। रुबर्ब कन्द से भी हो जाता है ।

इनमें से एंडाईव, काशनी, कार्नसलाद, क्रेस, पार्सले, रुबर्ब और शेरबिल की सलाद काम में आती है। शेष के पत्ते तथा डंडियों से सब्जी बना सकते हैं। रुबर्ब के पत्ते अर्वी के पत्ते की भांति जमीन की सतह के पास से निकलते हैं और कई साल तक लगा रहता है सो इसे एक ओर स्थान दे देना चाहिए । एंडाईव, कोलार्ड्स, डेण्डेलियन, पार्सले और सेलेरी के बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं। सेलेरी पर मिट्टी चढ़ाना होता है और काशनी

के पत्ते सफेद करने होते हैं इसलिए उन्हें गमले से ढकना पड़ते हैं।

	पौधों की दूरी		बोने या रोपने के समय
	दूरी पंक्ति	दूरी पौधा पंक्ति में	से तैयारी का समय
२६ ओरेक	१.५′	१′	२.५ महीने में
२७ एण्डाईव	१′	१′	२ ,,
२८ काशनी	१′	६″	३-४ ,,
२९ कार्डून	४′	१′	३-४ ,,
३० कार्न सलाद	१′	६″	२ ,,
३१ क्रेस	२′	१′	३.५ ,,
३२ कोलार्ड्स	३′	२′	४ ,,
३३ चार्ड	१.५	१″	२.५ ,,
३४ डेंडेलियन	१′	६″	२ ,,
३५ पार्सले	१′	४″	४ ,,
३६ रुबर्ब	४′	१′	३-४ ,,
३७ शेरविल	८″	६″	२ ,,
३८ सिसरी	१′	१′	२ ,,
३९ सेलेरी	३′	१′	४ ,,

३—फूल की डंडी या फूल काम में लाई जानेवाली तरकारियां

१. ग्लोब आर्टिचोक Globe artichoke *Synara scolymus*. २. पटुवा Roselle *Hibiscus sobdariffa*. ३. फूलगोभी Cauliflower. *Brassica oleracea Vor. botritys* ४. ब्रोकोली Broccoli *Brassica oleracea*.

१. ग्लोब आर्टिचौक—यह सूरजमुखी की जाति का होता है। अथ-

खिले फूल और कलियां काम में लाई जाती हैं। इसके लिए दुमट मिट्टी और लगभग २०० मन गोबर का खाद अच्छा होगा। इसे बीज और पौंच (Suckers) दोनों से पैदा करते हैं। बीज से पैदा करना हो तो रोप नर्सरी में तैयार कर जब वे दो-ढाई इंच ऊंचे हो जायं तो खेतों में लगाना चाहिए। पंक्तियों में पांच-छः फुट का और पौधों में दो-तीन फुट का अन्तर काफी होगा। बोने के समय से करीब बारह महीने में फसल तैयार होती है।

उपयोग—कोमल कलियां और फूल तरकारी के काम आते हैं।

२. **पटुवा**—(पष्ठ २०८)

३. **फूलगोभी**—बंधगोभी के लिए खाद देकर जिस तरह से भूमि तयार की जाती है इसके लिए भी करनी चाहिए। इसके बीज नर्सरी में गिराये जाते हैं और रोप को खेत में लगाने से पहले एक बार नर्सरी में एक जगह से हटा कर दूसरी जगह पर लगा कर पन्द्रह-बीस दिन बाद खेत में लगाना अच्छा होता है। इन्हें पारियों पर लगाना अच्छा होता है। पंक्तियों में दो फुट और पौधों में डेढ़-दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार निदाई-सिंचाई करते रहने से जाति अनुसार कार्तिक से फाल्गुन (अक्तूबर से फरवरी-मार्च) तक फूल मिलते रहते हैं। इसके बीज पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में ही होते हैं।
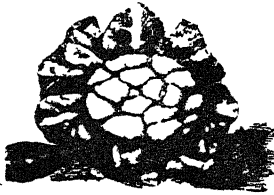
उपयोग और गुण—फूलगोभी की तरकारी, आचार आदि बनाते हैं यह बादीकारक और कब्ज़कारी होती है। हृदय को इसकी तरकारी से लाभ पहुंचता है।

४. **ब्रोकोली**—यह भी एक प्रकार की फूलगोभी है। इसकी खेती फूलगोभी जैसी ही होती है। फसल तैयार होने में फूलगोभी की अपेक्षा अधिक समय लगता है। सात-आठ महीने में फूल तैयार होता है। इसके पौधे

ढाई फुट के अन्तर पर लगाने चाहिए ।

४—फल काम में लाये जानेवाली तरकारियां

इनमें से परवल, टमाटर, बैंगन आदि ऐसी हैं जिनके लिए हलकी दुमट मिटटी अच्छी होती है । ककड़ी, खरबूजा आदि के लिए बलुआ उत्तम होगी ।

इस वर्ग में निम्नलिखित तरकारियों की गणना है ।

(१) आल, कदुआ, लौकी Bottle gourd *Lagenaria vulgaris* (२) उच्चै Bitter gourd *Momordica muricata* (३) करेला Bitter gourd *Momordica Charantia* (४) कद्दू, कदीमा, काशीफल, सीताफल Pumpkin *Cucurbita moschota* (५) कद्दू विलायती हलुवा कद्दू Vegetable marrow *Cucurbita pepo* (६) कद्दू, भूरा, शिषकुम्हड़ा, पेठा Ash gourd *Benincasa hispida* (७) कुन्दरू Kundru *Tricosenthes diseca* (८) खरबूजा Melon *Cucumis melo* (९) खीरा Cucumber *Cucumis sativus* (१०) खीरा गोल, कचरी Cucumber *Cucumis anguria* (११) चथैल, किंकोड़ा Chathail *Momordica cochinchininsis* (१२) चिचड़ा Snake gourd *Tricosanthes anguiana* (१३) टमाटर Tomotoes *Lycopersicum esculantum* (१४) टिण्डा Tinda *Citrullus vulgaris var fistulosus* (१५) तरबूज, कलिंगड़ा, हिन्दवाना Water melon *Citrullus vulgaris* (१६) तोरी, तरोई, झिगुनी Sponge gourd *Luffa acutangula* (१७) तोरी घिया, घिवरा Sponge gourd *Luffa cylindrica* (१८) परवल Parwal *Tricosanthes dioica* (१९) फूट Cucumber *Cucumis malo var momordica* (२०) बैंगन Brinjal *Solanum melongena* (२१) भिण्डी Ladies fingers *Abelmoschus (Hibiscus) esculantus* (२२) मिर्च Chillies

Capsicum Frutescens (annum) (२३) मोगरी Mogri *Rappanus sativus Var caudotus* (२४) रैन्ता, रेती, ककड़ी Cucumber *cucumis melo var utilitimus* (२५) स्ववेश Sqash *Cucurbita melo pepo*

(१) **आल, लौकी**—इसकी लता छप्परों या मचानों पर चढ़ाई जाती है और बहुधा लोग अपने घरों के आसपास लगा देते हैं। खेत-के-खेत कम ही
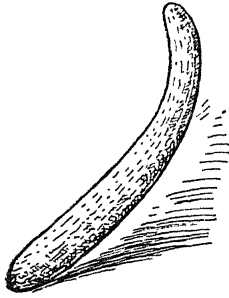
बोये जाते हैं। खेत में लगभग १५० मन गोबर का खाद देकर उन्हें तैयार कर लेना चाहिए। इसके बीज लगाये जाते हैं; परन्तु नर्सरी में तैयार करके पौधे भी लगा सकते हैं। पौधों में लगभग छः-छः फुट का अन्तर रहना चाहिए। माघ में बोई जाय उसके लिए चार-चार फुट का अन्तर काफी होगा। लताएं जमीन से कुछ ऊंची रहें इसलिए मचान का प्रबन्ध न हो सके तो कुछ टहनियां डाल देनी चाहिए। आषाढ़ में बोई जाने वाली से कार्तिक से माघ तक और माघ वाली से वैशाख से आषाढ़ तक लौकियां मिल सकती हैं। माघ में बोई जाने वाली के लिए 'समर प्रालिफिक' अच्छी जाति है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी, रायता, खीर, हलुआ आदि बना सकते हैं। इसकी तरकारी ठंडी, शीघ्र पचनेवाली, दस्तावर और बल-दायक होती है।

(२) **उच्चे**—उच्चै करेले जैसे लेकिन फल छोटे-छोटे होते हैं। खेती करेले जैसी।

(३) **करेला**—लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद और ढाई मन हड्डी का चूरा प्रति एकड़ डाल कर जमीन तैयार करके बीज बोना चाहिए। कतारों में अन्तर चार-पांच फुट और पौधों में दो फुट का काफी होगा। चूंकि इनकी भी

लताएं होती हैं पौधों को जमीन से ऊपर रखने का प्रबन्ध होना चाहिए।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है जो शीतल, कड़वी और दस्तावर होती है।

४. कद्दू—लगभग एक सौ मन खाद देकर जमीन तैयार करनी चाहिए। इसे बहुधा मक्का के खेतों में भी बो देते हैं। इसके बीज पंक्तियों में तीन-तीन फुट की दूरी पर बोना चाहिए। पंक्तियों में अन्तर छः फुट का होना चाहिए। माघ में बोई जाने वाली से बरसात में और बरसात वाली से सर्दी में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इससे भी रायता, हलुआ आदि बना सकते हैं। इसकी तरकारी कफवर्धक और कब्ज-कारक होती है। बीज पाचक और दस्तावर होते हैं।

५. कद्दू-विलायती—यह भी एक प्रकार का कद्दू ही है। इसे अधिक दिनों तक रक्खा जाय तो अन्दर का गूदा सूख जाता है। इसकी खेती कद्दू की खेती के समान ही होती है।

६. कद्दू-भूरा—लगभग एक सौ मन खाद और दो मन हड्डी का चूरा डालकर खेत तैयार करने चाहिए। इसके बीज कतारों में छः-छः फुट की दूरी पर बोना चाहिए। कतारों में भी अन्तर उतना ही होना चाहिए। बोने के समय से छः-सात महीने में फल आते हैं जिनपर भूरा-भूरा पदार्थ जम जाता है। इसकी एक-दो लता छप्परों पर चढ़ा दी जायं तो वहां भी अच्छा फल जाता है।

उपयोग और गुण—इसकी एक प्रकार की मिठाई 'पेठा' बनती है। पेठा ठंडा, वीर्यवर्धक, खून को साफ करने वाला और बलदायक होता है। मृगी, पागलपन आदि में इसका सेवन अच्छा होता है। ताजे रस के सेवन से आन्तरिक अंगों से रक्त बहता हो तो वह बन्द हो जाता है। क्षय रोग, अर्श आदि शक्तिनाशक व्याधियों में पेठे का सेवन लाभदायक होता है।

७. **कुन्दरू**—इसकी लता छप्पर या पेड़ों पर चढ़ा दी जाती है जिनमें डेढ़-दो इंच लम्बे फल लगते रहते हैं। इसके लिए इसके जड़ के पास की गांठ गढ़ा खोद कर लगा दी जाती है।

८. **खरबूजा**—बहुधा नदी की वालू में अच्छा होता है। तीन-तीन फुट के अन्तर पर डेढ़-डेढ़ फुट चौड़ी नालियां बना कर उनमें लगभग डेढ़ सौ मन गोवर का खाद मिला देना चाहिए। ऐसी नालियों में तीन-चार फुट की दूरी पर दो-दो बीज बोना चाहिए। बाद में सबल को रखकर निर्बल पौधे को उखाड़ कर फेंक देना चाहिए। जिस नदी में बोये जाते हैं उसीके जल से पहले कुछ दिन जल्दी-जल्दी सींचना होगा। जड़ें गहरी चली जाने से फिर सिंचाई कम लगेगी। इसे माघ में लगाते हैं और गर्मी में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—इनके फल पकने पर खाये जाते हैं। लखनऊ के खरबूजे बड़े मीठे होते हैं। कच्चे फलों की तरकारी बनाई जाती है। खरबूजा दस्तावर और वलदायक होता है। बीज ठंडे, बलदायक और अधिक पेशाब लाने वाले होते हैं।

९. **खीरा**—लगभग १५० मन प्रति एकड़ गोबर का खाद देकर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। इसे बहुधा मक्का के खेत में भी बो देते हैं। अकेली बोना हो तो पंक्तियों में चार-चार फुट की दूरी पर बोना चाहिए। पंक्तियों में छः फुट का अन्तर अच्छा होगा। आषाढ़ में बोये जाने वाले से आश्विन-कार्तिक (आ-न.) में फल मिलते हैं। माघ में बोने से वैशाख-जेष्ठ में मिलेंगे।
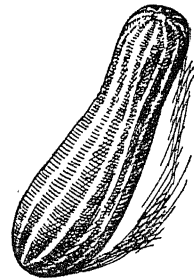
उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनसे सलाद भी बनाते हैं। इनकी तरकारी भी बनाई जाती है। ककड़ियां ठंडी होती हैं।

१०. खीरा गोल, कचरी—बहुधा मक्का, कपास आदि के साथ बो देते हैं। छोटे-छोटे फूट के आकार की होती है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इनको वैसे ही कच्चा भी खा सकते हैं।

११. चचैल—करेले जैसा कांटेदार फल गोल या लम्बा होता है। इसकी गांठ जो जड़ के पास होती है लगा दी जाती है। लता मचान पर चढ़ा दी जाती है। बीज से भी पैदा कर सकते हैं। एक बार लता चढ़ा दी जाय तो कई साल तक बरसात में फल देती रहती है। दूसरी बरसात में फिर नई निकल आती है।

उपयोग और गुण—फलों के कांटे छील कर तरकारी बनाते हैं। इसकी तरकारी अग्निदीपक, बुखार और खांसी को मिटाने वाली होती है। इसकी जड़ से बाल का गिरना बन्द हो जाता है।

१२. चिचड़ा—लगभग १२५ मन गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट प्रति एकड़ मिला कर खेतों को तैयार करना चाहिए। इसके बीज दो-दो फुट की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए। पंक्तियों में अन्तर छः-छः फुट का रखना चाहिए। इसके फल तीन-चार फुट लम्बे और इंच-डेढ़ इंच मोटे होते हैं। इसकी लता के लिए मचान बनाना जरूरी है। जब फल बनकर लटकने लगें तो उनके नीचे की नोक पर छोटे पत्थर या मिट्टी के ढेले बांध देने चाहिए। ऐसा करने से फल सीधे और लम्बे होंगे। बरसात में जो बीज बोये जायं उनसे फल आश्विन-कार्तिक में मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है, जो रुचिकर और बलदायक होती है।

१३. टमाटर—१००-१२५ मन गोबर का खाद और दो मन सूपर फासफेट या हड्डी का चूरा मिला कर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। जब पौधे एक फुट की ऊंचाई के हो जायं तो सवा मन के करीब सोडियम नाइ-ट्रेट या एक मन एमोनियम सलफेट का खाद भी देना चाहिए। इसके पौधे

पहले नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। जब पांच-छः इंच ऊंचे हो जायं तो

क्यारियों में या पानी देने की नालियों के दोनों ओर एक-एक फुट की दूरी पर लगा देने चाहिएं। पंक्तियों में दो फुट का अंतर होना चाहिए। आवश्यकता अनुसार निंदाई-सिंचाई करने से दो-तीन महीने में फल आना शुरू होकर तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। यदि कुछ आगे-पीछे बोये जायं तो और भी अधिक समय तक मिलते रहते हैं। दूसरी फसल के लिए अच्छे पके टमाटर के बीज धोकर सुखा करके वन्द डिब्बों में रख लेने चाहिए। टमाटर की उपज दो सौ मन से तीन सौ मन प्रति एकड़ हो जाती है। सिपाक्स और मीरठी अच्छी जातियां हैं।
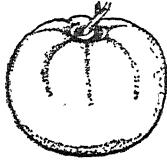
उपयोग और गुण—इसके फल बिना पकाये भी खाये जाते हैं। सब्जी भी बनती है। टमाटर दस्तावर, वीर्यवर्धक और अग्निदीपक होते हैं। बेरीबेरी, स्कर्वी, रीकेट्स में इनका सेवन अच्छा होता है और नेत्रों को भी लाभ पहुंचाता है।

१४ **टिंडा**—इसके लिए बलुआ-दुमट मिट्टी अच्छी होती है। सवा सौ मन गोबर का खाद प्रति एकड़ के हिसाब से देकर खेत तैयार कर लेना चाहिए। इसके बीज क्यारियों में दो-दो फुट की दूरी पर बोने चाहिएं। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से

दो महीने में फल आना शुरू होकर दो-ढाई महीने तक मिलते रहते हैं। दूसरी फसल के लिए पके हुए फल के बीज रखने चाहिए।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाई जाती है। टिण्डे कफ, पित्तनाशक, शीतल, दस्तावर और अधिक पेशाब लानेवाले होते हैं।

१५. **तरबूज**—नदी की बालू में बोने के लिए खरबूजे की भांति जमीन तैयार करके बोने चाहिए। दूसरे खेतों में बोना हो तो पांच-पांच फुट की दूरी पर डेढ़ फुट चौड़ी आठ-दस इंच गहरी मिट्टी में दो सौ मन गोबर का खाद व ढाई मन हड्डी का चूरा प्रति एकड़ के हिसाब से मिलाना चाहिए।

बाद में सिंचाई करके उपर्युक्त प्रकार से तैयार की हुई नालियों में चार-चार फुट की दूरी पर दो-दो बीज बोने चाहिए। 'पौधे निकल आने पर सबल को रख कर निर्बल को निकाल देना चाहिए। आवश्यकतानुसार निदाई-सिंचाई करते रहने से दो-ढाई महीने में फल आने शुरू होकर उतने ही समय तक फल मिलते रहते हैं। अच्छी फसल होने से लगभग २००० फल प्रति एकड़ मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—फल का लाल गूदा खाने के काम आता है। सफेद भाग की तरकारी बन सकती है। तरबूज ठंडा, पाचक और दस्तावर होता है। पीलिया नाम की व्याधि में इसका सेवन अवश्य करना चाहिए।

१६. तोरी (झिगुनी) १७. तोरी (घिवरा)— घरों के आसपास लगा कर मचान पर चढ़ा देने से लताएं फलती रहती हैं। खेत में बोने के लिए लगभग सवा सौ मन गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा मिला कर प्रति एकड़ डालना चाहिए, इनके बीज छः-छः फुट की दूरी पर बोने चाहिए। माघ में बोई जाने वाली के लिए तीन-चार फुट की दूरी काफी होगी। बोने के समय से ढाई-तीन महीने में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। आषाढ़ वाली से आश्विन-कार्तिक में व माघ वाली से वैशाख-जेष्ठ में फल मिलते रहते है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है जो शीतल और पित्तनाशक होती है।

१८. परवल—इसके लिए घोड़े की लीद का खाद अच्छा माना गया है। लीद और गोबर का खाद लगभग डेढ़ सौ मन और ढाई मन हड्डी का चूर्ण प्रति एकड़ डालना चाहिए। दूसरे साल पांच मन प्रति एकड़ के हिसाब से खली का खाद देना चाहिए। इसे बीज से तैयार कर सकते हैं; परन्तु बहुधा लता ही लगाई जाती है। तीन-चार हाथ बेल लेकर उसे तीन-चार बार ऐसी मोड़ते हैं कि एक हाथ लम्बा बन्डल बन जाता है और एक-एक छोर दोनों तरफ रह जाता है। इस बण्डल के बीच के भाग को मिट्टी में दबा देते हैं।

पंक्तियां छ. फुट की दूरी पर और उतना ही अन्तर रोपने की जगह का होना चाहिए। लताएं जगह-जगह जड़ें फेंकने न पायं इसलिए निंदाई के समय उठा-उठाकर देखते रहना चाहिए। लगाने के समय से पांच महीने में फल आना शुरू हो जाते हैं और चैत्र से आश्विन तक फल मिलते रहते हैं। पहले वर्ष में पचास-साठ मन और दूसरे में लगभग सौ मन फल मिल जाते हैं। तीसरे वर्ष में स्थान बदल देना चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्ते और कोमल डंडियों की तरकारी बनाई जा सकती है; परन्तु बहुधा फलों की ही तरकारी बनाते हैं। पत्ते पित्तनाशक, डंडी कफनाशक और फल त्रिदोषनाशक हैं।. इससे पाचन-शक्ति तीव्र होती है। खांसी, ज्वर और रक्त-विकार दूर होते हैं।

१९. फूट—इसके बीज मक्का के खेत में डाल दिये जाते हैं। लताओं में खरबूजे के आकार के फल बैठते हैं। खाने में ये बहुत ही कम मीठे होते हैं। कच्चे फल भाद्रपद में और पके हुए आश्विन-कार्तिक में मिलते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाते हैं। पके फल वैसे ही खाते हैं।

२०. बैंगन—दो सौ मन गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा तथा दस-बारह मन राख का खाद देकर खेत तैयार कर लेने चाहिए। इसके पौधे पहले नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। जब पौधे चार-पांच सप्ताह के हो जायं तो उन्हें दो-दो फुट की दूरी पर क्यारियों में लगा देना चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से तीन महीने में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं और तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। इनकी उपज डेढ़ सौ से दो सौ मन प्रति एकड़ हो जाती है। 'दिल्ली वटिया' लम्बा बैंगनी रंग का 'पानीपत गोल' दोनों अच्छी जातियां हैं।
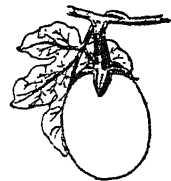
उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है जो गर्म, वीर्य-वर्धक और कफनाशक होती है।

२१. **भिण्डी-रामतरोई**—इसके लिए लगभग १५० मन गोबर का खाद प्रति एकड़ डालकर खेत तैयार कर लेने चाहिए। इसके बीज बोये जाते हैं। बरसात में बोई जाने वाली की कतारों में दो फुट का, माघ में बोयी जानेवाली में एक फुट का और पौधों में एक फुट नौ इन्च का अन्तर अच्छा होगा। बोने के समय से दो-ढाई महीने में फल मिलने लग जाते और तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। बीज के लिए चने हुए फल ही रखना चाहिए। बरसात वाली फसल को एक सौ मन और माघ वाली से ५०-६० मन फल प्रति एकड़ मिल जाते हैं। 'सबोर सेलेक्शन' जल्दी आने वाली अच्छी जाति है जिसे माघ में बोना चाहिए।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इन्हें गोल काट कर सुखा करके भी रख सकते हैं। स्वाद नष्ट नहीं होता। भिण्डी भारी, चिकनी, कफकारक और बलवर्धक होती है।

२२. **मिर्च**—लगभग १५० मन गोबर का खाद देकर भूमि तैयार करके क्यारियां बनाकर उनमें रोप लगाये जाते हैं। बीज नर्सरी से गिरा कर रोप तैयार करने चाहिए। पौधों में डेढ़ फुट का अन्तर काफी होगा। जब फूल आने लगें तब पानी कुछ कम देकर फिर जब फल बैठ जायं तो अच्छा पानी देना चाहिए। रोपने के समय से चार-पांच महीने में मिर्चें तोड़ने योग्य हो जाती हैं। जब मिर्चें सूखें तब उन्हें दबा देना चाहिए ताकि जगह कम लगे। अगली फसल के लिए चुनी हुई मिर्च के बीज रखना चाहिए। उपज दस-बारह मन तक हो जाती है।

मिर्च दो प्रकार की होती है। एक बड़ी जो सब्ज़ी के काम आती है, दूसरी छोटी जो मसाले के काम आती है।

उपयोग और गुण—हरी मिर्च की सब्ज़ी बनाई जाती है। इनका

आचार भी वनता है। इनमें तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। मिर्च क्षुधा-वर्धक, उत्तेजक और कफनाशक होती है।

२३. **मोगरी**—सवा सौ मन के लगभग गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा मिला कर खेत तैयार करके इसके बीज कतारों में बोना चाहिए। कतारों में डेढ़ फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर काफी होगा। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से दो महीने में फलियां आना शुरू होकर दो-एक महीने तक फल मिलते रहते हैं। कोमल फलियों को सुखाकर भी रख सकते हैं।

उपयोग और गुण—मूली की फलियों के जैसा स्वाद होता है। इन्हें कच्ची भी खा सकते हैं और सब्जी भी बना सकते हैं। यह पाचक और दस्ता-वर होती हैं।

२४. **रैन्ता, ककड़ी**—खरबूजे की खेती की भांति नदी में खेत तैयार कर खेती की जाती है। इसके बीज माघ-फाल्गुन में तीन-तीन फुट की दूरी पर बोये जाते हैं। वैशाख-जेष्ठ में फूल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—हरी ककड़ियां कच्ची खाई जाती हैं और इनकी तरकारी भी बनाई जाती है। दूसरी फसल के लिए पकी हुई ककड़ी के वीज रखने चाहिए। ये शीतल और हलकी होती है।

२५. **स्क्वेस**—इसका फल नाशपाती के आकार का पपीते जितना बड़ा होता है। इसकी दो जातियां होती हैं। एक गर्मी में फलनेवाली दूसरी सर्दी में पहाड़ों पर ही होती है। खेती तोरी की खेती के समान करनी चाहिए।

५. दलहन की तरकारियां

(क) वे जिनकी फलियां तरकारी के काम में आती हैं।

(ख) वे जिनके बीज काम में आते हैं।

इनके लिए दुमट जमीन उत्तम होती है। खाद फासफेट का (हड्डी का चूरा या सूपर फासफेट) लगभग तीन मन अवश्य देना चाहिए। गोबर का खाद लगभग एक सौ मन मिल जाय तो अच्छा है।

(क) (१) ग्वार Guar or cluster beans (पृष्ठ १७७) (२) चवंली, बरबटी, बोरा (पृष्ठ १८०) (३) बीन–फ्रेंच French bean *Phaseolus vulgaris* (४) बीन-ब्राड Broad bean *Vicia Faba* (५) बीन-लाईमा Lima bean *Phaseolus lunatus* (६) बीन-स्कारलेट रनर Scarlet runner bean *Phaseolus coccineus* (७) सेम वालोर *Sem* (पृष्ठ १९०) (८) सेम उदा *Mucuna capitata* (९) सेम कमच *mucuna nivea* (१०) सेम चारकोनी Goa bean *Psophocarpus tetragonolobus* (११) सेम रहरिया Velvet bean *mucuna sp.* (ख) (१२) किराओ (पृष्ठ १७४) (१३) चना Gram (पृष्ठ १७८) (१४) तूर, अरहर Pigeom *Cajanus cajan* (पृष्ठ १८२) (१५) मटर Peas (पृष्ठ १८५) (१६) सायबीन Soybean (पृष्ठ १८९)

चूंकि उन तरकारियों का जिनके सामने पृष्ठ दिये गये हैं पहले वर्णन हो चुका है यहां पर शेष की खेती का ही वर्णन दिया जाता है।

(३) **बीन फ्रेंच**—इनकी दो जातियां होती हैं। एक के पौधे डेढ़ फुट के लगभग और दूसरी के पांच-छः फुट ऊंचे होते हैं। दूसरे के लिए सहारे का प्रबन्ध करना होता है। छोटे पौधे वाली जाति डेढ़-डेढ़ फुट के अन्तर पर पारियां बनाकर उन पर छः-छः इंच की दूरी पर भाद्रपद से आश्विन तक बोना चाहिए। ऊंचे पौधे वाली के लिए पारियों की दूरी दो-ढाई फुट कर देनी चाहिए। छोटे पौधे वाली जाति से ढाई-तीन महीने में और बड़ी वाली से चार-पांच महीने में फल मिलने लग जाते हैं।

(४) **बीन ब्रॉड**—यह भी दो जाति की होती है। एक की फलियां छः इंच लम्बी और दूसरे की तीन इंच। इन्हें आश्विन-कार्तिक में पानी देने की नालियां बनाकर उनके दोनों ओर नौ से बारह इंच की दूरी पर

बोना चाहिए। नालियां तीन-तीन फीट की दूरी पर हो सकती हैं। बोने के समय से चार-पांच महीने में फलियां मिलना प्रारम्भ हो जाती हैं।

(५) **बीन-लाईमा**—इनकी फलियों की नोक मुड़ी हुई होती है। खेती फ्रेंच बीन की खेती के समान।

(६) **बीन स्कारलेट रनर**—फ्रेंच बीन के बड़े पौधों की खेती के समान।

(८) **उदा** (९) **कमच**—इनकी फलियों पर रोएं होते हैं जो छूने से मखमल-से मालूम होते हैं। इनको हटाकर तरकारियां बनाते हैं। इन्हें वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में बोते हैं। बीज पंक्तियों में छः-छः इंच की दूरी पर बोना चाहिए। इनकी लताओं के लिए सहारे का प्रबन्ध उत्तम होता है। बोने के समय से पांच-छः महीने में फलियां तरकारी के लिए मिल जाती हैं।

(१०) **सेम चारकोनी**—यह भी एक प्रकार की सेम है जिसकी फलियां चपटी या गोल न होकर चौकोनी होती हैं। इसकी खेती सेम की खेती के समान करनी चाहिए। लताएं छप्पर पर चढ़ा देने से फलियां मिलती रहती हैं।

(११) **रहरिया सेम**—इनकी फलियों पर भी रोएं होते हैं। आश्विन-कार्तिक में अठारह इंच की दूरी वाली पंक्तियों में एक-एक फुट की दूरी पर बोना चाहिए। फाल्गुन से चैत्र तक इनसे तरकारी मिलती रहती है।

६—अन्य तरकारियां

अन्य तरकारियों में केला, पपीता आदि फलों की खेती का वर्णन आ सकता है; परन्तु चूंकि इनका वर्णन फलों की खेती के स्तम्भ में दिया गया है अतः यहां पर सिर्फ उन्हींका वर्णन है, जिन्हें किसी स्तम्भ में स्थान नहीं। मिल सका।

(१) **धरतीफूल, छत्रक, धरतीफोड़, मशरूम** (Mushroom *Agaricus Campestris*)—बरसात में खाद की ढेरी पर या भूमि में

सफद, भूरा या गुलावी रंग का पौधा निकल आता है उसे अंग्रेजी में मशरूम और हिन्दी में धरतीफूल या छत्रक कहते हैं। इसे पंजावी अधिक पसन्द करते हैं। इसकी खेती तलघर या अंधेरे घर में अच्छी होती है। जिस घर में लगाना हो उसमें मिट्टी और लीद से तह देकर उन्हें नौ-दस इंच की ऊंचाई तक बनाकर आखिरी तह मिट्टी की देनी चाहिए। इस घर में तरी काफी रहनी चाहिए। इस प्रकार तैयार की हुई ढेरी पर मशरूम के 'स्पान'[१] के टुकड़े बिखेर कर मिट्टी में मिला देने चाहिए। सात-आठ सप्ताह में छत्रक निकल आते हैं और दो महीने तक तरकारी के योग्य मिलते रहते हैं। ऐसे घर में ७०-७५ शतांश तक तरी बनी रहे इसलिए पानी छींटते रहना चाहिए। मशरूम की तरकारी दस्तावर और कफनाशक होती है।

नोट—स्मरण रहे कुछ मशरूम जहरीले होते हैं। जो मशरूम पकाने पर पीला हो जाय वह जहरीला होता है। तोड़ने पर जो नीला रंग दे उन्हें कभी नहीं खाना चाहिए।

(२) **सहजन** Drumsticks *Moringa oleifera*—इसके खेत नहीं लगाये जाते। एक-दो पेड़ बगीचों में लगा देने से कई वर्षों तक फल मिलते रहते हैं। इसकी एक जाति बारहमासी होती है और दूसरी माघ-फाल्गुन में फूल और चैत्र-वैशाख में फल देती है। इसके लगाने की सरल रीति यह होगी कि दो फुट गहरा गढ़ा खोद कर उसकी मिट्टी में आठ-दस सेर गोबर, पत्ते का खाद और एक-दो सेर हडडी का चूर्ण मिला कर भर देना चाहिए। फिर बरसात में किसी अच्छे पेड़ की डाली काट कर लगा देनी चाहिए। डाली लगाने के तीसरे साल से ही कुछ फल मिलने लग जाते हैं, जिनकी तरकारी बन सकती है।

इसके पत्ते, फूल और फल तीनों की तरकारी बनती है। फल गर्म और रूखे होते हैं।

---

१. स्पान (spaun) लीद, गोबर और मिट्टी में छत्रक मिला कर सुखा करके कई दिनों तक रख सकते हैं। जहां लगाना हो ऐसा स्पान लगाना चाहिए।

(३) सिघाड़ा Water-nut *Trapa bispinosa*

यह तालाब या पोखरों में जहां पानी भरा रहता है पैदा किया जाता है। बरसात के आरम्भ में इसके फल पांव से दबाकर मिट्टी में गाढ़ दिये जाते हैं जिनसे शाखाएं निकलती हैं और पत्ते पानी पर तैरते हुए नज़र आते हैं। आश्विन में फूल और कार्तिक में फल आना प्रारम्भ हो जाते हैं। मार्गशीर्ष तक सब फल चुन लिये जाते हैं। फल छोटी-छोटी नौकाओं में जाकर तोड़ते हैं या किसी लकड़ी के छोटे टुकड़े पर उलटे घड़े बांध कर उससे नौका का काम लेते हैं। फल तोड़ने वाला दोनों पैर लटका कर इस लकड़ी पर चढ़ जाता है और एक हंडिया साथ ले जाकर उसमें फल तोड़-तोड़ कर रखता जाता है।

७—मसाले

बिना मसाले के तरकारियां स्वादिष्ट नहीं होतीं इसलिए यहां पर कुछ मसालों की खेती का वर्णन भी दिया जाता है।

१. हल्दी Turmeric *Curcuma domestica* (*longa*) २. अदरक Ginger *Zinjiber officinalis*. ३. धनिया Coriander *Coriadrum sativum* ४. पोदीना Mint *Mentha arvensis*. ५. सफेद जीरा Cumin *Cuminum cyminum* ६. स्याह जीरा Carraway *Carum carvi*. ७. कलौंजी, मगरैला Black cumin *Nigella sativa*. ८. अजवायन Ajwan *Trachys Permumammi* (*Carum copticum*). ९. सौंफ Aniseed *Pimpinella anisum*. १०. सौंफ बड़ी Fennel *Foeniculum vulgare*. ११. सोआ Dill *Peucedanun graveolens*. १२. छोटी इलायची Cordamoms *Elettaria cordamomum* १३. बड़ी इलायची *Amomum subulatum*. १४. सेलेरियाक Celariac *Apium graveolens*. १५. सेवारी Savory *Saturie hortensis*. १६. काली मिर्च Pepper *Piper*

nigrum. १७. लौंग Clove *Syzygium* (*Eugenia*) *aromaticum*. १८. दालचीनी Cinamomun *Cinamomum Zeylanicum*. १९. तेजपात Tejpat *Tumola obtusifolia*.

१. हल्दी—बलुआ-दुमट जमीन में लगभग दो सौ मन खाद देकर अच्छी जुताई के पश्चात डेढ़-दो फुट की दूरी पर पारियां बना कर उनपर वर्षारम्भ के समय एक-एक फुट के अन्तर पर हल्दी की गांठें लगानी चाहिए। इसे क्यारियों में भी बो सकते हैं। निंदाई के समय पौधों पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। सिंचाई की जहाँ आवश्यकता हो करना होगी। माघ-फाल्गुन तक हल्दी तैयार हो जाती है। जब पत्ते सूख जायं तो हल्दी खोद लेनी चाहिए। उपज बीस-पच्चीस मन सूखी हल्दी की हो जाती है।

बीज के लिए जो गांठें रक्खी जाती हैं उन्हें ठंडे हवादार मकान में गाढ़कर रखना चाहिए।

हल्दी को सुखाना—खोदी हुई हल्दी को पानी के साथ उबाल कर पकाते हैं। बाद में सुखाकर बोरे के टुकड़ों से घिसकर ऊपर का छिलका निकाल देते हैं। छिलका मशीन से भी छुड़ाया जा सकता है।

उपयोग और गुण—तरकारियों और दाल में रंग लाने के लिए किया जाता है। गर्म जल के साथ सेवन करने से पेट का दर्द शीघ्र मिट जाता है। हड्डी को जोड़ने, घाव भरने और शरीर के रंग को साफ करने के गुण भी इसमें हैं।

२. अदरक—हल्दी की भांति खाद देकर भूमि तैयार करने के बाद क्यारियां बना लेनी चाहिए जिनमें वर्षारम्भ के समय अदरक के छोटे-छोटे टुकड़े एक फुट दूरी वाली कतारों में लगाये जाते हैं। कतारों में पौधों का अन्तर आठ-नौ इंच का रहे इस हिसाब से टुकड़े लगाने चाहिए। लगाने के पश्चात पत्तों से ढंक देना चाहिए। भारी मिट्टी में क्यारियों में न लगाकर पारियों पर लगाना

चाहिए । इसकी फसल भी माघ-फाल्गुन तक तैयार हो जाती है। दूसरी फसल के लिए हल्दी की गांठों की भांति अदरक भी ठंडे हवादार मकान में गाड़ कर रख सकते हैं।

सोंठ बनाना—चुनी हुई गांठें साफ धोकर पानी में डाली जाती हैं और जब छिलका ठीक से गल जाता है तो मिट्टी के बर्तन के टुकड़ों से घिस कर निकाल दिया जाता है और हवा में सुखाते हैं। इसी भांति फिर से एक बार और पानी डाल कर कुछ छिलके और निकाल कर सुखाते हैं।

उपयोग और गुण—अदरक से चटनियां और तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। इसका नीबू के रस के साथ आचार भी बनता है। सर्दी, बुखार, खांसी इत्यादि रोग में इसका सेवन अच्छा होता है।

३. धनिया—सौ-सवा सौ मन खाद प्रति एकड़ दी हुई भूमि में इसे चटनी के लिए कभी भी बो सकते ह; परंतु जहां बीज लेना हो वहां आश्विन-कार्तिक में क्यारियों में छींट कर बोना चाहिए। जहां विना सिंचाई के उपजा सकते हैं वहां कतारों में खेतों में बो देना चाहिए। बीज वाले पौधों को जहां छींट कर बोया जाय वहां छंटनी करके उनमें लगभग नौ इंच का अन्तर कर देना चाहिए। चटनी के लिए तो पौधे एक महीने में तैयार हो जाते हैं; परन्तु पके हुए बीज के लिए चार-पांच महीने लगते हैं। प्रति एकड़ चार-पांच मन बीज हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—छोटे पौधे चटनी बनाने के काम आते हैं। इनसे तरकारियां भी स्वादिष्ट की जाती हैं। सूखे धनिये का उपयोग मसाले के लिए होता है। हरा धनिया पित्तनाशक, सूखे का चूर्ण मिश्री के साथ खाया जाय तो बल बढ़ाता है और मस्तिष्क को तरी पहुंचाता है।

४. पोदीना—इसे जब चाहे लगा सकते हैं परन्तु कार्तिक में लगाना अच्छा होता है। इसकी शाखाओं के टुकड़े जिनके साथ कुछ जड़ें हों क्यारियों में छः-छः इंच की दूरी पर लगा देना चाहिए। एक बार लगा देने से कई वर्ष तक लगे रहते हैं परन्तु कार्तिक में स्थानान्तर करना उत्तम होता है। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मी के दिनों में इनकी

बाढ़ अच्छी होती है और इनमे चटनी बनाते हैं। पोदीना ठंडा और साफ पेशाब लानेवाला होता है। पाचन-शक्ति तीव्र करता है। हैजे के दिनों में इसका सेवन विशेष करना चाहिए।

५. **सफेद जीरा**—दुमट और बलुआ-दुमट जिसमें खाद इससे पहले वाली फसल को दिया हो उसमें एक-एक फुट की दूरी पर पंक्तियों में जीरा आश्विन-कार्तिक में बोकर जहां आवश्यकता हो सिचाई करनी चाहिए। एक एकड़ के लिए छः-सात सेर जीरा बोना होगा। इसकी फसल फाल्गुन-चैत्र में तैयार होती है। एक एकड़ मे चार-पांच मन जीरा मिल जाता है।

उपयोग और गुण—बीज से तरकारियां और चटनियां सुगंधित की जाती हैं। जीरा पाचक, कफनाशक, ज्वरनाशक और गर्म होता है। भून कर दही के साथ खाने से पेचिश में लाभ पहुंचाता है।

६. **स्याह जीरा**—खेती सफेद जीरे की भांति की जाती है। इसके बीज गरम मसाले में डाले जाते हैं। यह पाचक, गरम और बादी हरने वाला होता है।

७. **कलौंजी, मंगरैला**—जीरे की भांति खेत तैयार करके आठ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से इसके बीज क्यारियों में आश्विन-कार्तिक में बोने चाहिए। पंक्तियां डेढ़ फुट के अन्तर पर रखनी चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार देते रहने से इसकी फसल चैत्र-वैशाख में तैयार होती है। तरकारी और नमकीन पदार्थों को स्वादिष्ट करने तथा आचार इत्यादि में इसे डालते हैं। ऊनी कपड़ों में इसके बीज रक्खे जायं तो उन्हें कीट से हानि नहीं होती।

८. **अजवान**—मटियार-दुमट या दुमट जमीन में कार्तिक में पांच-छः सेर प्रति एकड़ के हिसाब से इसके बीज छींट कर या कतारों में बोने चाहिए। पंक्तियां एक फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। पौधे छः-छः इंच की दूरी पर रखना उत्तम होगा। फाल्गुन तक फसल तैयार हो जाती है और प्रति एकड़ तीन-चार मन बीज प्राप्त हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—नमकीन पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं। इनके सत (Thymol) का उपयोग औषधि के लिए होता है। पेट का दर्द इससे

बड़ा जल्दी छूटता है। अजवान पाचक, दस्तावर और वातनाशक है।

९. **सौंफ**—बलुआ को छोड़कर किसी भूमि में जिसमें लगभग डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ खाद दिया हो आश्विन-कार्तिक में चार-पांच सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से कतारों में बोना चाहिए। कतारों का अन्तर डेढ़ फुट का उत्तम होगा। कतारों में भी पौधों को डेढ़-डेढ़ फुट के अन्तर पर कर देना चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। चैत्र-वैशाख तक फसल तैयार हो जाती है।

उपयोग और गुग—इसका सत औषधि के काम आता है। इससे गर्मी के दिनों में शरबत भी बनाते हैं। पेचिश में इसके उपयोग से विशेष लाभ होता है।

१०. **बड़ी सौंफ**—सौंफ की खेती के समान ही है। चूंकि पौधे उससे बड़े होते हैं अतः पौधों का अन्तर विशेष रखना चाहिए।

११. **सोआ**—दुमट जमीन में कार्तिक में दस सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से पंक्तियों में बोना चाहिए। पंक्तियां एक-एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। पंक्तियों में पौधों का अन्तर नौ इंच का उत्तम होगा। चैत्र-वैशाख तक बीज वाली फसल तैयार हो जाती है। उपज आठ-दस मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण—पत्तियां शोरबे और तरकारियों में डाली जाती हैं। बीज से तेल निकाला जाता है जो औषधि के काम आता है। पेट के दर्द में बीज का उपयोग लाभप्रद होता है।

१२. **छोटी इलायची**—इसकी खेती मलाबार और मैसूर में होती है। पौधे हल्दी के पौधे-जैसे होते हैं। तीन हजार से पांच हजार फुट की ऊंचाई के पहाड़ों पर जंगलों में कुछ जमीन साफ करके लगाते हैं। मैसूर में पान की बाड़ी में भी लगा देते हैं। इसे बीज से पैदा कर सकते हैं परन्तु बहुधा पांच-छः फुट की दूरी पर इसकी गांठे दो-तीन एकसाथ लगाते हैं। इलायची के पौधे तीसरे साल से फलना प्रारम्भ होते हैं परन्तु अच्छी फसल छठे साल से होती है। प्रति एकड़ लगभग डेढ मन इलायची मिल जाती है। जब फल

पक जाते हैं तब काट लिये जाते हैं।

उपयोग और गुण—मिष्टान्न सुगन्वित करने, मुख-शुद्धि और औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इससे कफ और पित्त के विकारों का दमन होता है, पाचन-शक्ति तीव्र होती है।

१३. बड़ी इलायची—इसकी जन्मभूमि नेपाल है। उत्तर प्रदेश की तराई के भागों में भी यह पाई जाती है। इसके फल भूरे रंग के तिकोनिये होते हैं। फल गर्मी में तोड़े जाते हैं। सस्ते मिलने के कारण इलायची की जगह इनका उपयोग भी होता है। गरम मसाले में यही इलायची डाली जाती है।

१४. सेलेरिएक—बीज पहले नर्सरी में गिरा कर जब पौधे दो-तीन इंच ऊंचे हो जायं तब एक-एक फुट के अन्तर पर खेतों में लगा देते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्तों से तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं और डंडी की सलाद बनाते हैं।

१५. सेवारी—आश्विन-कार्तिक में इसके बीज बोये जाते हैं। पौधों में दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। पत्ते सुखाकर भी रक्खे जा सकते हैं। इसके सुगन्धित पत्तों से खाद्य पदार्थ और सलाद सुगन्वित किये जाते हैं।

१६. काली मिर्च—पान के पत्ते के आकार के समान पत्ते वाली इसकी लता बहुवार्षिक होती है। फल पचीस-तीस की संख्या में पतली लता पर लगे रहते हैं। पकने पर लाल और सूखने पर काले हो जाते हैं। इसका छिलका निकाल कर सफेद भी करते हैं। भारतवर्ष में मलाबार और कोचीन में इसकी खेती होती है बरसात में लताओं के टुकड़े लगाकर बेल को पट्टियों पर अथवा आम, काजू या कटहल के पेड़ों पर चढ़ा दी जाती है, जहां यह भी फलती रहती है और पेड़ भी फलते रहते हैं। लगाने के बाद तीसरे साल से कुछ फल मिलते हैं। अच्छी फसल छठे साल से पचीस-तीस साल तक आती रहती है। ज्योंही फल पकते हैं उन्हें तोड़

कर सुखा लेते हैं, जिनसे उनपर झुर्रियां पड़ जाती हैं। प्रतिवर्ष चैत्र से ज्येष्ठ तक फल तोड़े जाते हैं।

उपयोग और गुण—तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। पापड़, अचार आदि में इसे डालते हैं। यह तीक्ष्ण, पाचक, क्षुधावर्धक और कृमिनाशक होती है।

१७. **लौंग**—इसका पेड़ तीस-चालीस फुट ऊंचा होता है। खेती दक्षिण भारत में होती है। इसके लिए बलुआ-ढालू जमीन उत्तम होती है इसके बीज पांच-छः सप्ताह में अंकुर फेंकते हैं। जब पौधे एक-दो फुट ऊंचे हो जाते हैं तो उन्हें पन्द्रह-बीस फुट की दूरी पर लगा देते हैं। सात-आठ साल की आयु से फल देना आरम्भ करके पचास-साठ साल की आयु पर्यन्त फल देते रहते हैं। एक पेड़ से प्रतिवर्ष चार-पांच सेर लौंग प्राप्त किये जाते हैं। माघ-फाल्गुन में फूलों की बिना खिली कलियां डण्ठल सहित तोड़ ली जाती हैं। वे जब सूख जाती है तो लौंग बन जाती हैं।

उपयोग और गुण—लौंग का उपयोग मसाले और औषधि के लिए किया जाता है। ये पाचक और अग्निवर्धक होते हैं। सिरदर्द, दांत के दर्द तथा गठिया वादी में इसके तेल से लाभ पहुंचता है।

१८. **दालचीनी**—यह भी मलाबार में होती है। इसे बीज और कलम दोनों से पैदा करते हैं। इसके पेड़ तीस-चालीस फुट से लेकर पचास-साठ फुट ऊंचे होते हैं। इसे लगाने के लिए दस-दस फुट की दूरी पर पतले-पतले गुच्छे लगाये जाते हैं जिनमें से दो-दो साल की आयु वाले पेड़ काटते रहते हैं। इन काटे हुए पेड़ों पर डेढ-दो फुट की दूरी पर छाल की गहराई तक कटाव कर देते हैं और लम्बे चीरे देकर छाल छुड़ा ली जाती है।

उपयोग और गुण—तरकारियों को स्वादिष्ट करने तथा औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इससे तेल भी निकाला जाता है। एक मन छिलकों से करीब तीन छटांक तेल निकलता है। दालचीनी तीक्ष्ण और गर्म होती है। सिरदर्द में इसके तेल से लाभ पहुंचता है।

१९. **तेजपात**—इसके पेड़ आसाम और पूर्वीय हिमालय के अधिक

वर्षा वाले स्थानों में होते हैं। इनकी छाल भी कुछ अंश तक दालचीनी का काम देती है; परन्तु अधिकतर पत्ते ही मसाले के काम आते हैं। बीज गिरने से पेड़ों के नीचे कुछ पेड़ निकल आते हैं उन्हें ही आठ-दस फुट की दूरी पर लगा देते हैं, वैसे नर्सरी में भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं। पौधे लगाने के समय से छः साल में पत्ते तोड़ने योग्य पेड़ होते हैं और कार्तिक से फाल्गुन तक पत्ते तोड़ते रहते हैं। एक पेड़ से लगभग पन्द्रह सेर पत्ते प्रतिवर्ष मिल जाते हैं। पेड़ की आयु पचास से एक सौ वर्ष तक मानी गई है।

उपयोग और गुण—तेजपात के पत्तों का चूर्ण गरम मसाले में डाला जाता है। यह पाचक, उत्तेजक, अधिक पेशाव लानेवाला तथा ज्वरनाशक होता है।

चौथा खण्ड

फलों की खेती

१—सफलता के आधार

भारत जैसे शाकाहारी देश को प्रकृति ने ऐसी जलवायु दे रक्खी है कि यहां पर थोड़े से ही परिश्रम से चाहें जिस प्रकार के फल उपजाये जा सकते हैं। स्वास्थ्य के विचार से फलों का सेवन एक विशेष स्थान रखता है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाय तो पहले पांच-सात साल के अच्छे परिश्रम से और बाद में थोड़ी देखभाल से बंधी-बंधाई वार्षिक आय हो सकती है। इनके लिए नगरों से कुछ दूर भूमि हो तो भी अच्छा है।

फलों की खेती में सफलता प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित विषयों पर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

भूमि के फलों का चुनाव—(१) फलों की खेती के लिए ऐसी भूमि चुननी चाहिए, जिसमें पानी न लगता हो—वरसात में बाढ़ का पानी न भर जाय—और भूमि के जल की सतह (Water table) कम-से-कम दस फुट से नीचे हो।

(२) फल ऐसे चुनने चाहिए, जिन्हें आपके स्थान की जलवायु अपना सके।

(३) सिंचाई का भी प्रबन्ध हो क्योंकि कुछ फलों को पानी देना ही पड़ता है और दूसरी बात यह है कि फलों के बगीचे में कुछ सागभाजी भी उपजाना लाभप्रद होती है।

(४) एक निर्धारित योजना बना लेनी चाहिए कि हमें अमुक-अमुक फलों की खेती करनी है, क्योंकि इसमें बार-बार इच्छानुसार हेरफेर सम्भव नहीं है।

(५) जहां तक सम्भव हो, मालिक के रहने का स्थान बगीचे की भूमि में ही हो, क्योंकि 'मालिक की आंख नौकर के हाथ से अधिक काम करती है।'

फलों के वृक्षों के वर्ग—फलों के वृक्षों को हम तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं।

(१) पचीस-तीस फुट से अधिक ऊंचाई वाले वृक्ष जिनके नीचे पशु घूम सकें या विश्राम कर सकें और वृक्षों को हानि न पहुंचा सकें, बल्कि उनके उठने-बैठने से उनके गोबर और मलमूत्र से वृक्षों को खाद मिल जाय। ऐसे फलों में आम, कटहल, जामुन, लीची आदि की गणना है।

(२) दूसरे वर्ग में हम उन फलदार पेड़ों को स्थान देंगे जिनकी ऊंचाई दस-पन्द्रह फुट से लेकर वीस-पचीस फुट तक हो जैसे आड़ू, सन्तरा, अमरूद, पपीता, कलमी आम इत्यादि। ऐसे पेड़ों में खाद प्रतिवर्ष देना होता है और सिचाई भी करनी होती है। किसी-किसी में काटछांट भी करनी पड़ती है।

(३) तीसरे वर्ग में उनकी गणना है, जिन्हें वृक्ष न कहकर पौधे कहा जाय, जैसे अनानास, स्ट्राबरी, तरबूज आदि। इनमें खाद और सिंचाई के साथ जुताई का भी काम लगा रहता है।

उपर्युक्त वर्ग-निर्माण के आधार पर अलग-अलग वर्ग के पौधों को अलग-अलग स्थान देना चाहिए, ताकि उनकी देखभाल सरलता से की जाय। उन्हें आवश्यकतानुसार धूप मिल सके।

२—वृक्ष लगाने की रीतियां

निम्नलिखित चित्रों से वृक्ष लगाने की रीति का ज्ञान होगा—

(१) वर्गाकार—

(२) त्रिभुजाकार—या षट्कोणाकार—

(३) पंचवृक्षी—यानी वर्गकार लेकिन प्रत्येक वर्ग के बीच में एक पेड़ लगाना जो दूसरे वर्ग का कम आयु वाला ही हो। जबतक मुख्य जाति के पेड़ पूर्ण बाढ़ को पहुंचते हैं, बीचवाले की आयु समाप्त हो जाती है।
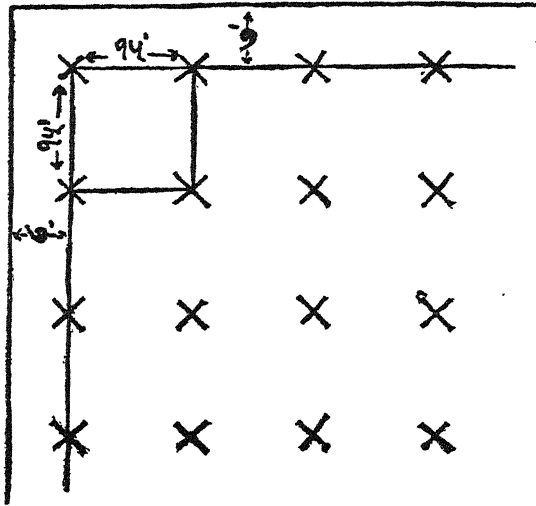
पेड़ लगाने की वर्गाकार रीति
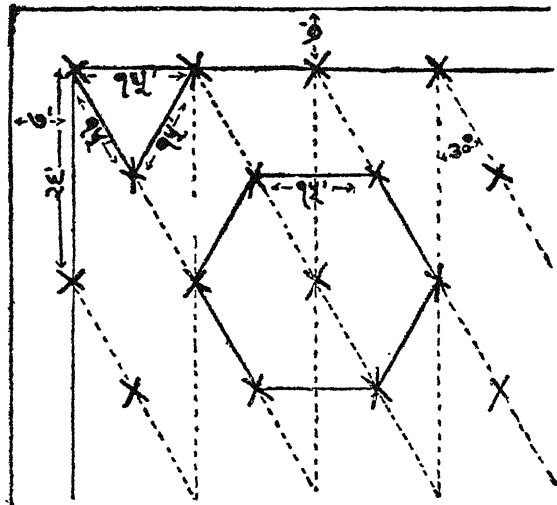
पेड़ लगाने की त्रिभुजाकार या षट्कोणाकार रीति

दस फुट के अन्तर पर या इससे कम दूरी पर पेड़ लगाना हो तो पहली रीति, दस से बीस फुट की दूरी के लिए दूसरी और बीस से अधिक दूरी पर लगाये जाते वाले वृक्षों के लिए तीसरी रीति उत्तम होगी।

३—घेरा

फलों में आकर्पण-शक्ति बहुत होती है। पेड़ों पर पके हुए फलों को देखकर अच्छे-अच्छे मनुप्यों का जी उन्हें तोड़ने के लिए ललचा जाता है। पशु भी काफी हानि पहुंचाते हैं। यदि दो-चार पेड़ों को खा जाय तो वर्षों की मेहनत पर पानी फिर जाता है। इसलिए फलों के बगीचे में चारों ओर घेरा अवश्य होना चाहिए। घेरे निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

(१) मिट्टी, ईंट या पत्थर की ऊंची दीवाल का।
(२) जालीदार तार का जिसके ऊपर का तार कांटेदार हो।
(३) जीवित पौधों का जैसे मेंहदी, रामबाण करौन्दा इत्यादि।
(४) सूखे कांटों का।

४—खाद

फलों के वृक्षों के लिए नाइट्रोजन के खाद के साथ-साथ फासफोरस और पोटेशियम का खाद भी लगता है। इसलिए गोबर के खाद के साथ एक शतांश अर्थात ढाई मन गोबर के खाद में एक सेर हड्डी का चूरा अवश्य मिलाना चाहिए। प्रारम्भ में जब पेड़ों को लगाने के लिए गढ़े खोदे जायं तो उनकी दूरी और आकारानुसार तथा वृक्षों की जाति-अनुसार उन गढ़ों की मिट्टी में दस सेर से लेकर एक मन तक उपर्युक्त मिश्रण भली-भांति मिलाकर उस मिट्टी से गढ़े फिर से भर देने चाहिए। भारत की भूमि में पोटेशियम की आवश्यकता विशेष नहीं है; परन्तु चूंकि इससे फलों का आकार और उनका रंग अच्छा बनता है इसलिए उपर्युक्त मिश्रण के साथ कुछ राख मिला देनी चाहिए।

जब पेड़ लग जाते हैं और बड़े हो जाते हैं तो उनमें खाद निम्नलिखित रीति से देना चाहिए—

जितनी दूर तक पेड़ की शाखाओं का फैलाव हो उससे दो-तीन फुट की अधिक दूरी तक जड़ों का फैलाव होता है, इसलिए धड़ के पास दो-तीन फुट का घेरा छोड़कर उपर्युक्त दूरी तक आठ-दस इंच गहरी मिट्टी खोदकर उसमें खाद मिला देना चाहिए। आम जैसे वृक्षों में जो हर दूसरे साल फलते हैं खाद उस साल देना चाहिए जिस साल पत्ते फूटते हैं और फल नहीं आते। खाद देने के पश्चात् पानी दे देना चाहिए।

५—वनस्पति-संवर्धन

कलमें लगाना—फलों के बगीचे वालों को कलमें लगाने की कला भी जाननी चाहिए, क्योंकि कलमों द्वारा जो पौधे तैयार किये जाते हैं, वे जल्दी फलते हैं और उनमें गुण-परिवर्तन भी नहीं होता। कलमें लगाने की कई रीतियां हैं और अलग-अलग जाति के पौधों के लिए अलग-अलग है। इसलिए उनका वर्णन यहां पर संक्षिप्त रूप में दिया जाता है। विशेष जानकारी के लिए लेखक की 'फलों की खेती और व्यवसाय' देखिए।
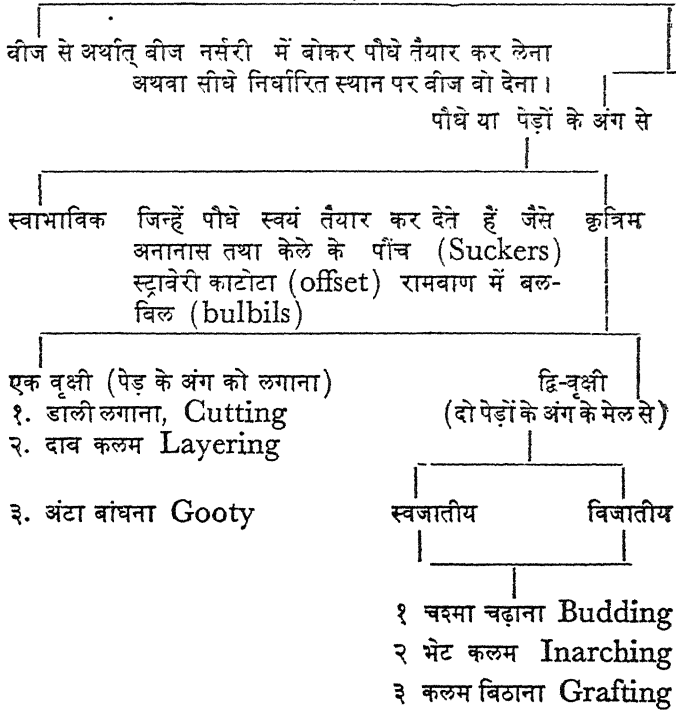
स्वाभाविक कलमों से पौधे लगाने के लिए पौंच, टोटा व बलबिल को मुख्य पौधों से अलग करके लगा देते हैं।

डाली लगाना—किसी अच्छे पेड़ की एक साल की आयु की डाली काट कर उसे भूमि में लगा देना। यह बहुधा वर्षा ऋतु में लगाई जाती है। कलम की लम्बाई नौ-दस इंच और प्रत्येक कलम में चार-पांच आंख होनी चाहिएं, जिनमें से दो मिट्टी के अन्दर और तीन बाहर रहें और वे भी ऊपर-नीचे की ओर नहीं बल्कि बाजू में रहे। नासपाती, अंजीर आदि की कलमें इसी रीति से लगाई जाती हैं।

दाब कलम—इसमें एक साल की आयु की टहनी को झुकाकर उसके बीच के भाग को थोड़ा छीलकर मिट्टी में या गमले में दबा देते हैं। फिर पानी देते रहने से कटे हुए भाग की जगह से एक-दो महीने में
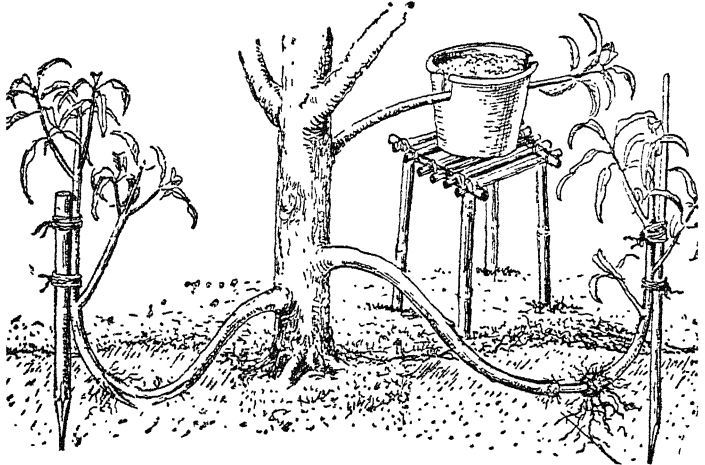
दाब कलम की रीति का चित्र

जड़ें फेंक कर लग जाती हैं। जब लग जाय तो मुख्य पेड़ के तरफ के भाग को काट कर और लगी हुई कलम को खोद कर जहां चाहें लगा सकते हैं। अंगूर की कलम इस रीति से लगाई जाती है।

अंटा बांधना—इसमें डाली पर से एक इंच लम्बाई तक की

छाल छीलकर उसपर गीली मिट्टी लगा कर चट्टी मे बांध देते हैं। बांधी हुई मिट्टी गीली बने रहे इसलिए उसपर एक हंडिया पानी की बांध देते हैं। हंडिया की पैंदी में एक छेद कर उसमें कपड़े का टुकड़ा डाल देते हैं जिसके द्वारा पानी थोड़ा-थोड़ा टपकता रहता है। लगभग दो ढाई महीने में छीले हुए भाग की जगह पर जड़ें निकल आती हैं। फिर उस भाग को मुख्य टहनी से पृथक कर दूसरी जगह लगा देते हैं। लीची की कलम ऐसे बांधी जाती है।

अंटा (Gooty) बांधने की रीति का चित्र

चश्मा चढ़ाना—इसमें किसी उत्तम पेड़ की टहनी की आंख निकाल कर चित्र में दिखलाई हुई रीति से एक-दो साल के नये पौधे के धड़ पर चीरा देकर छाल को उठा कर उसमें बिठा देते हैं और फिर बांध देते हैं। दो-तीन सप्ताह में यह आंख चिपक कर नये पत्ते दे देती है और अपना पोषण नये पौधों से करने लग जाती है। जब ठीक से कुछ पत्ते
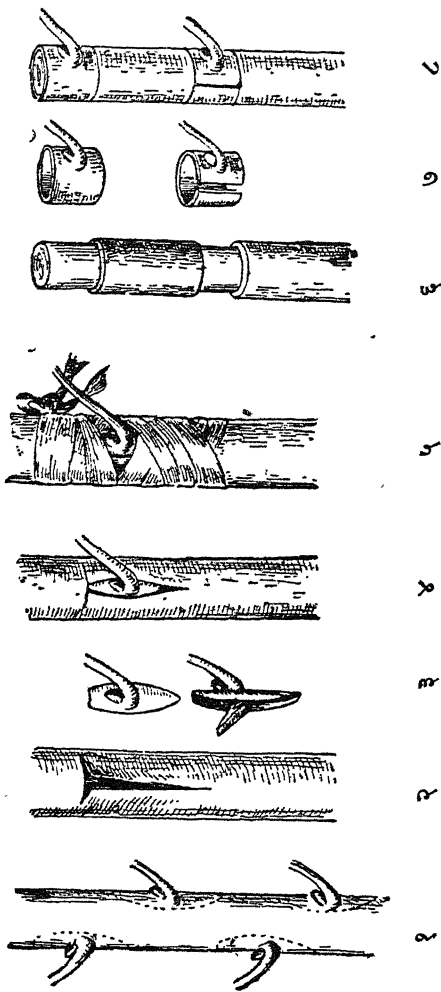
चश्मा लगाने की रीति का चित्र

१. चश्मा निकालने की डाली
२. बीजू पौधे का धड़
३. निकाला हुआ चश्मा
४. चश्मा लगाया हुआ पौधा
५. बांधा हुआ तैयार चश्मा
६. डाली जिसपर से ट्यूब्यूलर और रिंग चश्मे निकाले गये हैं
७. ऊपर ट्यूब्यूलर और नीचे रिंग चश्मा
८. बीजू पौधा जिसपर चश्में चढ़ाये गये है

देकर जम जाय तो मूल पौधे चश्मे के ऊपरी भाग से काट देते हैं और नये पौधे को जहां चाहें लगा सकते हैं। सन्तरे की कलमें इस रीति से लगाई जाती हैं।

भेंट कलम—मूल पेड़ की टहनी दो इंच लम्बी एक ओर छीली जाती है। दूसरी ओर साल-डेढ़ साल की आयु के बीजू पौधे के
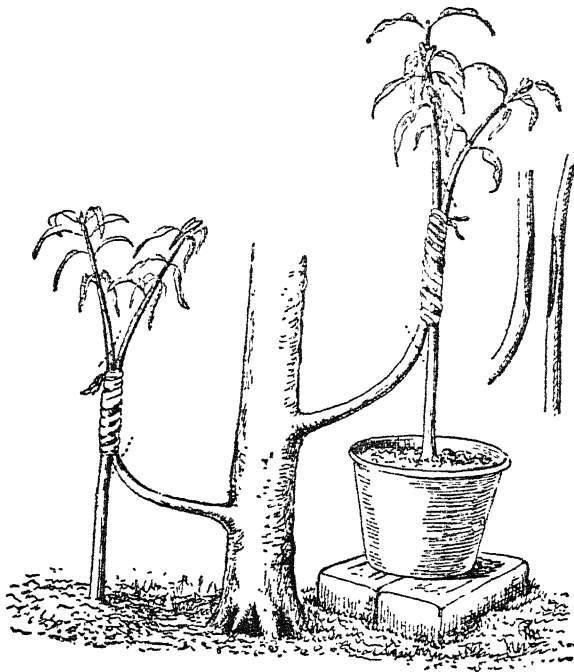
भेंट कलम द्वारा कलमी पौधा तैयार करने की रीति का चित्र

धड़ को भी उतना ही छीला जाता है। छीलते समय इतना ध्यान रहे कि सिर्फ छाल ही नहीं छिले, बल्कि कुछ काष्ट भी कट जाय। पेड़ की

टहनी और बीजू पौधे का धड़ एक ही व्यास का होना चाहिए। उन दोनों छीले हुए भागों को मिला कर बांध देने से दो-ढाई महीने में जुड़ जाते हैं। बाद में जोड़ की जगह के नीचे से मुख्य पेड़ की टहनी और बीज पौधे के बांध से ऊपर का धड़ काट देना चाहिए। ऐसा करने से बीजू पौधे पर पेड़ की टहनी लग जायगी फिर उसे जहां लगाना हो लगा सकते हैं।

कलम बिठाना—(Grafting) बीजू पौधे के धड़ पर चीरा देकर नीचे दी हुई रीति से अच्छे पेड़ की कलम काट कर बिठाना होता

१ २ ३ ४ ५ ६
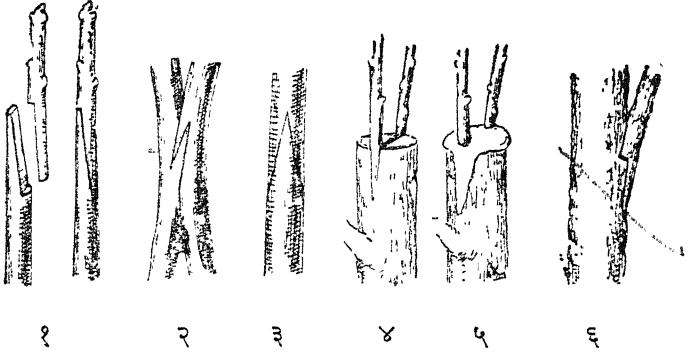
कलम बिठाने की रीतियों के चित्र

१. साधारण कलम **४. धड़ चीर कर बिठलाई हुई कलमें**
२. जीभी कलम **५. कलमों-मोम डाला गया है**
३. काठी कलम **६. बाजू से बिठलाई हुई कलम**

है। कभी-कभी पुराने पेड़ पर भी उनकी डालियों में चीरा लगा कर नई कलमें लगाते हैं (Top working)।

सहारा—पौधे लगाने के पश्चात हवा से टूटने या गिरने न पावें उसके लिए बांस या लकड़ी गाढ़कर सहारे का प्रबन्ध होना चाहिए।

६—निंदाई और सिंचाई

आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। फलों के पौधों को सींचने के लिए उनके धड़ से कुछ दूरी पर गोल थाला बनाकर उसमें पानी देना

चाहिए। ज्यों-ज्यों पेड़ बढ़ते जायं थाला भी बढ़ाते जाना चाहिए । ऐसा करते रहने से वे थाले कुछ दिनों में मिल कर पेड़ों की कतारों के बीच नालियां बना देंगे । जहां दीमक का विशेष भय हो वहां थाले गोल चक्कर के रूप में न बनाकर पेड़ों के आसपास गमलेनुमा बना देने चाहिए ताकि दीमक पानी की वजह से पेड़ की तरफ न जाकर बाहर जाय । ऐसे स्थानों के लिए नीम की खली का खाद भी उत्तम होगा । उससे दीमक कम लगेगी ।

७—काट-छांट

फलों के पेड़ों की शाखाओं में काटछांट भी करनी होती है। ऐसी काट-छांट जड़ें, टहनियां और फलफूल की भी होती है ।

जड़ों की काट-छांट—कुछ पेड़ों की जड़ों को कुछ दिनों के लिए खोलकर रखना पड़ता है, उस समय कुछ जड़ों की काटछांट की जाती है, बाद में खाद देकर उन्हें ढक देते हैं ।

टहनियों की काट-छांट—इस प्रकार की काटछांट पेड़ों को सुन्दर आकार देने के लिए की जाती है। शाखाएं घनी हो तो वे भी काट दी जाती है अथवा व्याधिग्रस्त शाखाएं भी काटनी पड़ती हैं। कुछ पेड़ों से फल अधिक आयं इसलिए भी काटछांट करनी पड़ती है ।

फूल और फलों की काटछांट—जिन पेड़ों पर फल-फूल बहुत आयं, उनमें से जितने चाहिए उतने रखकर शेष तोड़ दिये जाते हैं ताकि जो रहें वे सुन्दर आकार में पनपकर बड़े हों।

किन-किन पेड़ों की काटछांट करनी होती है यह आगे दिया गया है। यहां पर यह बतला देना ही उचित होगा कि जिन पेड़ों के पत्ते साल भर में एक बार झड़ जाते हैं या झड़वाना अत्यावश्यक होता है । उनमें प्रतिवर्ष नई बाढ़ के प्रारम्भ होने के पहले कांटछांट हो जानी चाहिए । जो पेड़ सदा हरे-भरे रहते हैं उनमें विशेष कांटछांट नहीं करनी पड़ती ।

८—फलों के शत्रु

फलों को हानि पहुंचानेवाले कीटों का वर्णन पृष्ठ ११६ से ११९ तक दिया गया है ।

९—फलों का व्यवसाय

अधिकतर ऐसा होता है कि जब फल छोटे-छोटे रहते हैं उसी समय व्यवसायी लोग बगीचों को या फल वाले पेड़ों को उस साल की फसल के लिए खरीद लेते हैं। ऐसी रीति में यह लाभ है कि फलों की रखवाली से लेकर उन्हें तोड़ने, पकाने, पार्सल या अन्य युक्तियों द्वारा बाहर भेजने के झंझट से बच जाते हैं। परन्तु जो लाभ उस फसल को खरीदने वाला उठाता है वह कम हो जाता है। कभी-कभी आंधी, ओले, वगैरा आ जाने से फल झड़ जाते हैं तो उस समय फसल जिनके हाथ में होती है उनको हानि उठानी पड़ती है। जो व्यक्ति फलों की बिक्री भी अपने ही हाथों करना चाहें उन्हें फल तोड़ने, पकाने और चालान की रीतियों का भी ज्ञान होना चाहिए।

फलों का व्यवसाय उनकी भौतिक स्थिति और स्थानान्तर करने की सुविधा पर निर्भर है। सूखे फल जैसे किसमिस, खुबानी कितनी ही दूर आसानी से भेजे जा सकते हैं। कठोर फल जैसे हरे नरियल, कैथ, बेल इत्यादि भी सरलता से भेज सकते हैं; परन्तु सस्ते बिकने के कारण दूर नहीं भेजे जा सकते। टिकाऊ फल जैसे सेव, नासपाती, सन्तरा, आम इत्यादि अधिक मूल्य वाले होने से अच्छे पेकिंग से ही दूर भेजे जा सकते हैं। कुछ फल ऐसे हैं जो अपनी कोमलता के कारण एक-दो रोज़ ही रह सकते हैं जैसे जामुन, करौन्दे इत्यादि तो बाहर नहीं भेजे जा सकते।

स्थानान्तर की सुविधा पर फलों का व्यवसाय निर्भर है। यदि रेल निकट हो अथवा पक्की सड़क और मोटर-ट्रक का मार्ग हो तो फल आसानी से दूर भेजे जा सकते हैं वरना निकटवर्ती बाजार में ही कम मूल्य पर बेचने होंगे।

१०—विभिन्न फलों की खेती

फलों को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं जैसे ताज़े फल, सूखे फल और चटनी-मुरब्बा आदि के फल—

ताजे फल

१. अंगूर Grapes *Vitis vinifera*
२. अमरूद Guava *Psidium gujava*
३. अनानास Pine apple *Ananassa sativa*
४. अनार Pomegranate *Punica granatum*
५. आड़ू Peach *Prunus persica*
६. आम Mango *Megifera indica*
७. ककड़ी, खीरा Cucumber *Cucumis sativus*
८. कटहल Jack fruit *Artocarpus heterophyllus*
९. कमरख Kamarakh *Averrhoa carambola*
१०. केला Plantain *Musa sapientum*
११. खजूर अरबी Dates *Phoenix dactylon*
१२. ,, देशी ,, *Phoenix sylvestris*
१३. खरबूजा Melon *Cucumis melo*
१४. खिरनी Khirni *Mimosops manilkara*
१५. गुलाब जामुन *Glab jamun Eugennia jambose*
१६. चकोतरा Pomelo *Citrus maxima*
१७. जामुन Jamun *Eugenia syzygiun*
१८. तरबूज Water melon *Citrullus vulgaris*
१९. तुरंज Citron *Citrus medica*
२०. तैन्दू Persimmon *Diospyros kaki*
२१. दिलपसन्द Dilpasnd *Citrullus var fistulosus*
२२. नासपाती Pear *Pyrus Communis*
२३. नीबू कागजी Lime *Citrus aurantifolia*
२४. नीबू जमेरी Lemon *citrus lemon*
२५. पपीता Papaya *Carica papaya*
२६. फालसा Phalsa *Grewia asiatica*

२७. बीही Quince *Cydonia oblanga*
२८. बेर Ber *zizyphus var.*
२९. बेरी गूज Goose berry *Physalis peruviana*
३०. „ ब्लेक Black *Rubus fructicosus*
३१. „ स्ट्रा Straw, *Fragaria vesca*
३२. बेल *Aegle marmelos*
३३. रामफल Bullocks heart *Annona reticulata*
३४. रैन्ता Cucumber *Cmmunis var utilitimus*
३५. लीची Lichi *Litchi chinensis*
३६. लोकाट Loquat *Eriobotrya Japonica*
३७. शफतालू Nectarine *Amygdalus persica*
३८. शहतूत सफेद Mulberry *Morus alba*
काली „ „ *rubra*
३९. शरीफा Custardapple *Annona squamosa*
४०. सन्तरा मीठा Sweet orange *Citrus retiulata*
माल्टा मौसमी Malta *Citrus sinensis*
सन्तरा खट्टा Sour orange *Citrus aurantium*
४१. सपाटू, चीकू Sapatoo *Achras zapota*
४२. सिंघाड़ा Waternut *Trapa bispinosa*
४३. सेव Apple *Malus sylvestris*

सूखे फल

४४. अखरोट Walnut *Juglans regia*
४५. अन्जीर Figs *Ficus carica*
४६. काजू Cashunut *Anacardium occidentale*
४७. खुबानी Apricot *Prunus armeniaca*
४८. चिलगोजा Chilgoza *Pinus geradiana*

४९. चिरौंजी Chironji *Buchanania latifolia*

५०. नारियल Cocoanut *Cocos nucifera*

५१. पिश्ता Pistachionut *Pistacia vera*

५२. बादाम Almond *Amygdalus communis*

चटनी, मुरब्बा आदि के फल

५३. अलूचा Plun *Prunus domestica*

५४. आलू बुखारा Plum ,, *bokharensis*

५५. आंवला Anwala *Phyllanthus emblica*

५६. इमली Tamarind *Tumarindus indica*

५७. करौंदा Karaunda *Carissa carandas*

५८. कैथ Wood apple *Limonia acidissma*

५९. वाम्पी Ampeech *Cookia punelata*

उपर्युक्त सूची में से ७, १३, १८, ३४ और ४२ की खेती का वर्णन तीसरे खण्ड में दिया गया है। शेष में से जिनके पेड़ या पौधे अधिक संख्या में लगाये जाते हैं, उनके विषय में आवश्यकीय जानकारी-जैसे पौधे लगाने का समय, पौधा कैसे तैयार किया जाता है, पौधों की दूरी, फल-प्राप्ति का समय, व्यवसायिक दृष्टि से पौधों में फलने की अवधि का वर्णन सारणी के रूप में परिशिष्ट में दिया है। इनके अतिरिक्त जो विषय रह जाता है उसका वर्णन यहां दिया जाता है। उसी भांति जिन फलों के थोड़े से पेड़ लगाये जाते हैं उनका वर्णन सारणी में न देकर अलग ही कर दिया गया है।

१. ताज़े फल

अंगूर

मोतिया, काले या बैंगनी रंग के बीज या बिना बीज के होते हैं। खाद के लिए चार भाग सरसों या एरंडी की खली के साथ एक भाग हड्डी का चूरा मिला कर सेर-सवा सेर प्रति पौधा देना अच्छा होगा। अंगूर की लता के लिए सहारे की आवश्यकता होती है। जिसके लिए कहीं-कहीं पंगारा (Erythrina indica) नाम के पेड़ अंगूर की लता के पास लगा देते हैं।

इन पेड़ों की जड़ें छिछली होती हैं इसलिए अंगूर की जड़ों को हानि नहीं पहुंचती। जब फल पकने लगे तब पानी कम देना चाहिए, ताकि खाद अच्छा बना रहे। जिन टहनियों से अंगूर मिल जायं, उन्हें सर्दी के दिनों में पांच-छः इंच छोड़ कर आगे का भाग काट देना चाहिए। ऐसा करने से नई टहनियां निकलेंगी और उनमें फल अच्छे आयंगे। अंगूर का फल बड़ा कोमल होता है और उसे बड़ी सावधानी से पेकिंग करके भेजा जाता है। दूर भेजना हो तो बक्सों में भेजना अच्छा होगा।

उपयोग और गुण—अंगूर बलवर्धक, दस्तावर, खून को साफ करने वाले तथा खांसी और बुखार को मिटानेवाले होते हैं।

अमरूद

इलाहाबाद का सफेदा और करेला जाति के अमरूद उत्तम होते हैं। प्रत्येक पौधे को इस रीति बढ़ने दिया जाय कि प्रत्येक धड़ पर से तीन-चार शाखाएं और प्रत्येक शाख पर तीन-चार उपशाखाएं रहें। अमरूद की दो बहार होती हैं। एक श्रावण से आश्विन तक और दूसरी मार्गशीर्ष से फाल्गुन तक। दूसरी में फल अधिक मिलते हैं। बहुधा लोग सर्दी की बहार को अधिक पसन्द करते हैं। इसके लिए गर्मी की फसल रोकने की उत्तम रीति यह होगी कि सर्दी के अन्त में तीन-चार बार सिंचाई करके पानी बन्द कर दें। ऐसा करने से फूल आकर झड़ जायंगे और गर्मी की फसल रुक जायगी। यदि गर्मी की फसल लेना हो तो माघ महीने में खाद देकर सिंचाई करते रहना चाहिए। जहां सर्दी की फसल लेना हो वहां वैशाख-जेष्ठ में जड़ कुछ खोलकर एक शतांश हड्डी-मिश्रित खाद दे देना चाहिए।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनसे जैली या बरफी भी बनाई जा सकती है। कच्चे अमरूद कब्जकारी, लेकिन पके हुए दस्तावर होते हैं।

अनानास

बरसात के प्रारम्भ में प्रति पौधा एक मुट्ठी सरसों, नीम या एरंडी की खली दी जाय तो बाड़ अच्छी होती है। मछली का खाद भी

इसके लिए अच्छा माना गया है। कृत्रिम खाद में सवा मन एमोनियम सल्फेट या सोडियम् नाइट्रेट, ढाई मन के लगभग सूपर फासफेट और उतना ही पोटेशियम सलफेट प्रति एकड़ देना उत्तम होगा। पके हुए फल की पहचान यह है कि जब नीचे का आधा फल कुछ रंग बदलने लगे तब तोड़ना चाहिए।

उपयोग और गुण—अनानास का गूदा खाया जाता है, जो स्वादिष्ट, बलदायक और पाचक होता है।

अनार

अनार काबुली उत्तम होते हैं; परन्तु इधर नहीं फलते। गुजरात में अहमदाबाद के पास धोलका के अनार अपनी मिठास तथा बीज की कोमलता के लिए विख्यात हैं। प्रतिवर्ष आठ-दस सेर हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद देना अच्छा होगा।

उपयोग और गुण—अनार के बीज का रस पिया जाता है। इससे शराब भी बनाते हैं। अनार ठंडा, त्रिदोष-नाशक, हृदय-रोग, दाह, ज्वर और कण्ठ-रोग में लाभप्रद है। छिलका पेचिश की दवा में काम आता है।

आड़ू

सर्दी में जब पत्ते झड़ने लगें तब जड़ें खोलकर दस-पन्द्रह दिन बाद खाद देकर मिट्टी भर देनी चाहिए। फलों के पकने के समय पानी कम देना चाहिए।

उपयोग और गुण—इसके फल कृमिनाशक, पेट-दर्द को मिटानेवाले तथा दस्तावर होते हैं। बीज का तेल जलाने के काम आता है।

आम

आम में फल आने के पहले गोबर-पत्ता-राख-हड्डी मिश्रित खाद उस साल देना चाहिए जिस साल पत्तों की बाड़ हो और फल न आनेवाला साल हो। छोटे पौधों के लिए दीमक से बचाने के लिए नीम की खली का खाद काम में लाना चाहिए। सर्दी के दिनों में पाले से बचाने के लिए पांच-छः साल की आयु तक के पौधों पर साया करना चाहिए। आम की कई जातियां हैं। बिहार और उत्तरप्रदेश में आम जेष्ठ से भाद्रपद तक मिलते

रहते हैं। कलमी आमों में मिठुआ, बम्बई, कृष्ण-भोग, माल्दा, (बनारसी लंगड़ा), सिपिया, शुकुल, सेन्दूरिया और भदैया क्रमानुसार पकते रहते हैं। बम्बई की तरफ कलमी आम में हाफुज (Alphonso) और पायरी जेष्ठ-आषाढ़ (मई-जून) में और दक्षिण भारत में आम वैशाख से आषाढ़-श्रावण तक मिलते रहते हैं। अरकाट और सलीम के आम विख्यात हैं। उधर के विख्यात आमों में दिलपसन्द, काला पहाड़, जहांगीर, शकरपारा, राजमान्य, नलकल्याण, स्वर्णरेखा इत्यादि हैं। जब आम पर से दो-एक आम पके हुए गिरें तब समझना चाहिए कि अब आम उतारने योग्य हो गये। आम का चालान टोकरियों में होता है। यदि कीमती आम हो और दूर भेजना हो तो देवदारु के बक्स में ही भेजना चाहिए।

उपयोग और गुण—आम चूस कर या काट कर खाये जाते हैं। इनका रस निकाल कर भी खाते हैं और उसे सुखाकर पापड़ भी बनाते हैं। गुठली के बीच का गूदा कुछ लोग भून कर खाते हैं। इससे स्टार्च भी बन सकता है। पका आम दस्तावर और बलवर्धक होता है। दूध के साथ इसका सेवन किया जाय तो शरीर पुष्ट होता है। कच्चा आम खट्टा और पित्तकारक होता है। आग में चुने हुए कच्चे आम का शरबत लू लगने पर बड़े काम का होता है।

कटहल

ये बंगाल, बिहार, गुजरात और दक्षिण भारत म बहुत मिलते हैं। इनके फल आठ-दस सेर से लेकर बीस-पचीस सेर वजन के होते हैं और शाखा तथा धड़ पर ही नहीं बल्कि कभी-कभी जमीन के अन्दर भी हो जाते हैं, जो भूमि के फटने से जाने जाते हैं। एक पेड़ से पच्चीस-तीस से लेकर सौ-डेढ़ सौ अच्छे फल मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनती है। पक्के फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनके पत्तों से पत्तलें बनाते हैं। भोजन के बाद कटहल

खाया जाय तो वह बलदायक होता है। पके हुए कटहल का उपयोग पीने के तम्बाकू बनाने म भी किया जाता है।

कमरख

इनके फल तीन-चार इंच लम्बे पांच धारी वाले होते हैं। पौष-माघ में बीज बोकर पौधे तैयार किये जाते हैं। पेड़ पन्द्रह-बीस फुट ऊंचे होते हैं। पौधों को पन्द्रह फुट की दूरी पर गढ़े करके लगाने चाहिए। छः-सात साल की आयु के होने पर ये आश्विन-कार्तिक (सित.-अक्तू.) में फलते हैं।

उपयोग और गुण—मुरब्बा और अचार इनका बड़ा अच्छा बनता है। शरबत भी इससे बनाया जाता है। कमरख कफ और बादीनाशक होते हैं। इनके रस से कपड़ों का दाग बड़ा जल्दी छूटता है।

केला

सब्जी वाले केले तिकोनिये होते हैं। खाने वाले केलों के कई नाम हैं—जैसे मालभोग, चीनी, चम्पा, सोनकेला, राजेली, रसखान इत्यादि। केले को प्रतिवर्ष बरसात के प्रारम्भ में आधा सेर सूपर फासफेट या हड्डी का चूर्ण, पाव भर एमोनियम सलफेट और एकाद टोकरी राख डालना उत्तम होगा। जिस डण्ठल पर केले लगते हैं उसे 'धड़' कहते हैं। केले तोड़ने के समय धड़ के कटे हुए भाग पर मोम लगा दिया जाय तो केलों के छिलके जल्दी काले नहीं पड़ते और वे 'धड़' से जल्दी गिरते नहीं।

उपयोग और गुण—खम्भ मंडप सजाने, पत्ते पत्तल, दोने तथा बीड़ी बांधने के काम आते हैं। कच्चे केले की तरकारी बनती है। पके केले वैसे ही खाये जाते हैं या उनसे पकवान बनाते हैं। कच्चे केले के आटे की रोटी से वायु-विकार दूर होता है। पका केला पाचक, शीतल और पुष्टिकारक होता है।

खजूर

अरबी और देसी ऐसे दो प्रकार के होते हैं। देसी में गूदा बहुत कम होता है। ऐसे खजूर जंगलों में या खेतों के आसपास पाये जाते हैं। अरबी खजूर के पौधे सात-आठ साल की आयु के होने पर फलते हैं और

सत्तर-अस्सी वर्ष तक की आयु तक फलते रहते हैं ।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं । इन्हें सुखाकर काम में लाते हैं । बीज पशुओं को खिलाये जाते हैं । खजूर शीतल, हृदय को हितकारी और पुष्टिकारक होता है । खांसी, दमा और क्षयरोग आदि में इनका सेवन अच्छा माना गया है ।

खिरनी

मैदानों के जंगलों में इसके पेड़ पाये जाते हैं । फल नीम के फल-जैसे पीले और चिकने होते हैं, जिनमें से सीताफल (शरीफे) के बीज-जैसे काले-काले बीज निकलते हैं ।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं । इन्हें सुखाकर भी खाते हैं । खिरनी बलदायक, शीतल और भारी होती है ।

गुलाबजामुन

इसके फल खटमीठे छोटी सेव के आकार के गुलाबी रंग के होते हैं ।

उपयोग और गुण—फल सेव जैसे वैसे ही खाये जाते हैं । इनका मुरब्बा भी बनता है । इसके सेवन से खांसी और कफ दूर होते हैं ।

चकोतरा

नीबू की जाति का सबसे बड़ा फल मोटे छिलके वाला चकोतरा होता ह ।

उपयोग और गुण—इसका रस चूस कर खाते हैं और उससे शरबत भी बनाते हैं । इससे पाचन-शक्ति अच्छी होती है ।

जामुन

बड़े जामुन के एक-दो पेड़ बगीचों में लगा लें तो अच्छा है ।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं । इनका सिरका भी बनाते हैं । फल दाहनाशक और पेट के दर्द को दूर करनेवाले होते हैं । सिरका पित्तनाशक ।

तुरंज, बिजौरा

यह भी नीबू की जाति का फल है जो सुनहरा और मोटे छिलके वाला होता है, जिससे मार्मलेड बनाते हैं। पौधा दाब-कलम से तैयार किया जाता है।

उपयोग और गुण—फल का रस बहुत खट्टा होता है। हृदय के लिए हितकारी माना गया है।

तेन्दू

फल छोटी सेव के आकार का मीठा होता है। इसे भेट-कलम से तैयार करते हैं। प्रतिवर्ष पौष-माघ (जनवरी) में जड़ें खोद कर खाद देना चाहिए। पेड़ बीस फुट की दूरी पर लगाना चाहिए। पांच साल की आयु के होने पर पेड़ फलते हैं। प्रतिवर्ष कार्तिक-अगहन (अक्तू०-नव०) से फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनता है।

दिलपसन्द

यह तरबूज की जाति का फल है। गर्मी में तीन-तीन फुट की दूरी पर इसके बीज बोये जाते हैं। कच्चे फल हरे और पके हरे नारंगी रंग के हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाते हैं। पके फल वैसे ही खाये जाते हैं।

नासपाती

इसमें पौष-माघ (दिस०-जन०) में जड़ें खोल कर खाद देना चाहिए। गोबर का खाद न हो तो तीन-चार सेर खली और दो सेर हड्डी का चूरा प्रति पेड़ काफी होगा।

उपयोग और गुण—पके फल वैसे ही खाये जाते हैं। कुछ जातियां ऐसी

भी हैं, जिनसे तरकारियां बनती हैं। नासपाती हल्की वीर्यवर्धक और पित्त तथा कफनाशक होती है।

नीबू

कागजी और जमेरी—कागजी का छिलका पतला, रस सुगंधित और कुछ कम खट्टा होता है। कागजी नीबू गोल और लम्बे ऐसे दो प्रकार के होते हैं। नीबू में खाद प्रतिवर्ष फल मिल जाने के पश्चात् सर्दी के अन्त में देना चाहिए।

उपयोग और गुण—दोनों ही प्रकार के नीबू से भोज्य पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं। इनका आचार भी डाला जाता है और शरबत भी बनाते हैं। शरबत बनाने के लिए रस को चौबीस घंटे तक ऐसे बर्तन में रखें, जिसमें बिगड़ने न पाये। जब गाद नीचे जम जाय तो ऊपर का रस नितार लो। फिर उस रस वाले बर्तन को उबलते हुए पानी पर रख कर इतना सुखाओ कि दो हिस्सा सूख जाय और एक हिस्सा रह जाय। इतना सूख जाने पर आधा भाग चीनी मिला दो और बोतलों में भर दो। ऐसी भरी हुई बोतलों को १७०° फे. पर आधा घंटा गरम करके ठंडा होने के लिए रख दो और फिर कार्क लगा दो। कार्क को भी पानी में गरम कर लेना चाहिए। बोतलों को १७०° फे. पर गरम करने की सरल युक्ति यह होती है कि एक बर्तन में पानी भर कर बोतलें उसमें टेढ़ी करके रख दो और पानी को ऐसा गरम करो कि तापमान १७०° पर रहे। यदि तापमापक यंत्र फे. डिग्रीवाला न हो तो सेंटीग्रेडवाले से काम चल जायगा। उसका मान ७७ डिग्री तक रहे।

पपीता, पपैया, एरंड ककड़ी

पपीते रांची, लंका तथा वाशिंगटन नाम के अच्छे होते हैं। इनकी खेती में चौथे साल की फसल के बाद भूमि बदल देनी चाहिए। प्रत्येक पेड़ से बीस-पच्चीस अच्छे फल प्रतिवर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बना ली जाती है या उनसे हलवा भी बना सकते हैं। पके फल वैसे ही खाये जाते हैं। फल पाचक,

दस्तावर और बलवर्धक होते हैं। बढ़ी हुई तिल्ली या पेट की व्याधियों के लिए इनका सेवन अच्छा होता है।

फालसा

इसका फल जंगली करौन्दे-जैसा खटमीठा होता हैं। पौधे बरसात में बीज बोकर तैयार किये जाते हैं और दो-तीन साल तक नर्सरी में रखकर खेतों में आठ-आठ फुट की दूरी पर लगा देने चाहिए। पांच-छः साल की आयु के होने पर पेड़ फलते हैं। प्रति वर्ष जाड़े में फूलकर चैत-वैशाख में फल देते हैं। उपज दस-बारह सेर प्रति पेड़ हो जाती है।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। गर्मी में शरबत बना कर भी पीते हैं। इसके सेवन से रक्त-विकार, ज्वर और बादी का नाश होता है। इनके पत्तों से पत्तलें भी बनती हैं।

बीही

यह पहाड़ों पर होती है और डाली लगाकर तैयार की जाती है। खेती सेव की खेती के समान होती है। इसका फल रसदार और मीठा होता है। सेव और नाशपाती की कलमें चढ़ाने के लिए इसके पौधे विशेष काम में आते हैं, क्योंकि इसपर कलम बांधने से पौधे छोटे हो जाते हैं। बहुत ऊंचे नहीं होते।

बेर

बेर पैबन्दी (कलमी), जंगली और झरिया ऐसे तीन प्रकार के होते हैं। कलमी बेर गोल या अण्डाकृतिवाले, मोटे और मीठे गूदेवाले होते हैं। दूसरे बेर खटमीठे होते हैं। झरिया बेर के पेड़ न होकर छोटी झाड़ियां होती हैं। इनमें गूदा बहुत कम रहता है। ऐसे बेर राजपूताना की तरफ अधिक होते हैं। कलमी बेर नागपुर, बनारस और फर्रुखाबाद के विख्यात हैं। बेर पहाड़ों पर नहीं होते।

उपयोग और गुण—बेर वैसे ही खाये जाते हैं। जंगली बेर का अचार भी बनाया जाता है। बेर शीतल, दस्तावर और पुष्टिकारक होते हैं। कच्चे बेर पित्तकारक और कफवर्धक होते हैं।

बेरी-रसकोय, गूजबरी

इसके बीज बरसात में नर्सरी में लगाये जाते हैं और बरसात के अन्त में खेत में दो-दो फुट की दूरी पर कतारों में लगाते हैं। पंक्तियों में तीन फुट का अन्तर रखना चाहिए। इसके लिए लगभग तीन सौ मन गोबर का खाद और तीन मन हड्डी का चूरा प्रति एकड़ डालना चाहिए। जब पौधे एक फुट ऊंचे हो जायं तो बीच का कोंपल तोड़ देना चाहिए। फल पुटपत्र में छिपे रहते हैं। जब वे पीले पड़ने लगें तब तोड़ना चाहिए।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं; परन्तु बहुधा मुरब्बे के काम आते हैं। ये रेचक होते हैं।

बेरी-ब्लेक

इसे टोंटे (Offsets) से तैयार करते हैं। इसके लिए गढ़ों में तीन फुट का और पंक्तियों में चार फुट का अन्तर उत्तम होता है। टोंटे बरसात में लगाये जाते हैं, चूंकि फल नये कोंपलों पर ही आते हैं। जिनसे फल प्राप्त हो जाय उन्हें काट देना चाहिए। पौधे लगाने के समय से दो साल में फल देते हैं और चैत-वैशाख में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं; परन्तु बहुधा मुरब्बे के काम में आते हैं।

बेरी-स्ट्रा

इसके फल लाल रंग के छोटी लीची-जैसे होते हैं। गर्मी में एक शतांश हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद चार सौ मन के लगभग डालना चाहिए। इसकी लता (Runners) के टुकड़े क्यारियों में या पारियों पर दो-दो फुट की दूरी पर लगाने चाहिए। फल बैठने लगे उस समय पानी कुछ कम देना चाहिए। फल आने लगे उस समय सवा मन पोटेशियम सलफेट या आठ-दस मन राख का खाद देना चाहिए। मैदानों में चैत्र-वैशाख में और पहाड़ों पर माघ-फाल्गुन में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। मुरब्बा भी इससे बनता है। मलाई और चीनी के साथ खाने से बड़ा स्वादिष्ट पदार्थ

बनता है। इसके फल रेचक और स्वास्थ्यदायी होते हैं।

बेल

एक-दो पेड़ लगा देने चाहिए। पौवे न मिलने पर बीज से तैयार कर सकते हैं।

उपयोग और गुण—पत्ते भगवान शंकर को चढ़ाये जाते हैं। फलों का शरबत गर्मी के दिनों में पिया जाता है। बेल की गिरी पेचिश के लिए उत्तम होती है।

रामफल, नौना

इसे कहीं-कहीं सीताफल भी कहते हैं; लेकिन जिस सीताफल का बयान आगे किया है उसके फल की कलियां ऊपर से खुली हुई मालूम पड़ती है। रामफल का ऊपरी भाग साफ होता है। सीताफल हरे रंग का और यह बैगंनी रंग का होता है। सीताफल सर्दी में और रामफल गर्मी में आते हैं।

लीची

फल ले लेने के पश्चात आषाढ़ में गोबर के खाद के साथ तीन सेर नीम या एरंडी की खली, दो सेर हड्डी का चूर्ण तथा तीन-चार सेर राख प्रतिवर्ष देना चाहिए। फल कुछ टहनियों सहित तोड़े जाते हैं सो काट-छांट हो जाती है। फल प्रतिवर्ष नई टहनियों पर ही आते हैं।

उपयोग और गुण—लीची का गूदा खाया जाता है, जो रसदार और मीठा होता है। चीन में लीचियां सुखाई जाती हैं। सूखने पर वे काली हो जाती हैं।

लोकाट

इसमें सर्दी के प्रारंभ में जड़ें खोलकर हड्डी-मिश्रित खाद देना चाहिए। पकने पर इसके फल पीले रंग के बेर जितने बड़े हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। ये खटमीठे होते हैं।

शफतालू

यह भी आड़ू जैसा फल है, जो पहाड़ों पर होता है । आड़ू का फल रोएंदार मखमल-सा मालूम होता है । इसका साफ होता है। खेती आड़ू की खेती के समान ।

शहतूत या तूत

शहतूत सफेद और काले ऐसे दो प्रकार के होते हैं । पहले के फल बहुधा इंच-डेढ़ इंच लम्बे या गोल होते हैं । दूसरे के विशेषतः लम्बे ही होते हैं ।

उपयोग और गुण—इसके पत्ते रेशम के कीट को खिलाये जाते हैं। फल वैसे ही चूसकर खाये जाते हैं। इनका शरबत भी बनता है। ये शीतल, भारी और पित्तनाशक होते हैं ।

सीताफल, शरीफा

जहां वर्षा बहुत होती है वहां और जहां सर्दी बहुत अधिक पड़ती है वहां यह नहीं होता ।

उपयोग और गुण— इसके फल मीठे होते हैं और वैसे ही खाये जाते हैं। ये शीतल, बलवर्धक, हृदय को हितकारी और कफकारक माने गये हैं ।

सन्तरा

सन्तरे दो प्रकार के होते हैं—एक मीठे ढीले छिलकेवाले पीले या नारंगी रंग के, दूसरे पतले छिलकेवाले पीले रंग के। ये दोनों आसानी से छीले जा सकते हैं और अन्दर की फांकें अलग-अलग की जा सकती हैं ।

सन्तरा—मौसमी-माल्टा

माल्टा और मौसमी करीब-करीब एक ही प्रकार के होते हैं। स्वाद तथा आकार में थोड़ा अन्तर होता है। पंजाब की तरफ माल्टा और गुजरात की तरफ मौसमी अधिक होती है। सन्तरे का पेड़ बहुधा सीधा लेकिन माल्टे का फैला हुआ होता है। फल हरे-पीले रंग के चिपके हुए छिलकेवाले होते हैं। इनका रस सन्तरे के रस से निराले स्वाद का होता है । स्वास्थ्य के

विचार से सन्तरों की अपेक्षा इनका विशेष उपयोग है। फल लेने के बाद ही गर्मी के अन्त में जड़ें खोलकर एक-दो सप्ताह बाद उनमें खाद देना चाहिए। यदि खली मिल सके तो प्रत्येक पौधे के पीछे दो सेर देना चाहिए। खली जितनी राख और उतना ही हड्डी का चूरा देना चाहिए। कृत्रिम खादों में पाव भर एमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट और आधा सेर सूपर फासफेट और उतना ही पोटेशियम सलफेट देना चाहिए। सन्तरे की दो बहार आती हैं, एक सर्दी और एक गर्मी में। गर्मी की बहार के सन्तरे मीठे होते हैं और विशेष लाभप्रद भी। गर्मी की फसल प्राप्त करने के लिए वैशाख-जेष्ठ में सिंचाई बन्द करके बरसात के पहले खाद दे देना चाहिए। ऐसा करने से जेष्ठ-आषाढ़ में फूल आवेंगे, जिनसे नौ-दस महीने बाद गर्मी में फल मिलेंगे। यदि सर्दी की फसल लेनी हो तो पौष में खाद और सिंचाई देनी चाहिए। इससे माघ-फाल्गुन (जन०-फर०) में फल बैठेंगे और सर्दी में फल मिलेंगे। प्रत्येक पौधों से ५०० से १००० फल का अनुमान किया जा सकता है। इनके पेड़ों में 'गमोसिस' नाम की व्याधि आ जाय, जिसमें धड़-पैर से गोंद-सा पदार्थ निकलता रहता है तो उस स्थान को छील कर वहांपर 'बोर्डो पेस्ट' लगा देना चाहिए।

बोर्डो पेस्ट—१ सेर तूतिये को पांच सेर पानी में घोल लो। फिर एक सेर चूने को आढाई सेर पानी में बुझाओ, दोनों के मिला लेने से बोर्डो पेस्ट बन जाता है।

फलों का चालान टोकरी और पुआल में अच्छा होता है।

उपयोग और गुण— सन्तरे चूसकर खाये जाते हैं। माल्टा का रस निकालकर पिया जाता है। सन्तरा मीठा, ठंडा, पाचक और साफ पेशाब लाने वाला होता है। सफर में सन्तरे का सेवन बड़ा लाभप्रद होता है। सर्दी-वाली व्याधि में इसका सेवन अच्छा माना गया है। व्याधि से उठे हुए के लिए माल्टा या मौसमी विशेष गुणकारी है।

सपाटू, चीकू

बंबई की तरफ इसे चीकू कहते हैं। इसके पेड़ भूरे रंग के फलवाले

पच्चीस-तीस फुट ऊंचे होते हैं। फल इंच-डेढ़ इंच व्यास के गोल और उनका गूदा भूरे रंग का मीठा होता है। प्रत्येक फल में काले-काले तीन-चार बीज होते हैं।

उपयोग और गुण—फल छील कर खाये जाते हैं। ये पित्तनाशक तथा बुखार को मिटानेवाले होते हैं। सपाटू की लकड़ी बड़ी मजबूत होती है।

सेव

इनकी खेती काश्मीर, पंजाब तथा उत्तर प्रदेश के पहाड़ी व ठंड स्थानों में अच्छी होती है। फल आने लगे उस समय से प्रतिवर्ष पौष-माघ (दिस०-जन०) में एक शतांश हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद देना चाहिए। फलों का स्वाद अच्छा बना रहे इसलिए फल पकने लगे तब पानी कम देना चाहिए। सूखी तथा घनी टहनियों की काटछांट पौष-माघ में होनी चाहिए। फल यदि आवश्यकता से अधिक दिखें तो कुछ तोड़ देने चाहिए। फलों का चालान चिकने कागज में लपेट कर बक्सों में अच्छा होता है।

उपयोग और गुण—सेव वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनता है। सेव पाचक, बल-वर्धक और खून को बढ़ानेवाले होते हैं।

२. सूखे फल

अखरोट

काश्मीर और उत्तर प्रदेश में हिमालय पहाड़ पर कहीं-कहीं इनकी खेती होती है। मैदानों में नहीं हो सकती। इनके बीज को अंकुर फेंकने में पांच-छः महीने लगते हैं। इन्हें बालू में लगाकर ठंडे स्थानों में रख देते हैं। अंकुर निकलने के बाद एक-एक फुट की दूरी पर नर्सरी में लगा कर हर दूसरे साल स्थानान्तरित करके जब पौधे चार-पांच इंच के होते हैं, तब इन्हें निर्धारित स्थान पर बरसात या सर्दी में लगाते हैं। इनके फल

श्रावण से आश्विन तक मिलते रहते हैं। ज्यों-ज्यों फल गिरते जायं सुखा कर रख लिये जाते हैं।

उपयोग और गुण— इनके फल का गूदा खाया जाता है। हरे फलों का आचार भी बनता है। इनसे तेल भी निकाला जाता है, जिसे वहां के निवासी खाने और जलाने के काम में लाते हैं। इसके गूदे में लगभग ५० शतांश तेल रहता है। अखरोट वीर्यवर्धक, भारी, गरम और कफकारक होते हैं।

अंजीर

हिन्दुस्तान में इसकी खेती पंजाब, उत्तर प्रदेश, दक्षिण बंबई और मैसूर में होती है। फल आने लगे उस समय से प्रतिवर्ष माघ में या बरसात में कुछ खाद दे देना ठीक होता है। पौधे की काटछांट ऐसी करनी चाहिए कि धड़ डेढ़-दो फुट ऊंचा हो और शाखाएं भी उतनी ही लम्बी हों। उपशाखाएं भी ऐसी हों कि पेड़ छः-सात फुट से ऊंचा न हो। इसमें फलों के पकने के समय यदि बरसात आ जाय तो फल बिगड़ जाते हैं। ज्यों-ज्यों फल पकते जाते हैं, सुखा कर दबा दिये जाते हैं और रस्सी में पिरो दिये जाते हैं। सुखे हुए फल तीन शतांश नमक के उबले हुए पानी में छोड़े जाते हैं। ऐसा करने से उनकी ठहरने की शक्ति बढ़ जाती है।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं। सूखे फलों का सेवन दूध के साथ सर्दी में किया जाता है। अंजीर पाचक, दस्तावर और खांसी को मिटानेवाले होते हैं। बच्चों के लिए बड़े उपयोगी होते हैं।

काजू

इसकी खेती ट्रावनकोर-कोचीन में काफी होती है। बंबई और मद्रास प्रांत के कुछ हिस्सों में भी होती है। उड़ीसा के जंगलों में भी कहीं-कहीं इसके पेड़ पाये जाते हैं। मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में भी एक सज्जन को इसकी खेती में सफलता मिली है। इससे ज्ञात होता है कि समुद्र के किनारेवाले स्थानों में ही नहीं, भारत के भीतरी भागों में भी इसकी खेती हो सकती है। पौधे बरसात में लगाते हैं। ये पौधे बीज से तैयार

किये जाते हैं। पौधे चार साल की आयु के होने पर फल देते हैं। इसके फल गर्मी के दिनों में मिलते हैं।

उपयोग और गुण—भूंजी हुई छिलका-रहित काजू बाजार में मिलती है। उसे वैसे ही खाते हैं। इसके ठंडल का आचार बनाया जाता है। इसके पेड़ का गोंद जिल्दसाज़ी के लिए उपयोगी होता है। लकड़ी पर इसका तेल लगा दिया जाय तो उसे दीमक हानि नहीं पहुंचा सकते।

खुबानी, जरदालू

इसकी खेती उत्तर प्रदेश के ठंडे स्थान में होती है। पौधा आलू के पौधे जैसा होता है। ज्यों-ज्यों फल पकते जाते हैं, तोड़कर मकानों की छतों पर सुखाये जाते हैं। ताजे फलों का चालान बक्सों में और सूखे का बोरों में किया जाता है।

उपयोग और गुण— फलों के ऊपर का सूखा हुआ भाग, जो मीठा होता है, वही खाया जाता है। अन्दर बादाम-जैसी छोटी गुठली होती है उसके अन्दर से बादाम की गिरियों-जैसी स्वादवाली गिरी निकलती है, वह भी खाई जाती है। खुबानी के फल बलवर्धक और दस्तावर होते हैं।

चिलगोजा

इसकी खेती अफगानिस्तान की तरफ होती है। भारत में नहीं होती।

उपयोग और गुण—फल कच्चे या भूंज कर खाते हैं। ये बलदायक होते हैं।

चिरौंजी

इसके पेड़ जंगलों में मलाबार और विंध्याचल पर्वत पर पाये जाते हैं। ये चालीस-पचास फुट ऊंचे होते हैं।

इसकी गिरी (गूदा) बहुत मुलायम और स्वादिष्ट होती है। इसे भील या अन्य लोग बाजार में लाकर बेच जाते हैं और बदले में नमक, कपड़ा वगैरह ले जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसका गूदा वैसे ही खाया जाता है। इसे मिठाइयों में भी डालते हैं। यह दस्तावर होती है। शरीर पर बहुत जलन हो तो इसके गूदे का लेप करना चाहिए। दूध-चीनी के साथ खाने से बल बढ़ता है।

नारियल

बंगाल, मद्रास, मलाबार और कोनकन में इसकी खेती व्यापक रूप से होती है। इसके लिए पूर्ण बाढ़ पाये हुए अंकुर फेंके हुए नारियल बोये जाते हैं। यदि कोंपल फेंके हुए न मिलें तो दूध-भरे हुए नारियल पानी में रख देते हैं तो वे अंकुर फेंक देते हैं। ऐसे नारियलों को एकाध साल नर्सरी में बढ़ाकर फिर निर्धारित स्थान पर लगाते हैं। जब फल आने लगे उस समय से प्रतिवर्ष बरसात में आठ-दस सेर नारियल की खली अथवा चार-पांच सेर एरंडी की खली के साथ एक सेर हड्डी का चूर्ण या मछली का खाद और राख दी जा सके तो फल अच्छे आते हैं।

उपयोग और गुण—हरे नारियल का रस पिया जाता है, जो मीठा और ठंडा होता है। दूध के सूखने से अन्दर गिरी बन जाती है। गिरी का तेल खाने, जलाने, मालिश करने तथा साबुन बनाने के काम आता है। फलों के ऊपर के रेशे से रस्सियां बनती हैं। नारियल की गिरी बलवर्धक, पित्तनाशक और दाह को मिटानेवाली होती है।

पिस्ता

इसके पेड़ फारस के जंगलों में होते हैं। फल सफेद छिलकेवाले होते हैं, जिन्हें फोड़ने से अन्दर से हरे और बैंगनी रंग की गिरी निकलती है।

उपयोग और गुण—पिस्ते की गिरी खाई जाती है। पिस्ते बलवर्धक, कफनाशक और रक्त को शुद्ध करनेवाले होते हैं।

बादाम

इसकी खेती अफगानिस्तान की तरफ होती है। भारत में पहाड़ों पर लगा देने से कहीं-कहीं थोड़े-बहुत फल आ जाते हैं।

उपयोग और गुण—बादाम गरम, वीर्यवर्धक, बलदायक तथा पित्त-नाशक होते हैं।

३. चटनी, मुरब्बा आदि के फल

अलूचा—आलूबुखारा

प्रतिवर्ष पत्ते झड़ने लगें तब इनकी जड़ें खोलकर खाद देना चाहिए।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं; परन्तु विशेष उपयोग चटनी और मुरब्बे के लिए होता है। इनके फल ठंडे, पाचक, दस्तावर और पित्तनाशक होते हैं।

आँवला

बड़े आंवले सुन्दरबन की तरफ बहुत होते हैं। छोटे आंवले सब जगह पाये जाते हैं। यह ऐसा फल है कि इसका गुण देखते हुए प्रत्येक बगीचे में एक-दो पेड़ अवश्य होने चाहिए।

उपयोग और गुण—इनसे मुरब्बा, अचार और चटनी बनाते हैं। आंवले का रस सन्तरा, नीबू या टमाटर के रस से दसगुना अधिक लाभदायक होता है। गर्मी के दिनों में इसके मुरब्बे का सेवन अवश्य करना चाहिए। आंवले बलवर्धक, पित्तनाशक, ठंडे, दस्तावर, अधिक पेशाब लाने वाले तथा वायु-जनित रोगों को शांत करनेवाले होते हैं।

इमली

इसके पेड़ चालीस-पचास फीट से लेकर सत्तर-अस्सी फुट ऊंचे होते हैं। इसके पौधे बीज से निकल आते हैं, सो जहां चाहे लगा सकते हैं। पेड़ लगाने के समय से दस-बारह साल में फल आने शुरू होते हैं और माघ-फाल्गुन (फर०-मार्च) में मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—इमली से तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। इससे खटमीठी चटनी और शरबत भी बनाते हैं। इमली का प्रयोग मद्रास में बारहों महीने होता रहता है। सो इसके बीज निकाल कर गूदे में थोड़ा नमक मिलाकर गोले बना कर रख लेते हैं। इमली रूखी, पाचक, कृमिनाशक, अग्निदीपक और दस्तावर होती है। लू लग जाने पर इसका शरबत पीना बड़ा अच्छा रहता है।

करौन्दा

करौन्दे छोटे-बड़े दो प्रकार के होते हैं। इच्छा होने से एक-दो पेड़ लगा देने चाहिए। जब पौधे तीन-चार साल की आयु के होते हैं तब फलना शुरू होते हैं।

उपयोग और गुण—पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं। कच्चे का अचार, लूंजी (मीठी तरकारी) बनायी जाती है। पके हुए फल हलके, मीठे और वातनाशक होते हैं।

कैथ, कबीट

इसका पौधा बीज से तैयार किया जाता है। जब पेड़ आठ-दस साल की आयु के होते हैं तब फल देते हैं। फल कठोर सफेद रंग के होते हैं। पेड़ों की ऊंचाई तीस-चालीस फुट तक हो जाती है। इनके फल आश्विन-कार्तिक में मिलते हैं। बगीचे में एक-दो पेड़ काफी होते हैं।

उपयोग और गुण—पके हुए फल की चटनी बनाई जाती है। पेचिश और दांतों की शिकायत में कैथ का कच्चा फल बेल के गुण जैसा काम देता है।

वाम्पी

इसका फल लीची के आकार का होता है। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। प्रत्येक फल में तीन-तीन बीज होते हैं। प्रतिवर्ष आषाढ़-श्रावण में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फलों का अचार बनाया जाता है। इनसे तरकारियां भी स्वादिष्ट की जाती हैं।

परिशिष्ट

: १ :

भू-संरक्षण

वर्तमान समय में भू-संरक्षण की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है क्योंकि यदि ऐसा नहीं किया गया तो कुछ काल बाद बहुत-सी खेती योग्य भूमि हमारे हाथ से निकल जायगी। इसी उद्देश्य से द्वितीय पंचवर्षीय योजना में करोड़ों रुपये इस कार्य में लगाये जानेवाले हैं।

मिट्टी का स्थानान्तर प्रकृति द्वारा जल तथा वायु (आंधी) द्वारा होता है। वर्षा जब होती है तो खेतों की ऊपरी मिट्टी बहकर चली जाती है और नीचे की कम उपजाऊ मिट्टी ऊपर निकल आती है। इसी भांति जब हवा जोरों की (आंधी) चलती है तो वह भी मिट्टी और महीन रेत उड़ाकर ले जाती है और दूसरी जगह जमा कर देती है। राजस्थान की तरफ से रेगिस्तान जो धीरे-धीरे आगे बढ़ता आ रहा है वह वायु द्वारा ही हो रहा है। अच्छे उपजाऊ खेतों में रेत आकर जम जाती है और उन्हें बिगाड़ देती है। कभी-कभी छोटी फसलें तक दब जाती हैं। ऐसी हानियों से बचने के लिए ही सरकारी योजनाएं बनाई जा रही हैं लेकिन जबतक कृषकों का पूर्ण सहयोग न हो सफलता पूर्ण रूप से नहीं मिल सकती। कृषकों को चाहिए कि वे अपने खेतों में होनेवाली हानियों की ओर ध्यान दें। सरकार के लिए बड़े भूखण्डों की रक्षा का कार्य छोड़ दें।

१. वर्षा द्वारा होनेवाली हानियां और उनको रोकने के उपाय—वर्षा द्वारा भूमि का कटाव दो प्रकार से होता है: एक में तो ऊपर से मिट्टी के तह-के-तह बह जाते हैं और दूसरे प्रकार में छोटी नालियां और बाद में धीरे-धीरे नाले बन जाते हैं। पहले को अंग्रेजी में 'शीट' कटाव और दूसरे को 'गली' कटाव कहते हैं। कहीं-कहीं नदियों के निकट तो 'गली' कटाव

ऐसे हो जाते है कि बड़े 'खमाड़' या खड्ड बन जाते हैं और लाखों एकड़ भूमि नष्ट हो जाती है। ऐसे बड़े-बड़े कटावों की रोक-थाम का प्रबन्ध तो सरकार ही कर सकती है परन्तु छोटे-मोटे खेतों के कटाव चाहें तो कृषक भी रोक सकते हैं। भूमि के कटाव की न्यूनाधिकता निम्नलिखित बातों पर निर्भर है।

(१) **वर्षा की न्यूनाधिकता**—यह जानी हुई बात है कि जहां वर्षा अधिक होगी कटाव भी विशेष होगा।

(२) **खेतों का ढाल**—ढालू खेतों में कटाव अधिक होता है क्योंकि ऐसे खेतों में पानी का बहाव जोरों से होता है।

(३) **जमीन की जाति**—कार्बनिक पदार्थ जिन खेतों में अधिक होते हैं उनमें कटाव कम होता है क्योंकि उससे भूमि-कण कुछ अंश तक बंधे रहते हैं। हल्की मिट्टी में कटाव विशेष होता है। स्थायी भूमि की अपेक्षा स्थानान्तरित भूमि में कटाव अधिक होता है।

(४) **घास-पात का अभाव**—जिस भूमि पर घास-पात जमे रहते हैं उनकी जड़ों से मिट्टी के कण बंधे रहते हैं, सो जल्दी बहने नहीं पाते। घास-पात की ऊपरी बाढ़ भी बहाव में रुकावट डालती है।

(५) **जंगलों का अभाव**—जहां-जहां जंगल निरंकुशता से काटे जाते हैं अथवा पशु पौधों को खा जाते हैं वहां की भूमि भी जोरों से कटने लगती है क्योंकि जमीन खुल जाती है।

अंग्रेजी में कहावत है "Prevention is better than cure" अर्थात् "चिकित्सा से रोक उत्तम है"। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त कारणों की ओर ध्यान रखना चाहिए। एक और कहावत है "A stitch in time saves nine" अर्थात् फटने के साथ ही कपड़ा सी दिया जाय तो कम सीना पड़ता है। इसलिए हमें चाहिए कि कटाव के प्रारम्भ में ही उसकी रोक-थाम की जाय।

(क) जिन खेतों में तह-की-तह कटती हो उनमें ढाल से समकोण बनानेवाली पारियां बनानी चाहिएं या यदि खेत ऊंचा-नीचा हो तो कॉनूर

पर पारियां बनानी चाहिएं। ऐसा करने से दो लाभ होंगे; एक तो पानी जल्दी से वह नहीं जायगा बल्कि पारियों में सोख लिया जायगा और जो अधिक होगा वह धीरे-धीरे नियंत्रित रूप से जिधर चाहें उधर निकाला जा सकेगा। चूंकि पानी धीरे-धीरे बहेगा, उसमें आनेवाले कण भी पारियों के पास बैठ जायंगे।

(ख) ऐसे खेतों में अधिक जड़ेंवाली या अधिक पत्तेवाली फसलें भी लाभदायक होती हैं। जैसे मक्का की फसल में जड़ें खूब होती हैं और कपास में कम, तो मक्कावाले खेत में कटाव कम होगा। मूंगफली जो जल्दी उग आती है और जिसके पौधे खड़े होते हैं, उसमें कटाव अधिक होगा। इसके विपरीत फैलनेवाली मूंगफली में पत्ते भी विशेष होंगे और वह भूमि पर ऐसी फैल जाती है कि ऊपर से गिरनेवाले पानी की बूंदों का जोश पत्तों पर ही बहुत अंश तक कम हो जाता है—वे भू-कण काटने नहीं पातीं।

(ग) यदि पारियां बनाने की सुविधा न हो और व्यय अधिक जंचे तो फिर 'सेड़ें' (मेड़) अधिक बना देनी चाहिए। सेड़ों पर जो घास-पात जम जाता है वह भी कुछ अंश तक बहाव को रोकता है। ऐसी क्रिया से खेत कुछ छोटे हो जायंगे लेकिन पानी के 'अपधाव' को तो रोकेंगे।

(घ) यदि सेड़े न छोड़े जायं तो एक फसल के बीच-बीच में दूसरी ऐसी फसल की कतारें बोई जायं (Strip Cropping) जो बहाव को रोके।

(ङ) यदि ढाल अधिक हो, जैसा कि पहाड़ी स्थानों में होता है, तो वहां सीढ़ीदार खेती (Terracing) की प्रथा को अपनाना चाहिए। पहाड़ों में अब भी ऐसा किया जाता है।

२. **नालीदार कटाव**—जब खेतों में छापरे पड़ते दिखें तो उसी समय उनको रोकने की युक्ति अपनानी चाहिए नहीं तो कुछ दिनों में वे नाले के रूप में हो जायंगे और फिर सुधारना अधिक कठिन होगा।

ऐसे कटाव को रोकने के लिए दो युक्तियां हैं—एक तो यह कि जहां से अपने खेतों में पानी आता है, वहां बांध-वांधकर नाली द्वारा पानी एक

ओर निकाल दिया जाय। दूसरी युक्ति यह होगी कि जहां से अपने खेत से पानी निकलता हो वहां कुछ घास-पात, पौधों की छोटी-मोटी टहनियां नाली में भरकर ऊपर पत्थर डलवा दिये जायं। पत्थर से वे टहनियां दब जायंगी और पानी का बहाव रुकेगा। अपधाव का पानी पत्थरों के ऊपर होकर बहेगा तो उसमें की बहुत-सी मिट्टी नीचे जम जायगी।

हवा (आंधी) द्वारा होनेवाली हानियों को रोकने के उपाय—

(१) आंधी द्वारा बहुधा कटाव तह के रूप में ही होते हैं। तह-के-तह उड़ते हैं और फिर कहीं जाकर तह-के-तह या छोटे-छोटे टीले के रूप में जम जाते हैं। ऐसी क्रिया को रोकने के लिए पेड़ों द्वारा आंधी की राह में बाधा डालना है सो जहांतक बने पेड़ अधिक लगाने चाहिए। सरकार ने राजस्थान में ऐसी प्रयोगशालाएं खोल रक्खी हैं जो इस बात की खोज करती हैं कि रेगिस्तान के योग्य कौन-कौन से पेड़ या घास-पात हैं जो कम-से-कम पानी पर जम सकते हैं। उनकी सम्मति से पेड़ लगाने चाहिए।

(२) ऐसे पौधों या पेड़ों की रखवाली भी करनी चाहिए। मारवाड़ में कहावत है, "ऊंट छोड़े आकड़ों ने बकरी छोड़े कांकरों।" मरुभूमि में दोनों ही विशेषता से पाये जाते हैं और जो कोई वनस्पति सामने आये खाते ही जाते हैं। सो उनसे रक्षा की ओर पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए।

(३) अगर हो सके तो छोटे-छोटे खेतों के आसपास तीन-चार फुट ऊंची मिट्टी की दीवारें बना देनी चाहिए। ऐसा कई जगह राजस्थान में किया भी जाता है। इससे हवा भी कुछ अंश तक रुकेगी और ऐसी दीवार बाड़ (घेरे) का भी काम देगी। भू-कटाव पानी से हो या आंधी से, उसे रोकने के लिए प्रकृति ने भी कुछ ऐसे पौधों का निर्माण किया है जो भू-संरक्षण में सहायक होते हैं, ऐसे पौधे समुद्र-किनारे वहां की भूमि की रक्षा के लिए, नदी किनारे अथवा रेगिस्तान में वहां की भूमि की रक्षा के लिए बनाये हैं सो उनकी रक्षा करनी चाहिए। उन्हें कटने नहीं देना चाहिए।

: २ :

साग-भाजी-सम्बन्धी विशेष जानकारी

१—संख्या बीज प्रति छटांक और आवश्यक बीज प्रति एकड़

नाम तरकारी	संख्या बीज प्रति छ०	आवश्यक बीज	
		प्रति एकड़	प्रति १०० फुट
१	२	३	४
अजवाइन	६०,०००	५ सेर	१ तोला
अदरक		१२ मन	१५० टुकड़े
अरारूट		२० मन	१०० टुकड़े
अर्वी		१०-१२ मन	५० गांठें
आर्टिचोक ग्लोब	१०००	५ से ६ छटांक	१ तोला
जेरुसेलम (कच्चू)		५-६ मन कच्चू के टुकड़े	१०० टुकड़े
आल (लौकी)	४५०	१ सेर	१ तो०
आलू		२० मन (पहाड़ी) १२ मन (देसी)	३ सेर २ सेर
उच्चे		३ सेर	२ तो०
एण्डाईव	२७,०००	१ सेर	१ तो०
ऐस्पेरेगस	२,०००	२ से ३ सेर	१ तो०
ककड़ी (रैन्ता)	२,०००	१ सेर	१ तो०
कद्दू	४५०	२ सेर	२ तो०
,, विलायती		२ सेर	२ तो०
,, भरा (शिशकुम्हड़ा)	८००	१ सेर	१ तो०
करेला	४००	३ सेर	२ तो०
कलौंजी	२४,०००	१० सेर	२ तो०

१	२	३	४
किराओ	९००	२० सेर	२ छटांक
कुसुम	१८००	१० सेर	२ तो०
कुलफा		३ सेर	१ तो०
केल	१०,०००	१० छटांक	२ तो०
केला		४०० पौंच	१० पौंच
कोलाड्स	१७,०००	३ छटांक	२ तो
क्रेस	१००,०००	३ सेर	१ तो०
खरबूजा	२४००	१ सेर	१ तो०
खसखस	१,२००,०००	२ सेर	१ तो०
खिसारी	११५०	१ मन	१ छ०
खीरा	२०००	८ छटांक	२ तो०
खीरा गोल		,,	२ तो०
गराड़ू		१०-१५ मन	४० टुकड़े
गाजर	५०,०००	१॥ सेर	१ तो०
गोभी गांठ	१४,०००	२ सेर	१ तो०
,, चीनी	४०,०००	३ छटांक	१ तो०
,, फूल	१६,०००	२ छटांक	१ तो०
,, बंध	१०,०००	२ छटांक	१ तो०
ग्वार	१७५०	८ सेर	१ छ०
चना	५००	१ मन	१ छ०
चंवली	४५०	८ सेर	१ छ०
चिचड़ा		४ सेर	२ तो०
चुकन्दर	३५००	३ सेर	२ तो०
चौलाई	७०,०००	३ सेर	१ तो०
जीरा सफेद	१४००	७ सेर	२ तो०

१	२	३	४
जीरा स्याह्		६ सेर	२ तो०
टमाटर	१५,०००	२ छटांक	१ तो०
तरवूज़	४५०	१॥ सेर	१ तो०
तरोई	८००	२ सेर	१ तो०
घीया तरोई	८००	२ सेर	१ तो०
तूवर (अरहर)	६००	१० सेर	१ छटांक
दिलपसन्द (टिण्डा)		२ सेर	१ तो०
धनिया	८०००	८ सेर	२ तो०
पटुआ		५ सेर	२ तो०
पपैया (पपीता)		४०० पौधे	१० पौधे
परवल		१५०० लता के टुकड़े	२० टुकड़े
पारस्निप	५६००	२ सेर	१ तो०
पालक	६०००	४ सेर	२ तो०
,, खट्टा		३ सेर	२ तो०
पार्सली	३५,०००	२ सेर	१ तो०
प्याज़	२०,०००	२॥ सेर	१ तो०
फूट	२०००	८ छटांक	१ तो०
बथुआ		४ सेर	१ तो०
बैंगन	१०,०००	५ छटांक	१ तो०
ब्रुसेल्स स्प्राउट्स	१३,०००	३ छटांक	१ तो०
ब्रोकोली	१४,०००	२ छटांक	१ तो०
भिण्डी	८५०	५ सेर	१ छटांक
मटर	२०० से ३००	२० सेर देशी	३ छटांक
मक्का	३५०	१० सेर	२ छटांक

१	२	३	४
मिर्च	१०,०००	१०-१२ छटांक	१ तोला
मूली	१०,०००	४ सेर	१ तो०
मेथी	६,५००	१५ सेर	२ तो०
मोगरी		२ सेर	१ तो०
रतालू		१५ मन	३० टुकड़े
राई	३२,०००	५ सेर	१ तो०
रुटेबागा	२२,०००	१ सेर	१ तो०
रूबर्ब	३६००	२ सेर	१ तो०
लहसुन		१० मन	१०-१२ गांठें
लीक	१६,०००	२ सेर	१ तो०
लेट्यूस	३२,०००	२ सेर	१ तो०
शकरकन्द		२०,००० लता के टुकड़े	७० टुकड़े
शलजम	२२,०००	१॥ सेर	१ तो०
शिकोरी	५०,०००	२ सेर	१ तो०
शेरविल		२ सेर	१ तो०
सरसों पीली	१४,०००	५ सेर	१ तो०
,, सफेद		६ सेर	१ तो०
साग कुलफा		३ सेर	१ तो०
,, मरसा	७०,०००	३ सेर	१ तो०
,, लाल	७०,०००	३ सेर	१ तो०
सायबीन	१२००	१० सेर	१ छटांक
साल्सीफाई	९०००	४ सेर	१ तो०
सेम	२००	१० सेर	१ छटांक
,, फ्रेंच बीन	२००	१५ सेर	१ ,,

१	२	३	४
सेम बकला बीन		१५ सेर	२ छटांक
,, ब्राड बीन	२५	२० सेर	४ ,,
,, स्कारलेट रनरबीन	२४	१५ सेर	४ ,,
सुथनी		१२ मन	१०० गांठें
सूरन (ओल)		७५ मन प्रथम	वर्ष में[1]
सेलेरी	१०००००	३ छटांक	१ तोला
सोआ		१० सेर	१ छटांक
सौंफ बड़ी		८ सेर	१ ,,
,, छोटी		५ सेर	१ ,,
स्क्वेश गर्मीवाली	८००	२ सेर	२ तोला
,, जाड़ेवाली	८००	२ सेर	२ ,,
हल्दी		१२ मन हरी गांठें	१०० गांठें

१—इस बीज से दूसरे साल में लगभग ५ एकड़ और चौथे में १० एकड़ जमीन रोपी जा सकेगी ।

२—भिन्न-भिन्न प्रान्तों में कुछ मुख्य-मुख्य

चै०—चैत्र ज्ये०—ज्येष्ठ श्रा०—श्रावण

वै०—वैशाख आषा०—आषाढ़ भा०—भाद्रपद

नाम तरकारी	वंगाल	बिहार	उत्तर प्रदेश
अदरक	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
अर्वी	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	वै० से आषा०
आर्टिचोक	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	वै० से आ०
आल (लौकी)	श्रा०—भा०	ज्ये०—आषा०	चै० से आ०
	मा०—फा०	मा०—फा०	
आलू	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
ककड़ी (खीरा)	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०
	मा०—फा०	मा०—फा०	आश्वि०—का०
ककड़ी रेती	फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०
कद्दू	फा०—चै०	ज्ये० से श्रा०	आ०—श्रा०
	श्रा०—भा०	मा०—फा०	मा०—फा०
कद्दू भूरा	ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०
करेला	मा०—फा०	चै० से श्रा०	चै० से श्रा०
किराओ	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
खरबूजा	फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०
गराडू, रतालू	चै० से ज्ये०	चै० से आषा०	चै० से आषा०
गाजर	आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०
गोभीगांठ	भा० से आश्वि०	भा० से मार्ग०	भा० से का०

तरकारियों के बोने के समय की तालिका

आश्वि०—आश्विन मार्ग०—मार्गशीर्ष माघ—मा०

का०—कार्तिक पौ०—पौष फा०—फाल्गुन

पंजाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बम्बई और मद्रास	पहाड़ों पर
ज्ये०—आषा०	आषा०	आषा०—श्रा०	फा०—चै०
ज्ये०—आषा०	आषा०	आ०—श्रा०	फा०—चै०
आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	श्रा०	फा०—चै०
ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	माघ०—फा०	फा०—चै०
आश्वि०—का०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	फा० से वै०
मा०—फा०	का०	माघ	
आषा०—श्रा०	आ०—श्रा०	आषा०—श्रा० माघ—फा०	ज्ये०—आषा०
फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०	ज्ये० से भा०
आ०—श्रा० मा०—फा०	आषा०—श्रा०	चैत०—वैशाख	फा० से ज्ये०
आ०—श्रा० ,	आ०—श्रा०	आ०—श्रा०	—
फा० से आषा०	आषा०—श्रा०	माघ—फा०	—
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	फा० से ज्ये०
फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०	ज्ये० से भा०
ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	फा० से आ०	फा० से ज्ये०
आश्वि०—का०	श्रा० से का०	श्रा० से मार्ग०	फा० से वै०
भा० से का०	भा० से का०	भा० से का०	फा० से ज्ये०

नाम तरकारी	बंगाल	बिहार	उत्तर प्रदेश
गोभीफूल	भा० से आश्वि०	श्रा० से का०	आ० से का०
गोभी बंध	भा० से आश्वि०	भा० से का०	भा०—का०
ग्वार	—	आषा०—श्रा०	आ०—श्रा०
घिया तरोई	चै० से ज्ये०	ज्ये०—आषा०	वै० से आषा०
	—	माघ	माघ
चना	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
चंवली	—	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०
चिचड़ा	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
चुकन्दर	आश्वि०—का०	भा० से का०	का० से पौ०
टमाटर	भा० से का०	श्रा० से का०	श्रा० से का०
तरबूज	मा०—फा०	पौ० से फा०	मा०—फा०
तरोई	चै० से ज्ये०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आ०
		माघ	
तूवर	आ०—का०	आषा०—श्रा०	आषा०
धनिया	आश्वि०—का०	मार्ग०—पौ०	का०—मार्ग०
परवल	आश्वि०—का०	आ०—श्रा०	ज्ये०—आषा०
		आश्वि०—का०	
प्याज	भा० से मार्ग०	मार्ग० से मा०	का०—मार्ग०
बैंगन	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
	मा०—फा०	मा०—फा०	मा०—फा०

पंजाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बंबई और मद्रास	पहाड़ों पर
श्रा० से का०	भा०—आश्वि०	भा० से आश्वि०	फा० से वै०
भा० से का०	भा० से आश्वि०	भा० से आश्वि०	फा० से ज्ये०
आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	फा०—चै०
ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	—
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	फा०—चै०
आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	चै०—वै०
ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	आषा० से श्रा०	—
आश्वि०—का०	आश्वि०	आषा० से पौ०	चै०—वै०
श्रा० से का०	श्रा० से का०	श्रा० से पौ०	वै०—ज्ये०
मा०—फा०	माघ०—फा०	माघ०—फा०	—
श्रा० से आश्वि०			
ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	—
आषा०	आषा०	आषा०	—
आश्वि०—का०	आश्वि० से पौ०	का० से पौ०	फा० से ज्ये०
आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	—
आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से पौ०	चै० से ज्ये०
आषा०—श्रा०	ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	ज्ये० से श्रा०
आश्वि०—का०	माघ०—फा०	माघ०—फा०	—
—	—	—	—

नाम तरकारी	बंगाल	बिहार	उत्तर प्रदेश
ब्रसेल्स स्प्राउट्स	आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०
भिंडी	ज्ये० से भा०	आषा०—श्रा० माघ	चै० से आषा०
मटर	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
मक्का	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	वै० से आषा०
मिर्च	ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा० मा०—फा०
मूली	आषा० से मार्ग०	आषा० से पौ०	आषा० से पौ०
मेथी	आश्वि०—का०	आश्वि० से पौ०	का० से मा०
मोगरी	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
लेट्यूस	आश्वि०—का०	आश्वि० से मार्ग	आश्वि० से पौ०
शकरकंद	आश्वि०—का०	आश्वि०—का० माघ	आषा०
शलजम	भा०—आश्वि०	श्रा—भा० आश्वि०—का० (विदेशी)	श्रा० से आश्वि०
सरसों	आश्वि०—का०	आश्वि०	आश्वि०—का०
साग	चै० से आषा०	वै० से भा०	वै० से भा०
सेम	आषा० से भा०	आषा०—श्रा०	आषा०
ब्राडबीन	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
फ्रेंचबीन	आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०
सूरन	आषा०—श्रा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
हल्दी	ज्ये०—आषा०	आषा०	ज्ये०—आषा०

पंजाब	मध्यभारत और गुजरात	दक्षिण बंबई और मद्रास	पहाड़ों पर
आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०	वै० से ज्ये०
ज्ये०—आपा०	ज्ये०—आषा	आ०—श्रा०	वै० से आषा०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	फा० से ज्ये०
ज्यें०—आषा०	ज्ये०—आषा०	आषा०	चै० से भा०
फा०—चै०	भा०—आश्वि०	भा० से मार्ग०	चै० से ज्ये०
भा० से का०	भा० से का०	भा० से पौ०	चै० से ज्ये०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	चै० से ज्ये०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	चै० से ज्ये०
आश्वि० से पौ०	आश्वि०—का०	श्रा० से मा०	चै० से ज्ये०
	माघ—फा०		
आषा०	आषा०	आषा०	—
		आश्वि०—का०	
भा०—आश्वि०	भा० से का०	आश्वि०—का०	
			चै० से आषा०
आश्वि०—का०	आश्वि०	आश्विन	चै० से आश्वि०
वै० से भा०	वै० से भा०	वै० से भा०	बै०—श्रा०
ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	का० से पौ०	चै० से आषा०
आश्वि०—का०	भा० से आ०	आश्वि०—का०	वै०—ज्ये०
ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	—
ज्ये०—आषा०	आषा०	आ०—श्रा०	फा०—चै०

३—साग-भाजियों में रासायनिक पदार्थों की मात्रा

शरीर के निर्माण, वृद्धि तथा जीर्णोद्धार के निमित्त जिन भोज्य पदार्थों का उपयोग किया जाता है उनमें जल, आमिष जातीय (Protieds), सर्करा जातीय (Carbohydrates), स्नेह जातीय (Fats), तन्तुयुक्त (Fibre), कुछ लवण (Salts) और खाद्योज (Vitamins) पाये जाते हैं। इनमें से अन्तिम पदार्थ बहुत ही न्यून मात्रा में रहते हैं, तथापि उनका स्वास्थ्य से अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऐसे पदार्थों की आवश्यकता तथा उपयोगिता का विस्तृत वर्णन पृष्ठ ३२४ पर दिया गया है। यहांपर अन्य पदार्थों का कुछ वर्णन किया जाता है।

जल—यह पानी के रूप में वैसे तो काम में लाया ही जाता है परन्तु अन्य खाद्य-सामग्री में भी यह उपस्थित रहता है। जल का महत्त्व सबको विदित ही है। खाद्य-पदार्थ इसी में घुलते हैं और घुले हुए पदार्थों का शरीर के अवयव तरल पदार्थ के रूप में शोषण करते हैं, रक्त का दौरा बना रहता है और पसीने के द्वारा अनावश्यक पदार्थ बाहर निकलते हैं। शरीर के कोठे को शुद्ध कर अनावश्यक पदार्थों को मल-मूत्र के रूप में बाहर फेंकने में भी जल सहायक होता है।

आमिष जातीय पदार्थ—इन्हें मांसोत्पादक पदार्थ भी कहते हैं। इन्हींसे बच्चों के शरीर के अंग बनते हैं और परिश्रम द्वारा मनुष्यों के पट्ठों तथा अन्य अंगों का जो ह्रास होता है उनका जीर्णोद्धार होता है।

सर्करा जातीय पदार्थ—इनसे शरीर में उष्णता तथा कार्य करने की शक्ति पैदा होती है।

स्नेह जातीय पदार्थ—इनमें गुण तो सर्करा जातीय पदार्थों के ही होते हैं परन्तु उनसे सवा दो गुणे अधिक गुणकारी होते हैं।

तन्तुयुक्त पदार्थ—इनका शरीर के पोषण से तो कोई सम्बन्ध नहीं परन्तु सम्भवतः ये मल त्यागने में सहायक होते हैं।

लवण—ये अम्ल तथा क्षार या धातुओं के मेल से बने हुए होते हैं।

वैसे तो अपनी-अपनी जगह सभी महत्त्व रखते हैं परन्तु कइयों की आवश्यकता बहुत न्यून मात्रा में होती है जो भोजन-सामग्री द्वारा प्राप्त हो जाती है। इनमें विशेष महत्त्व स्फुर (Phosphorus), चूना और लोहे के लवणों का होता है। तांबे की अनुपस्थिति में लोहा काम नहीं कर सकता। इसलिए इसे भी महत्त्व दिया जा सकता है परन्तु यह बहुत ही न्यून मात्रा में चाहिए। स्फुर का उपयोग दिमागी कोषों की बनावट में होता है। चूने के साथ मिलकर यह हड्डियां बनाता है। चूने का असर हृदय पर भी पड़ता है। लोहे का सम्बन्ध रक्ताणु (Red blood corpuscles) की बनावट से है।

उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए प्रत्येक मनुष्य के भोजन में एक चतुर्थांश भाग साग-भाजी का होना चाहिए। ऐसी सूरत में कौन-सी साग-भाजियों द्वारा भिन्न-भिन्न पदार्थों की पूर्ति कितनी होती है यह जानने के लिए यहां एक सारिणी[1] दी जाती है जिससे पाठक गणना कर सकते है।

१. इस सारिणी के अंक Dr. Aykroyd, Director Nutrition Research Laboratories, Koonoor Health Bulletin. No. 23, 1941 से लिये गए हैं।

साग-भाजियों में रासायनिक

ये अंक बाजार में जैसी साग-भाजियां मिलती हैं उनके
न्यूनाधिकता हो सकती है, उसी प्रमाणानुसार दूसरे पदार्थों में भी

नाम	जल %	सर्करा जातीय %	आमिष जातीय %	स्नेह जातीय %
अदरक	८०.९	१२.३	२.३	०.९
अर्वी	७३.१	२२.१	३.०	०.१
आल, लौकी	९६.३	२.९	०.२	०.५
आलू	७४.७	२२.९	१.६	०.१
ककड़ी, खीरा	९६.४	२.८	०.४	०.१
कद्दू	९२.६	५.३	१.४	०.१
कद्दू भूरा	९६.०	३.२	०.४	०.१
करेला	९२.४	४.२	१.६	०.२
कुसुम	८९.९	५.१	३.३	०.७
केला कच्चा	८३.२	१४.७	१.४	०.२
खिसारी (पत्ती)	८४.२	७.६	६.१	१.०
गाजर	८६.०	१०.७	०.९	०.१
गोभी गांठ	९२.१	५.९	१.१	०.२
गोभी फूल	८९.४	५.३	३.५	०.४
गोभी बन्ध	९०.२	६.३	१.८	०.१
ग्वार	८२.५	९.९	३.७	०.२
चने की कोंपल	६०.६	२७.२	८.२	०.५
चिचड़ा	९४.१	४.४	०.५	०.३
चुकन्दर	८३.८	१३.६	१.७	०.१
टमाटर	९४.५	३.९	१.०	०.१
टिण्डा	९२.३	५.३	१.७	०.१
तरोई	९५.४	३.७	०.५	०.१
धनिया	८७.९	६.५	३.३	०.६
पालक	९१.७	४.०	१.९	०.९

पदार्थों की मात्रा

विश्लेषण के हैं। तरकारियों की आयु अनुसार जल की मात्रा में कुछ हेर-फेर होगा।

तन्तुयुक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		चूना Ca. %	स्फुर P. %	लोहा Fe. %
२.४	१.२	०.०२	०.०६	०.००२६
—	१.७	०.०४	०.१४	०.००२१
—	०.५	०.०२	०.०१	०.०००७
—	०.६	०.०१	०.०३	०.०००७
—	०.३	०.०१	०.०३	०.००१५
—	०.६	०.०१	०.०३	०.०००७
—	०.३	०.०३	०.०२	०.०००५
०.८	०.८	०.०२	०.०७	०.००२२
—	१.०	०.१८	०.०६	०.००७६
—	०.५	०.०१	०.०३	०.०००६
—	१.१	०.१६	०.१०	०.००७३
१.२	१.१	०.०८	०.०३	०.००१५
—	०.७	०.०२	०.०४	०.०००४
—	१.४	०.०३	०.०६	०.००१३
१.०	०.६	०.०३	०.०५	०.०००८
२.३	१.४	०.१३	०.०५	०.००५८
—	३.५	०.३१	०.२१	०.०२८३
—	०.७	०.०५	०.०२	०.००१३
—	०.८	०.२०	०.०६	०.००१०
—	०.५	०.०१	०.०२	०,०००१
—	०.६	०.०२	०.०३	०.०००९
—	०.३	०.०४	०.०४	०.००१६
—	१.७	०.१४	०.०६	०.०१००
—	१.५	०.०६	०.०१	०.००५०

नाम	जल %	सर्करा जातीय %	आमिष जातीय %	स्नेह जातीय %
पार्स्निप	७२.४	२३.२	१.३	०.३
पार्सली	६८.४	१९.७	५.९	१.०
प्याज	८६.८	११.६	१.२	०.१
फ्रेंचबीन	९१.४	४.५	१.७	०.१
बथुआ	८७.९	३.७	४.७	०.४
बैंगन	९१.५	६.४	१.३	०.३
ब्रसेल्स-स्प्राउट्स	८४.६	९.२	४.७	०.५
भिण्डी	८८.०	७.७	२.२	०.२
मक्का (हरी)	४९.४	१.१	४.३	०.५
मटर	७२.१	१९.८	७.२	०.१
मिर्च हरी	८२.६	६.१	२.९	०.६
मूली	९४.४	४.२	०.७	०.१
मेथी	८१.८	९.८	४.९	०.९
लहसुन	६२.८	२९.०	६.३	०.१
लीक	७८.९	१७.२	१.८	०.१
लेट्यूस	९२.९	३.०	२.१	०.३
शकरकंद	६६.५	३१.०	१.२	०.३
शलजम	९१.१	७.६	०.५	०.२
सरसों	८४.९	७.१	५.१	०.४
साग	८५.८	५.७	४.९	०.५
सूरन	७८.७	१८.४	१.२	०.१
सेम	८२.४	१०.०	४.५	०.१

तन्तुयुक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		चूना Ca. %	स्फुर P. %	लोहा %
१.७	१.१	०.०५	०.०४	०.०००४
१.८	३.२	०.३९	०.२०	०.०१७९
—	०.४	०.१८	०.०५	०.०००७
१.८	०.५	०.०३	०.०३	०.००१७
—	३.३	०.१५	०.०८	०.००४२
—	०.५	०.०२	०.०६	०.००१३
—	१.०	०.०५	०.०८	०.००२३
१.२	०.७	०.०९	०.०८	०.००१५
—	०.७	०.०१	०.१०	०.०००७
—	०.८	०.०२	०.०८	०.००१५
६.८	१.०	०.०३	०.०८	०.००१२
—	०.६	०.०५	०.०३	०.०००४
१.०	१.६	०.४७	०.०५	०.०१६९
०.८	१.०	०.०३	०.३१	०.००१३
१.३	०.७	०.०५	०.०७	०.००२३
०,५	१.२	०.०५	०.०३	०.००२४
—	१.०	०.०२	०.०५	०.०००८
—	०.६	०.०३	०.०४	०.०००४
१.८	२.५	०.३७	०.११	०.०१२५
—	३.१	०.५०	०.१०	०.०२१४
०.८	०.८	०.०५	०.०२	०.०००६
२.०	१.०	०.०५	०.०६	०.००१६

साग-भाजियों में अन्य खनिज पदार्थों की मात्रा, चूना, स्फुर और लोहे की मात्रा को पूर्ण खनिज पदार्थ के मात्रा में से कम कर देने से मालूम की जा सकती है।

४—साग-भाजी और खाद्योज (विटामिन्स)

पीछे बताया गया है कि खाने की वस्तुओं में पोषक पदार्थों के सिवाय कुछ ऐसे पदार्थ भी होते हैं जिन्हें खाद्योज पदार्थ या 'विटा-मिन्स' कहते हैं।

यदि हमारे भोज्य पदार्थों में विटामिन्स न हों तो शरीर की बाढ़ और बनावट अच्छी नहीं होती। व्याधियों से बचने की शक्ति का ह्रास हो जाता है और सूखा, बेरीबेरी, स्कर्वी, पेलेग्रा इत्यादि कई प्रकार की व्याधियां आक्रमण कर बैठती हैं।

हमारा देश शाकाहारियों का देश है और अन्य खाद्यों के सिवाय साग-भाजी द्वारा भी इन पदार्थों की पूर्ति हो सकती है। यहांपर पाठकों की जानकारी के लिए दो-चार शब्द दे दिये जाते हैं ताकि पाठकगण इस जान-कारी से लाभ उठायें।

अभीतक खोज द्वारा जो खाद्योज पदार्थ निकाले गए हैं वे बहुत-से हैं और उनकी संख्या बढ़ती जा रही है। अभी इन सबका नामकरण भी ठीक से नहीं हुआ है। इन्हें अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों के नाम दे रक्खे हैं जैसे विटामिन 'ए', विटामिन 'बी' 'सी' आदि।

नित्य के भोजन में आटा, दाल, चावल, दूध, घी व मांस इत्यादि जो पदार्थ काम में लाये जाते हैं उनमें से अधिकांश में एक या अनेक विटा-मिन्स रहते हैं। परन्तु यहांपर सिर्फ उन बिटामिन्स का वर्णन दिया जाता है जिनके विषय में काफी छानबीन हो चुकी है और जो साग-भाजी में पाये जाते हैं या जिनका परोक्ष रूप से साग-भाजी से सम्बन्ध है—जैसे 'ए', 'बी', 'सी', और 'डी' 'जी'।

भिन्न-भिन्न विटामिन्स का वर्णन देने से प्रथम यह बता देना उत्तम होगा कि साग-भाजियों को काटकर धोने से कुछ विटामिन्स धुलकर बह जाते हैं इसलिए काटने से पहले उन्हें धो डालना चाहिए। अगर बाद में धोने की आवश्यकता पड़े तो अधिक नहीं धोना चाहिए।

पकाने से भी विटामिन्स का कुछ अंश नष्ट हो जाता है, इसलिए आवश्यकता से अधिक नहीं उबालनी चाहिए। बहुधा मठा (छाछ) डालकर

साग-भाजी खट्टी की जाती है। ऐसा करना अच्छा है क्योंकि इससे विटामिन्स कम नष्ट होते हैं।

विटामिन 'ए'

इनका सम्बन्ध आंख की रोशनी से बहुत अधिक है। इनके पूर्ण अभाव में रतौंधी आने लगती है और अगर इनकी मात्रा कम रही तो आंख की ज्योति कम हो जाती है। इनके सेवन से केवल रतौंधीवाले ही नहीं बल्कि जो आंख की दुर्बलता (Colour blindness) के कारण भिन्न-भिन्न रंगों को नहीं बता सकते, उनकी भी आंखें ठीक हो जाती हैं।

इसके सिवाय यदि निम्नलिखित अन्य लक्षण पाये जायं तो समझना चाहिए कि हमारे शरीर में विटामिन 'ए' की कमी है और ऐसे पदार्थ भोजन के काम में लाने चाहिए जिनसे इनकी पूर्ति हो। आंखों का फूलना, थोड़े से परिश्रम से थकावट मालूम होना, सिर में दर्द रहना, जल्दी-जल्दी सर्दी लगना, मन का उत्साहहीन होना, त्वचा में रूखापन, बालों की चमक कम पड़ना और उनका झड़ना, दांतों का खराब होना और जल्दी गिर पड़ना खांसी आना, बच्चे के फेफड़े तथा अंतड़ियों का बिगड़ना, बच्चों के शरीर की बाढ़ का रुकना, वजन नहीं बढ़ना और फोड़े-फुंसी होना इत्यादि। संक्षेप में यह कहना चाहिए कि इसकी कमी से शरीर में व्याधियों को रोकने की शक्ति कम हो जाती है। ऐसी सूरत में हमें ऐसी साग-भाजी काम में लानी चाहिए जिनसे विटामिन 'ए' की पूर्ति हो।

यथार्थ में देखा जाय तो साग-भाजियों में विटामिन 'ए' नहीं होते; परन्तु उनका अग्रगामी 'केरोटीन' (Carotene) नामक एक पदार्थ होता है जिससे यकृत (कलेजा) विटामिन 'ए' को बना लेता है। निम्न-लिखित सूची से ज्ञात होगा कि केरोटीन किन-किन साग-भाजियों में पाया जाता है।

हरा धनिया, साग, चने की भाजी, खिसारी की भाजी, कुसुम सेलेरी, मेथी, पार्सली, गाजर, पुदीना, पालक, लेट्यूस, बन्ध गोभी, हरी मिर्च, सूरन, ग्वार, टमाटर, फ्रेंचबीन, करेला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, चिचड़ा, लहसुन, मटर, कद्दू, अदरक, भिंडी, तरोई, हरी मक्का, आलू, अर्वी, फूल गोभी, गांठ-गोभी, पार्स्निप, टिण्डा, प्याज, सिंघाड़ा, शकरकंद तथा बैंगन इत्यादि।

उपर्युक्त सूची 'केरोटीन' की न्यूनाधिक मात्रा के अनुसार दी गई है। सबसे अधिक मात्रा धनिया में और सबसे कम शकरकंद में होती है; लेकिन धनिया अधिक नहीं खाया जा सकता, इसलिए इनमें से जो चीज अधिक मात्रा में खाने लायक हो उनका उपयोग करना चाहिए। इसी क्रमानुसार आगे की सूचियां भी दी गई हैं।

विटामिन 'बी'

इस पदार्थ के अभाव से शरीर निर्बल हो जाता है, स्मरण-शक्ति कम हो जाती है और बहुधा बेरीबेरी नाम का रोग हो जाता है। निम्नलिखित लक्षणों से विटामिन 'बी' की आवश्यकता समझनी चाहिए।

शरीर की कमजोरी, पट्ठों का ढीला पड़ना, अंगों में दर्द होना, पैरों का कमजोर होना, झिनझिनी आना, हाथ-पैरों में जलन होना, पैर तथा मुंह फूलना, पाकाशय में गड़बड़ी होना, भूख कम लगना , कब्जियत रहना स्वास जल्दी-जल्दी चलना, दिल की धड़कन का बढ़ जाना, स्वभाव में चिड़-चिड़ापन आना आदि।

निम्नलिखित साग-भाजियों का सेवन करने से विटामिन 'बी' की पूर्ति हो सकती है :

मटर, फूलगोभी, पार्स्निप, लेट्यूस, अर्वी, लीक, मेथी, पालक, चुकन्दर, गाजर, मूली, कच्चू, बन्ध गोभी, प्याज, शलजम, ककड़ी, फ्रेंच-बीन, गांठ गोभी, गराडू, रतालू , करेला,टमाटर, तरोई, भिण्डी, कद्दू, सूरन, आलू, बैंगन इत्यादि।

विटामिन 'सी'

'सी' के अभाव में शरीर निर्बल हो जाता है और स्कर्वी नामक व्याधि आक्रमण कर बैठती है। निम्नलिखित लक्षण 'सी' का अभाव दर्शाते हैं।

मसूढ़ों का फूलना, उनमें से खून का बहना तथा कभी-कभी घाव हो जाना, दांतों का जल्दी गिरना, बदबूदार श्वास, जीभ का फूलना व लाल हो जाना, तिल्ली का बढ़ना, भूख कम लगना, कब्जियत रहना, हाथ-पैरों में दर्द होना, मुंह पर छोटी-छोटी फुंसियों का होना तथा आंखों में दर्द होना, त्वचा का रूखापन, शरीर का निर्बल होना, स्त्रियों में मासिक स्राव की अधिकता और वजन घटना इत्यादि। जब व्याधि बहुत बढ़ जाती है तो

कभी-कभी हृदय की गति बन्द हो जाती है और शरीरान्त हो जाता है। विटामिन 'सी' के सेवन से उपर्युक्त व्याधियों से बचने के अलावा शरीर में यदि कोई घाव हो तो वे शीघ्र भर जाते हैं।

निम्नलिखित साग-भाजियों के उपयोग से 'सी' विटामिन की पूर्ति हो सकती है :

पार्सली, मिर्च, साग, धनिया, बन्ध गोभी, चुकन्दर, करेला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, गांठगोभी, सेलेरी, फूलगोभी, ग्वार, पालक, शलजम, रूबर्ब, टमाटर, शकरगन्द, बैंगन, आलू, मूली, भिण्डी, पार्स्निप, लेट्यूस, फ्रेंचबीन, लहसुन, सेम, प्याज, लीक, अदरक, ककड़ी, गाजर, कद्दू, इत्यादि।

विटामिन 'डी'

हड्डियों की बनावट में इनका बहुत महत्त्व है। हड्डियां चूना और स्फुर के मेल से बनती हैं, जिनका उचित परिमाण में उपयोग 'डी' की उपस्थिति में ही हो सकता है। इसके अभाव से बच्चों को सूखा रोग हो जाता हैं। हड्डियां ठीक से नहीं बन पातीं और दांत भी पूरे नहीं बनते। हड्डियां पतली और कमजोर हो जाती हैं। पेट बाहर निकल आता है और पसलियां दब जाती हैं। सिर बड़ा और भौं के बाल लम्बे हो जाते हैं। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। गर्दन और सिर में पसीना बहुत आता है।

साग-भाजियों द्वारा तो इस पदार्थ की पूर्ति नहीं हो सकती है, क्योंकि यह बहुत कम मात्रा में कुछ ही सब्जियों में पाया जाता है। परन्तु यदि सब्जियों द्वारा विटामिन 'ए' की पूर्ति होती रहे तो दूध द्वारा जो विटामिन 'डी' मिलता है उसका पूर्ण उपयोग हो जाता है। मटर, धनिया, पोदीना, अंकुरे हुए मूंग तथा चने में 'डी' विटामिन पाया जाता है।

विटामिन 'जी'

इसके अभाव से शरीर की बाढ़ ठीक से नहीं होती। कभी-कभी पेलेग्रा नाम की व्याधि हो जाती है। वह व्याधि अमरीका, इटली और रूस में जहां-जहां मक्का खाने का प्रचार है वहां अधिकतर होती है। 'जी' के अभाव से शरीर कमजोर हो जाता है और पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है : शलजम, पालक, फूलगोभी, शकरकंद, गांठ गोभी, आल, मली, टमाटर. प्याज आदि के सेवन से विटामिन 'जी' की पूर्ति होती है।

: ३ :

फल-सम्बन्धी विशेष जानकारी

१—मुख्य-मुख्य फलों की

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अंतर
			फुट
अंगूर	बरसात में या जाड़े के आरंभ में	डाली, दाब कलम या गूटी	८×८
अंजीर	बरसात में	डाली या दाब कलम	१५×१५
अमरूद	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज या भेंट कलम	१८×१८
अनानास	भाद्रपद	सकर्स	२×२
अनार	बरसात में	बीज,डाली या दाब कलम	१५×१५
आड़ू	बरसात में या जाड़े के अन्त में	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	२०×२०
आम	बरसात में या जाड़े के अंत में	भेंट कलम	बीजू ४०×४० कलम ३५×३५
आलूबुखारा	बरसात में या जाड़े के अंत में	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	१५×१५

खेती का नक्शा

फल-प्राप्ति का समय	पौधे लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
गरमी में	२—३	४०—५०	सीमाप्रांत में भाद्र-पद और आश्विन में फलता है
चैत से ज्येष्ठ	२—३	—	
श्रावण-भाद्रपद और पौष-माघ	बीजू ५—६ कलमी ३—४	३०—३५ २०—२५	
श्रावण से आश्विन	१½	३—४	
श्रावण से कार्तिक	४—५	४०—५०	
वैशाख-ज्येष्ठ	३—४	७—८	सीमाप्रांत में भाद्र-पद से कार्तिक तक फल मिलते हैं
ज्येष्ठ से श्रावण भाद्रपद	बीजू १०—१२ कलमी ५—६	बीज १००-१२५ कलमी ५०-६०	दक्षिण भारत में चैत्र-वैशाख में फल मिलते हैं
वैशाख-ज्येष्ठ	४—५	७—८	

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अन्तर
			फुट
आंवला	बरसात में	बीज या भेंट कलम	(एक-दो पेड़)
कटहल	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
केला	बरसात में	सकर्स	१०×१०
खजूर	बरसात में	सकर्स	२०×२०
खिरनी	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
खुबानी	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५×१५
गुलाब जामुन	बरसात में	बीज या दाब कलम	१५×१५
चकोतरा (ग्रेप फ्रूट)	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर	२०×२०
जामुन	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
नारियल	बरसात में	फल से	२०×२०
नासपाती	पौष-माघ	चश्मा (Ring grafting)	२०×२०

फल प्राप्ति का समय	पौध लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टिसे पौधों के फलने की अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
मार्गशीर्ष से माघ-फाल्गुन	४—५		
वैशाख ज्येष्ठ से श्रावण-भाद्रपद	७—८		
करीब साल भर	१—२	५—६	एक पेड़ एक ही बार फलता है परन्तु पास में जो नए पौधे निकलते रहते हैं। वे फल जाते हैं।
ज्येष्ठ आषाढ़ से आश्विन	१५—२०	७०—८०	
ज्येष्ठ	१०—१२		कहीं-कहीं फाल्गुन चैत्र में भी फल मिलते हैं।
ज्येष्ठ से भाद्रपद	८—१०		
ज्येष्ठ-आषाढ़	१४—१५		
भाद्रपद से कार्तिक कलमी	५—६		
आषाढ़	१०—१२		
जाड़े में	५—६	७५—८०	
आषाढ़-भाद्रपद	६—७		

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है ?	पौधों का अन्तर
			फुट
नीबू	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज या गूटी	१५ × १५
पपीता	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज	१० × १०
बेर	बरसात में या जाड़े के आरम्भ में	बीज या चश्मा (Ring grafting)	२० × २०
बेरी-गूज	बरसात के अन्त में	बीज से	२ × ३
बेरी-स्ट्रा	जाड़े के आरम्भ में	जड़वाली लता (Runners)	१$\frac{1}{4}$ से १$\frac{1}{2}$
बेल	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
रामफल	बरसात में	बीज	१५ × १५
लीची	बरसात में	गूटी या दाब-कलम	२५ × २५
लोकाट	जाड़े के अन्त में	बीज गूटी या भेंट कलम	२० × २०
शरीफा	बरसात में	बीज	१५ × १५
शहतूत	बरसात में	डाली से	(एक-दो पेड़)
संतरा (माल्टा मौसमी)	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर या बीज से	१८ × १८
सपाटू (चीकू)	बरसात या जाड़े में	भेंटकलम	२५ × २५
सेव	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५ × १५

फल-प्राति का समय'	पौधे लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
श्रावण-भाद्रपद	बीजू ६—७	३०—४०	
पौष-माघ	कलमी ३—४	१५—२०	
जाड़े के अन्त में	१—१½	३—४	
माघ से चैत्र	बीजू १०—१२		
	कलमी ६—७		
पौष से फाल्गुन	३-४ महीने में	१	पहाड़ों पर पौधे आश्विन-कार्तिक में लगाये जाते हैं ।
चैत्र-वैशाख (मैदान)	(चार-पांच महीने में)	१	
माघ-फाल्गुन (पहाड़)			
गरमी में	७—८		
गरमी में	७—८		
ज्येष्ठ-आषाढ़	५—६	१५—२०	
फाल्गुन-चैत्र	५—६	३०—४०	
श्रावण-भाद्रपद से	५—६	१५—२०	
कार्तिक-अगहन			
चैत्र-वैशाख	३—४		
कार्तिक से पौष	बीजू १०-१२	४०—५०	
चैत्र-वैशाख	कलमी ४—५	१५—२०	
चैत्र-वैशाख	५—६	२०—२५	
कार्तिक से माघ	६—७		

२—मुख्य-मुख्य फलों के पोषक द्रव्य*

ये अंक फलों का जो अंग उपयोग के योग्य होता है उसके हैं। स्मरण रहे कि ये मात्राएं फलों की जाति, आयु, जलवायु तथा भूमि की जाति अनुसार न्यूनाधिक हो सकती हैं। तुलनात्मक दृष्टि से ये अंक उपयोगी होंगे।

नाम फल	जल	आमिष जातीय	सर्करा जातीय	स्नेह	तन्तुयुक्त	खनिज द्रव्य		
						स्फुर (P)	के० (Ca)	लो० (Fe)
	%	%	%	%	%	%	%	%
अखरोट	४.८	१५.६	११.२	६४.५	२.६	०.३८	०.१०	.००४८
अंगूर नीले	८५.५	०.८	१०.२	०.१	३.०	०.०२	०.०३	.०००४
अंजीर ताजे	८०.८	१.३	१७.१	०.२	—	०.०३	०.०६	.००१२
अनानास	८६.५	०.६	१२.०	०.१	—	०.०१	०.०२	.०००९
अमरूद	७६.१	१.५	१४.५	०.२	६.९	०.०४	०.०१	.००१०
अनार	७८.०	१.६	१४.६	०.१	५.१	०.०७	०.०१	.०००३
आड़ू	९०.१	१.५	७.६	०.२	—	०.०३	०.०१	.००१७
आम	८६.१	०.६	११.८	०.१	१.१	०.०२	०.०१	.०००३
आलूबुखारा	८९.८	०.७	८.९	०.२	—	०.०२	०.०२	.०००६
आंवला	८१.२	०.५	१४.१	०.१	३.४	०.०२	०.०५	.००१२
इमली	२०.९	३.१	६७.४	०.१	५.६	०.११	०.१७	.०१०९
कटहल	७७.२	०.७	१८.९	०.१	१.१	०.०३	०.०२	.०००५
कमरख	९३.९	०.५	४.८	०.२	०.४	०.०१	०.०१	.०००६

काजू	५.९	२१.२	२२.३	४६.९	१.३	०.४५	०.०५	.००५०
केला	७३.४	१.१	२४.७	०.१	—	०.०३	०.०१	.०००५
खजूर	२६.१	३.०	६७.३	०.२	२.१	०.०८	०.०७	.०१०६
चकोतरा	८८.०	०.६	१०.२	०.१	०.६	०.०३	०.०३	.०००१
जामुन	७८.२	०.७	१९.७	०.१	०.९	०.०१	०.०२	.०००१
तेंदू	७९.६	०.८	१९.०	०.२	—	०.०१	०.०१	.०००३
दाख	१८.५	२.०	७७.३	०.२	—	०.०८	०.१०	.००४०
नारियल (गिरी)	३६.३	४.५	१३.०	४१.६	३.६	०.२४	०.०१	.००१७
नासपाती	८६.९	०.२	११.५	०.१	१.०	०.०१	०.०१	.०००७
नीबू कागजी	८४.६	१.५	१०.९	१.०	१.३	०.२	०.०९	.०००३
नीबू जमेरी	८५.०	१.०	११.१	०.९	१.७	०.०१	०.०७	.००२३
पपीता	८९.६	०.५	९.५	०.१	—	०.०१	०.०१	.०००४
पिश्ता	५.६	१९.८	१६.२	५३.५	२.१	०.४३	०.१४	.०१३७
बादाम	५.२	२०.८	१०.५	५८.९	१.७	०.४९	०.२३	.००३५
बेर	८५.९	०.८	१२.८	०.१	—	.०३	०.०३	.०००८
मकोय	८२.७	१.८	११.५	०.२	३.२	०.०६	०.०१	.००१
रामफल	७७.७	१.४	२०.९	०.२	—	०.०१	०.०१	.०००६
लोकाट	८७.४	०.७	१०.२	०.३	०.९	०.०२	०.०३	.०००७
सन्तरा	८७.८	०.९	१०.६	०.३	—	०.०२	०.०६	.०००१
सीताफल	७३.५	१.६	२३.९	०.३	—	०.०४	०.०२	.००१०
सेव	८५.९	०.३	१३.४	०.१	—	०.०२	०.०१	.००१७
स्ट्राबेरी	८७.८	०.७	९.८	०.२	१.१	०.०३	०.०३	.००१८

*ये अंक एकरायड महोदय के हेल्थ बुलेटिन नं. २३, १९४१से लिये गये हैं।

३—फल और खाद्योज (विटामिन्स)

उत्तम स्वास्थ्य के लिए प्राणियों के आहार में एक प्रकार के वह पदार्थ रहते हैं जिन्हें 'खाद्योज या विटामिन्स' कहते हैं। ये होते तो हैं बहुत सूक्ष्म मात्रा में; परन्तु इनका भोजन में होना अत्यन्त ही आवश्यक है। इसके अभाव में न तो शरीर की बाढ़ ही अच्छी होती है और न बनावट ही। व्याधियों से बचने की शक्ति घट जाती है और सूखा, बेरीबेरी, स्कर्वी, पेलेग्रा और कई प्रकार की व्याधियां आक्रमण कर बैठती हैं।

खाद्य वस्तुएं अनेक हैं और हमारा भोजन भी विशेष नहीं तो पांच-सात वस्तुओं के मिश्रण का अवश्य होता है : जैसे आटा, दाल, चावल, दूध, घी, मट्ठा, फल, सब्जी, मास, मछली इत्यादि।

खाद्योज के गुण की जांच से यह ज्ञात हुआ है कि भोज्य वस्तुओं को पकाने से खाद्योज का अंश नष्ट हो जाता है। उपर्युक्त वस्तुओं में फल ही ऐसे हैं, जो बिना पकाये काम में लाये जाते हैं। इनके खाद्योज पूर्ण मात्रा में शरीर को मिल जाते हैं। यही कारण है कि जो लोग भोजनोपरान्त फलों का सेवन करते रहते हैं, उनका स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है।

खाद्योज कई प्रकार के हैं और उनका नामकरण अधिकतर अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों से किया हुआ है जैसे खाद्योज 'ए', 'बी', 'सी', इत्यादि।

यहांपर हमारा प्रयोजन फलों के खाद्योज से है और उन्हींपर हमें विचार करना है। परन्तु इसके पहले कि हम भांति-भांति के फलों में उनकी न्यूनाधिकता का विचार करें, संक्षेप में प्रत्येक के गुणों को जान लेना चाहिए ताकि पाठकों को उनका महत्त्व ज्ञात हो जाय।

खाद्योज 'ए'—इनका सम्बन्ध आंख की रोशनी से बहुत है। इनके अभाव में आंखें कमजोर हो जाती हैं और किसी-किसी को तो रतौंधी आने लग जाती है। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो रंग नहीं पहचान सकते। उसका भी मुख्य कारण इस खाद्योज का अभाव या कमी है। इनके सिवाय निम्नलिखित

लक्षण पाये जायं तो समझना होगा कि हमारे शरीर में खाद्योज 'ए' की कमी है।

आंखों का फूलना, सिर में दर्द रहना, बालों की चमक का कम पड़ना अथवा उनका गिरना, त्वचा में रूखापन, थोड़े परिश्रम से थक जाना, बार-बार सर्दी लग जाना, खांसी आना, दांतों का खराब हो जाना और गिर जाना, बच्चों की बाढ़ का रुकना और वजन नहीं बढ़ना, उनके फेफड़े या अन्तड़ियों का बिगड़ना, फुंसी इत्यादि।

ऐसे लक्षण दिखाई दें तो उन पदार्थों का सेवन विशेष करना चाहिए जिनमें खाद्योज 'ए' अधिक हो।

यथार्थ में देखा जाय तो फलों में खाद्योज 'ए' तो नहीं होते; परन्तु उनका अग्रगामी केरोटीन (Carotene) नाम का पदार्थ होता है, जिससे यकृत (कलेजा) खाद्योजा 'ए' बना लेता है।

खाद्योज 'ए' निम्नलिखित फलों में पाये जाते हैं। यह सूची खाद्योज के परिमाणानुसार दी है; अर्थात सबसे पहले फल में अधिक तथा आखिरी फल में कम खाद्योज होंगे। अन्य खाद्योजों की सूची में भी यही क्रम रहेगा।

खुबानी, आम, पपीता, तेन्दु, पीला आड़ू, स्ट्राबेरी, कटहल, सन्तरा, लाल केला, अंजीर, पिश्ता, कमरख, आलूबुखारा, चकोतरा, कच्चा आम, केला, तरबूज, काजू, इमली, बेर, आनानास, कागजी नींबू, अंगूर, नासपाती, अखरोट इत्यादि।

खाद्योज 'बी'—इनके अभाव से बेरीबेरी नाम की व्याधि आक्रमण कर बैठती है। जब शरीर निर्बल होता नजर आये, स्मरण-शक्ति कम हो जाय, सिर में और अन्य अंगों में दर्द हो, हाथ-पैर में जलन अथवा बार बार झिन-झिनी आये, पैर और मुहं फूल जायं, कब्ज़ियत रहे, श्वास जल्दी-जल्दी चलने लगे, दिल की धड़कन बढ़ जाय, स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाय तो समझना चाहिए कि हमारे शरीर को खाद्योज 'बी' की आवश्यकता है।

खाद्योज 'बी' निम्नलिखित फलों में पाये जाते हैं—अखरोट, बादाम, आम, संतरा, आनानास, खुबानी, खजूर, पपीता, अंजीर, खरबूजा, तरबूज,

आलूबुखारा, अंगूर, केला, सेव, नीबू, पीला आड़ू, नासपाती, स्ट्राबेरी।

खाद्योज 'सी'—इनके अभाव में स्कर्वी नाम की व्याधि हो जाती है। दान्तों की पेढ़ियों का फूलना, उनमें घाव का होना अथवा दान्तों का जल्दी गिरना, दान्तों से खून का बहना, श्वास में बदबू आना, जीभ का फूल जाना, मुंह पर छोटी फुन्सियों का होना, त्वचा का रूखापन, आंखों में दर्द, भूख की कमी, कब्जियत रहना, तिल्ली का बढ़ जाना, स्त्रियों में मासिक स्राव की अधिकता और कमजोरी इत्यादि लक्षण खाद्योज 'सी' की कमी या अभाव दर्शाते हैं।

निम्नलिखित फलों में खाद्योज 'सी' पाये जाते हैं:

आंवला, अमरूद, संतरा, कागजी नीबू, आनानास, स्ट्राबेरी, मकोय, पपीता, जमेरी नीबू, चकोतरा, अनार, आम पक्का, केला, नासपाती, कच्चा आम, नीले अंगूर, सेव, अंजीर, तरबूज, आड़ू आलूबुखारा।

खाद्योज 'डी'—हड्डियों की बनावट में इनका बहुत हाथ है। बच्चों को जो सूखा रोग हो जाता है, वह खाद्योज 'डी' के अभाव से ही होता है। हड्डियां कमजोर हो जाती हैं। दांत ठीक से नहीं बन पाते, सिर बड़ा हो जाता है, पसलियां दब जाती हैं, पेट निकल आता है और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। खाद्योज 'डी' फल[illegible] हीं के बराबर ही होते हैं; परन्तु चूंकि ये मुख्य खाद्योजों में से हैं इसलिए इनका वर्णन यहां दिया गया है।

खाद्योज 'जी'—इन्हें खाद्योज बी$_2$ भी कहते हैं। इनका दूसरा नाम 'ब्यूटी विटामिन्स (अर्थात् सुन्दरता लानेवाले खाद्योज) भी हैं। इनके अभाव से पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है, कमजोरी मालूम पड़ती है, वजन घट जाता है, मुंह और नाक के पास की चमड़ी फट जाती है और मोतियाबिन्द या आंख में फूले की व्याधि हो जाती है।

खाद्योज 'जी' निम्नलिखित फलों में पाये जाते हैं—पपीता, खुबानी, केला, नासपाती, अंजीर, सेव, आम, पीले आड़ू, ताजे जरदालू, खजूर, ताजे अंजीर, आलू बुखारा, अनानास, तरबूज, सन्तरा।

४--भिन्न-भिन्न प्रान्तों के विख्यात फल

नाम प्रांत	नाम फल
आसाम	अनानास, केला, सन्तरा ।
काश्मीर	अलूचा, खुवानी, नासपाती, सेब ।
पंजाब	माल्टा, सेव ।
बंगाल	केला, नारियल, तरबूज, सन्तरा ।
बंबई	अंगूर, अंजीर, अनार, आम काजू, केला, मोसम्बी, सपाटू ।
बिहार	आम, लीची ।
मध्यप्रदेश	बेर, सन्तरा ।
मद्रास	अंगूर, अनानास, आम, केला, नारियल, नाशपाती सन्तरा, स्ट्राबे ी ।
उत्तर प्रदेश	आनानास, अमरूद, आम, खरबूजा, खुबानी, तरबूज, नाशपाती, लीची, लोकाट, सेव, स्ट्राबेरी ।
हैदराबाद	अंगूर, सन्तरा ।

: ४ :

सर्वे सेटलमेण्ट

सर्वे का अर्थ है नापना और सेटलमेंट का अर्थ है शर्तें ठीक करना—भूमि की नपती कर उसका मान-चित्र बनाने तक की क्रिया सर्वे कहलायगी और भूमि-कर या लगान की शर्त तय करना सेटलमेंट होगा । यह शर्त भूमि की जाती जो उसके रंग, गहराई, तथा स्थान की स्थिति देखकर ठीक की जाती है। इनके सिवाय भूमिकर-मूल्यांक में सिंचाई की सुविधा, माल के चालान या बिक्री की सरलता आदि बातों का भी ध्यान रखा जाता है। सेटलमेंट दो प्रकार की होती है। एक स्थायी जिसमें एक बार जो कर लगा दिया हमेशा के लिए लगा रहा और दूसरी अल्पकालीन । दूसरी में लगान एक सेटलमेंट की अवधि के बाद घटाया-बढ़ाया जा सकता है। जमींदारी-उन्मूलन के बाद अब पहली प्रकार की सेटलमेंट का सफाया हो गया है।

१—भूमि नापने और मानचित्र बनाने के लिए काम में लाये जानेवाले यंत्र—

जरीब (चेन) १ छियासठ फुट वाली, सूआ १०, झड़ियां ५, लट्ठा १ (Offset rod), राइट एंगल (Optical square) १, फील्ड बुक १, प्लेन टेबल १, लेवल १, दिशाज्ञान यंत्र (Magnetic needle) १, सुहावल (Swival) १, शिस्त (Alidade) १, प्रकार १, पैमाना १, (Diagonal scale) १, गुनिया (Ivory scale) १, कंघी (Acre comb) १।

उपर्युक्त के सिवाय दो चीज और काम की हैं। प्लानी मीटर—इससे क्षेत्रफल मालूम करते हैं और दूसरा पेंटो ग्राफ, जिससे बड़े नक्शे से छोटा

और छोटे से बड़ा आसानी से बन सकता है। इसमें एक जगह ऐसी होती है जिसमें एक पेंसिल लगा दी जाती है और एक ओर जगह होती है जिसमें पेंसिल के आकार की पिन होती है। जब यह पिन किसी मान-चित्र पर घुमाई जाती है तो पेंसिल से दूसरे कागज़ पर जितना चाहिए उतना बड़ा मानचित्र उसी आकार का बन जाता है ।

चेन—यह एक सौ कड़ीवाली छंछट फुट लम्बी होती है। इसीसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक की दूरी नापी जाती है।

सूआ—चेन खींचनेवाला व्यक्ति जहां चेन पूरी होती है एक सूआ गाड़ता जाता है। इससे कितनी चेन हुई गिनने में भूल नहीं होती । चेन के पीछे चलनेवाला व्यक्ति सूआ उठाता जाता है। जब दस सूए पूरे हो जाते हैं तो फिर चेन खींचनेवाले को दे देता है।

झंडियां—एक स्थान से दूसरे स्थान तक नापते समय, स्थान ठीक से दिखे, इसलिए झंडियां, जो बांस या लकड़ी की बनी होती है, गाड़नी पड़ती है। ये आवश्यकतानुसार छः फुट से लेकर ग्यारह फुट ऊंची हो सकती है। इनके छोर पर तीखा लोहा लगा रहता है जिससे ये सरलता से गाड़ी जा सकती है। इनके ऊपरी भाग पर आधा लाल और आधा सफेद कपड़े की झंडियां रहती हैं ।

लट्ठा या आफसेट रॉड—चेन-लाइन से दायें-बायें एक चेन से कम दूरी के स्थानों की दूरी नापने के लिए काम में लाया जाता है। यह करीब दस फुट लम्बा होता है और इसपर कड़ियों की दूरी के चिन्ह रहते हैं।

राइट एंगल—चेन-लाइन के दायें-बायें स्थान की दूरी नापते समय यह देखना होता है कि वह स्थान चेन-लाइन से समकोण पर है। चेन पर समकोण कहां से होगा इसे जानने के लिए यह यंत्र काम का है।

फील्ड बुक—यह एक नोट-बुक होती है जिसमें पैमाइश करने-वाले नाप तथा अन्य आवश्यक बातें लिखते रहते हैं और उन्हींके आधार पर नक्शे बनाते हैं। इसीके आधार पर मानचित्र बनता है ।

बायाँ	जरीब	दायाँ
८०	३२०	
७०	२४०	रेल सड़क
	१६१	
	१०९	२५
	७५	
५०	६५	
५०	४०	
		पूर्व की ओर
८०	५०१	
६०	४५०	
	३२०	
नदी	२४९	सडक
१०	२००	
२०	११५	३०
४०	६०	
	७५	२५
	२०	

उत्तर को जाओ
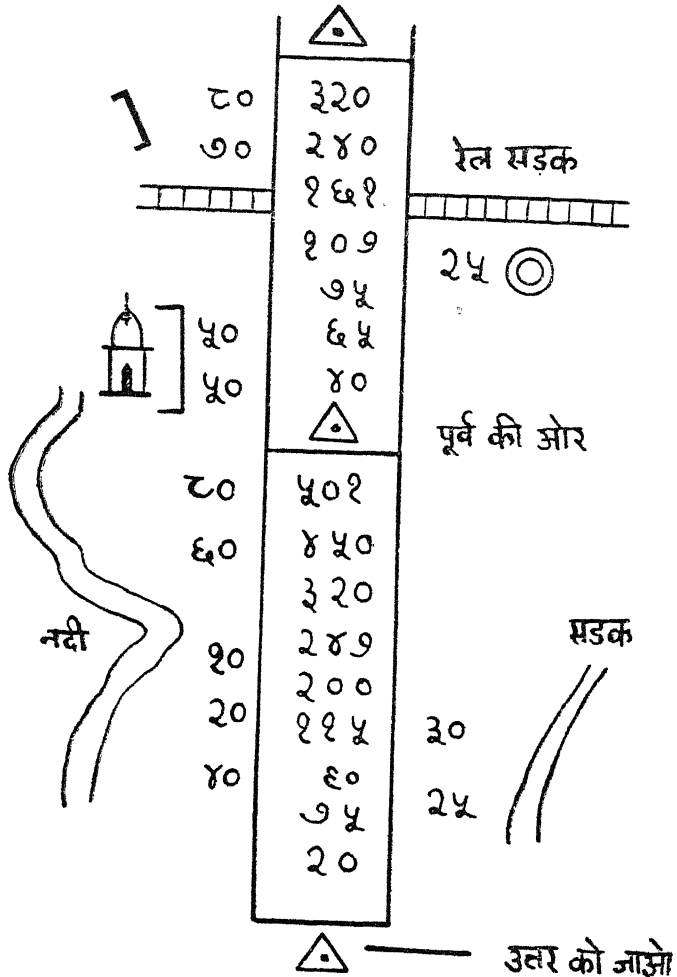
फील्डबुक का नमूना

मानचित्र—भूमि की नपती के बाद फील्ड-बुक के आधार पर मान-चित्र बनाया जाता है जिसमें सीमा, सड़कें, खेत तथा मुख्य-मुख्य स्थान बनाये जाते हैं। इसके लिए प्लेन टेबल पर मान-चित्र का कागज़ लगाकर सर्वे का कार्यारम्भ होता है।

प्लेन टेबल—यह एक ३०″ × २४″ आयताकार तख्ता होता है जिसे स्क्रू द्वारा एक तिपाई पर कस देते हैं। तिपाई के पांव ऐसे बने हुए होते हैं कि टेबल को सम धरातल में लाने के लिए उन्हें आगे-पीछे कर सकते हैं। टेबल का समतल होना लेवल से देखा जाता है। टेबल के कागज पर एक ओर रेखा खींचकर उसे दिशाज्ञान-यंत्र के बराबर रखकर उससे उत्तर दिशा का ज्ञान कर उस रेखा के एक छोर पर उत्तर दिशा जानने के लिए चिन्ह लगा देते हैं।

जिस स्थान से सर्वे प्रारम्भ करना होता है उस स्थान पर टेबल खड़ी करके टेबल पर एक बिन्दु लगा देते हैं। टेबल पर का बिन्दु उसके नीचे की भूमि पर ठीक नीचे है या नहीं जानने के लिए सुहावल लटका कर देख लेते हैं। प्लेन टेबल में शिश्त बड़े काम की चीज है। यह एक पीतल की पटरी लगभग दो फुट लम्बी और एक इंच चौड़ी होती है और दोनों छोर समकोण बनाते हुए ऊपर को उठे हुए होते हैं। इन उठे हुए भागों में से एक में ऊपर से नीचे तक कटा हुआ भाग होता है। इस कटे हुए भाग के बीचों-बीच ऊपर से नीचे तक एक बाल या महीन तार लगा हुआ होता है। दूसरे छोर पर तार न होकर महीन छिद्र होते हैं। जब नक्शे पर किसी स्थान की सीध कायम करनी होती है तो उस स्थान पर झंडी गाढ़कर टेबल पर लगाई हुई शिश्त के छिद्रों द्वारा उस झंडी को देखते हैं। जब सामने का तार झंडी की आड़ में आ जाता है तो वह सीध मान कर शिश्त के द्वारा रेखा खींच दी जाती है। ऐसे दूर की झंडियों के मार्ग रेखा द्वारा नक्शे पर बनाकर उनकी दूरी नापकर निर्धारित स्केल (जो साधारणतः १६″=१ मील) के आधार पर उसपर चिन्ह लगा देते हैं और उन चिन्हों को जोड़ देते हैं तो चौहद्दी या सीमा बन जाती है। फिर छोटे टुकड़े नापते जाकर फील्ड बुक में

व्योरा लिखते जाते हैं और कम्पास, डायगोनल स्केल और गुनिये की सहायता से खेत इत्यादि स्थान बना देते है ।

मान-चित्र पूरा हो जाने पर खेतों का क्षेत्रफल कंघी द्वारा निकाल लेते हैं। कंघी एकड़-कंघी या बीघा-कंघी जैसी चाहे बनवा ली जाती है ।

एकड़ वाली कंघी एक आयताकार चौखटा होता है जो लगभग छः इंच लम्बा और चार इंच चौड़ा होता है। इस चौखटे की चौड़ाई ऊपर की ओर लगभग एक इंच होती है जिसपर एक पैमाना बना हुआ होता है। चौखटे की लम्बाई की ओर ऊपर-नीचे बराबर की दूरी पर छेद होते हैं। यह दूरी ३/२ इंच होती है । ठीक आमने-सामने के छेदों में से निकलता हुआ एक डोरा बांधा जाता है। क्षेत्र-फल निकालने के लिए इस कंघी को मान-चित्र पर रख देते हैं और प्रकार को धागों के बीच में रखकर खेत की सीमा तक बढ़ाते जाते हैं । जब जितना अधिक बढ़ सके बढ़ जाता है तो कंघी के पैमाने पर रखकर क्षेत्र-फल जान लेते हैं।

मान-चित्र पक्का बना रहे इसलिए कागज पर से ट्रेसिंग कपड़े पर उसे उतार लेते हैं।

२--सर्वेवालों के जानने योग्य कुछ उपयोगी बातें

(१) **चेन से लम्ब डालना**--यदि राइट एंगल पास में न हो और आफ-सेट डालना पड़े तो निम्नलिखित रीति से डाल सकते हैं। चेन के मार्ग पर लम्ब डालने के स्थान से तीस कड़ी दूर दोनों ओर दो सूए गाढ़ दो और उनमें चेन के दोनों दस्ते डाल दो। फिर चेन को बीचों-बीच से पकड़कर जिस ओर लम्ब डालना हो खींचो और जहां वह पड़े वहां तीसरा सूआ गाढ़ दो । यह स्थान वह होगा जिस पर लम्ब पड़ेगा ।
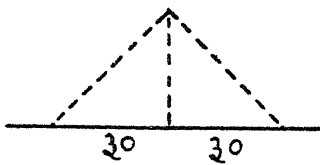
दूसरी रीति--चेन के मार्ग में लम्ब डालने के स्थान से तीस कड़ी पर एक सुआ गाढ़ दो और दूसरा लम्ब के स्थान पर गाढ़ दो। फिर चेन के

दोनों दस्तों को सूओं में डालकर चालीस कड़ी पर के चिन्ह को पकड़कर खींचो ताकि चेन तन जाय। जिस स्थान पर चालीस कड़ी वाला चिन्ह पड़ेगा वह लम्ब पर होगा।
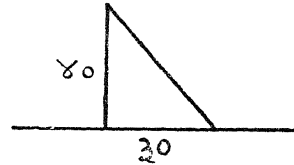
(२) चेन की राह में आये हुए अटकाव को पार करना—

यदि चेन की राह में कोई ऐसा अटकाव आ जाय जैसे मकान, और जिसकी वजह से सामने की झंडी नहीं दिखलाई दे तो निम्नलिखित रीति से काम करना चाहिए।

जहांतक झंडी दिखे उस स्थान तक नापते जाओ और फिर उसपर एक लम्ब-कोण डालो जो मकान की सीमा से बाहर हो जाय। ख पर
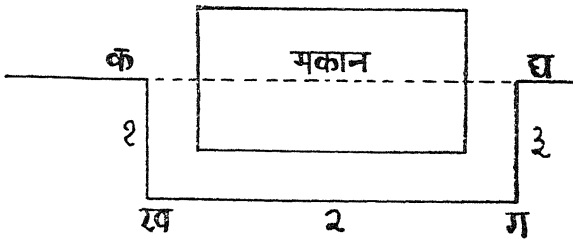
दूसरा लम्ब ख ग डालो और ग पर ग घ लम्ब डालो जो लम्बाई में क ख के बराबर हो फिर घ स्थान पर दूसरी झंडी गाड़कर आगे बढ़ चलो। इस ख ग की दूरी क घ की दूरी के बराबर होगी।

इसी भांति यदि तालाब या अन्य कोई रुकावट आ जाय तो उसे भी पार किया जा सकता है।

(३) नदी की चौड़ाई नापना—मान लो क ख अपनी चेन का मार्ग है। ठीक सामने दूसरे किनारे पर कोई निशान पत्थर या पेड़ का चुन लो। ख पर ख ग लम्ब डाल कर उसे घ तक इतना बढ़ाओ कि ग घ की लम्बाई ख ग के बराबर हो, फिर घ पर लम्ब डाल कर ऐसे स्थान पर चैले

जाओ जहां से ग और सामने के किनारे वाला चुना हुआ पेड़ सीध में हो
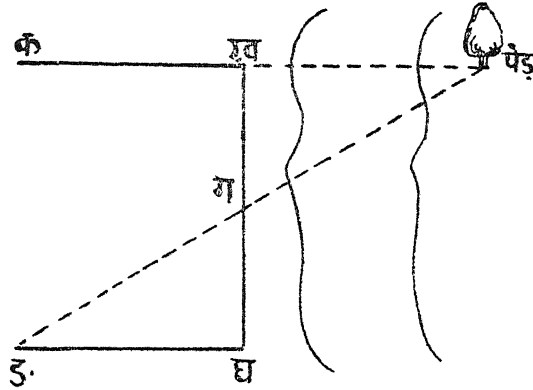
जाय। घ ङ को नाप लो। वह दूरी नदी के पार के बराबर होगी।

(४) **ढालू भूमि नापना**——लट्ठे की नोक पर एक रस्सी बांध कर उसमें एक वजन लटका दो। लट्ठे को सीधा रखते हुए रस्सीवाला छोर हाथ में रखो। जहां लट्ठे की दूसरी नोक छू जाय वहां जाकर फिर उसी भांति नापते जाओ। जितने लट्ठे नपेंगे उन्हें लट्ठे की लम्बाई से गुना करने से उस स्थान की लम्बाई ज्ञात हो जायगी और यदि रस्सी की लम्बाई भी अर्थात् सतह से लट्ठे
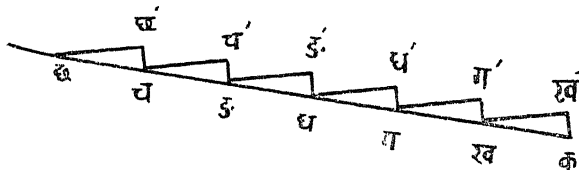
की ऊंचाई तक नापते गये तो उस स्थान की ऊंचाई भी ज्ञात हो जायगी।

(५) **पेड़, मीनार या भवन की ऊंचाई निकालना**—पेड़ या मीनार की सतह से कुछ दूरी पर लट्ठा ख घ खड़ा कर दो फिर उससे
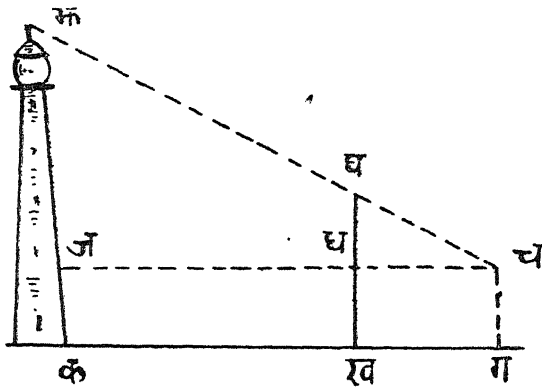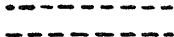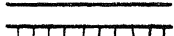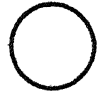
उतनी दूर जाओ कि जिसमें अपनी आंख लट्ठे की नोक (घ) और मीनार की चोटी (झ) एक सीध में हो जाय। फिर जमीन पर भी दूरी क ख और क ग नाप लो फिर निम्नलिखित सूत्र से गणना करने से ऊंचाई ज्ञात हो जायगी

च ध : ध घ :: च ज : ज झ

मान लो च ध ८ फुट है और ध घ ६ फुट और च ज ४० फुट है तो ज झ $\frac{६ \times ४०}{८} = ३०$ फुट होगा। इसमें जमीन से नापनेवाले की आंख तक की ऊंचाई जोड़ देनी चाहिए। मान लो आदमी की ऊंचाई ५$\frac{१}{४}$ फुट है तो आंख पांच फुट की ऊंचाई पर होगी। इसलिए उस मीनार की ऊंचाई ३० + ५ = ३५ फुट होगी।

३—मानचित्रों में दिखाये जानेवाले सांकेतिक चिन्ह

कच्चा रास्ता

कच्ची सड़क

पक्की सड़क

रेल की सड़क

पुल

पक्का कुआ

कच्चा कुआ

बेकार कुआ

सरहदी नदी

नाला सरहदी

बीड़

चरनोई

बस्ती

रेत

श्मशान

कबरि-
स्तान

मंदिर

मसजिद

बाग

उपर्युक्त वर्णन चेन तथा प्लेन टेबल सर्वे का है। सर्वे और भी यंत्रों से की जाती है जैसे कम्पास सर्वे, थीडियो लाइट सर्वे इत्यादि। परन्तु कृषकों के काम की न होने से यहां उनका वर्णन नहीं दिया जाता ।

: ५ :

समतल करना

भूमि बहुधा ऊंची-नीची होती है; समतल स्थान बहुत कम जगह पाये जाते हैं। खेती के लिए बहुधा भूमि समतल करना पड़ती है। इसके सिवाय खेतों और पानी की नालियों में ढाल देना अथवा सड़कें और नहरों के लिए एक उचित निष्पत्ति का ढाल देना पड़ता है। यद्यपि समतल का शब्दार्थ एक सतह में लाने का है परन्तु व्यावहारिक रूप में जमीन के ऊंचे-नीचे स्थानों को नापकर मान-चित्र में उनकी ऊंचाई-गहराई दिखाना, आवश्यकतानुसार नालियों में या जमीन में ढाल लाना इत्यादि सब क्रियाएं इस शब्द से संबंध रखती हैं।

साधारणतः पृथ्वी के विभिन्न भागों की ऊंचाई समुद्र के जल-तह से गिनी जाती है। भूमि के छोटे-मोटे टुकड़ों की ऊंचाई उनको समतल करने के लिए एक मानसिक रेखा मानकर उसके आधार पर ऊंचाई का नाप लिखा जाता है। इस कार्य के लिए निम्नलिखित यंत्र काम में लाये जाते हैं।

चेन—साधारणतः सौ फुट की—

अंकित स्टाफ—यह एक प्रकार का पैमाना होता है जो तीन भागों में होता है और पहले में दूसरा और दूसरे में तीसरा डाला हुआ रहता है। ऊंचाई की आवश्यकतानुसार दूसरे-तीसरे को खींचकर ऊंचा कर लेते हैं। पहला पाँच फुट लम्बा और दूसरा-तीसरा ४.५ फुट लम्बे होते हैं। इन पर फुट और इंच के चिन्ह अंकित होते हैं।

लेवल लेने के यंत्र

(१) **स्पिरिट लेवल**—राज लोग इसे काम में लाते हैं। यह लकड़ी और पीतल के केस में एक कांच की नली होती है, जिसमें स्पिरिट भरा होता है और एक बबूला हवा का छोड़ देते हैं। इसे जब किसी चीज पर रखा जाय और वह समतल होगी तो बबूला नली के बीच में रहता है। जब समतल नहीं होती तो बबूला ऊंचाई की ओर दौड़ जाता है।
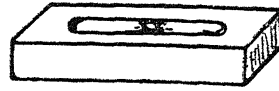
(२) नीचे दिये हुए प्रकार का यंत्र भी लेवल जांचने के काम आता
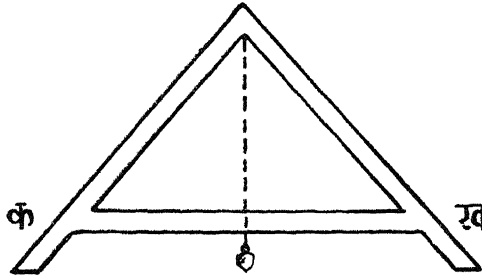
है। जब रस्सी से बंधा हुआ लटकण क ख वाली पटड़ी के बीचों-बीच होता है तो भूमि की धरातल सम होगी। ऐसा लेवल ढाल देने में बड़े काम का है। जितना ढाल देना है उतना देकर इस यंत्र की क ख पटड़ी पर जहां लटकण की रस्सी छुए चिन्ह लगा देना चाहिए। फिर जहां उतना ढाल देना हो इसे रखकर देख सकते हैं।

(३) **डम्पी लेवल**—यह एक नालीदार यंत्र होता है, जिसे तिपाई पर जमाकर लेवल में कर लेते हैं। इस नली के सामने के भाग में दो खड़े तार और उनके बीचों-बीच से काटता हुआ एक आड़ा तार रहता है। दूसरी ओर लेन्स लगा हुआ देखने का छेद रहता है। जहां की ऊंचाई-नीचाई देखना हो वहां अंकित स्टाफ लेकर एक व्यक्ति खड़ा हो

जाता है और यंत्र द्वारा देखकर उस स्टाफ को दो तारों के बीच में करके जहांपर बीच का तार पड़ता है वे अंक लिख लिये जाते हैं। वे अंक उलटे दिखते हैं, थोड़ा महावरा हो जाने से आसानी से पढ़े जा सकते हैं। ऐसे यंत्र से सौ गज की दूरी से आसानी से पढ़ी जा सकती है।

दो निकटवर्ती स्थानों की ऊंचाई-नीचाई जानना
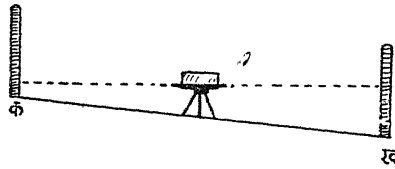
क और ख स्थान के बीच लेवल यंत्र को खड़ा कर क पर स्टाफ लेकर एक व्यक्ति खड़ा हो जाता है और लेवल द्वारा वहां का अंक पढ़ लिया जाता है। फिर लेवल को घुमाकर, जो तिपाई पर आसानी से घूम जाता है, ख स्थान की ऊंचाई पढ़ लो। मान लो पहला अंक १.२ फुट है और दूसरा ४.८ फुट है तो दोनों स्थानों की ऊंचाई में ३.६ फुट का अन्तर हुआ और दोनों स्थानों की दूरी २०० गज है तो इसका अर्थ यह होगा कि स्थान क ख से २०० गज की दूरी पर ३.६ फुट ऊंचा है।

जब बहुत दूर-दूर के स्थानों की ऊंचाई-नीचाई देखनी होती है तो चेन-लाइन पर लेवल को कई जगह खड़ा करके आगे-पीछे के स्थानों की ऊंचाई देखते हुए लिखते जाते हैं और फिर हिसाब करके लिख लेते हैं।
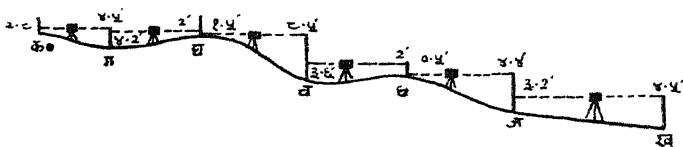
मान लो हमें क और ख की ऊंचाई का अन्तर जानना है तो उपर्युक्त दोनों स्थानों के बीच हमें कई जगह यंत्र खड़ा करना होगा और क, ग,

च, छ, ज, और ख स्थानों की ऊंचाई के अंक लिखने होंगे। एक से दूसरे स्थान् की दूरी भी लिखनी होगी।

उपर्युक्त चित्र से ज्ञात होगा कि हमारे दो स्थानों की दूरी के मार्ग में घ और छ स्थान चढ़ाव के और ग, च, ज, ख उतार के हैं। हम यदि चढ़ाई और उतराई के अंकों को अलग-अलग जोड़कर उनका अन्तर निकाल लें तो हमें ख से क की ऊंचाई का पता लग जायगा।

चढ़ाव	उतार
	ग ४-५—२.८=१.७′
घ ४.२—२=२.२′	च ८.५—१.५=७.०′
छ ३.६—२=१.६′	ज ४.४—०.५=३.९
	ख ४.५—३.२=१.३
३.८	१३.९

१३.९–३.८=१०.१′ अर्थात् क ख से १०.१′ ऊंचा है, दोनों स्थानों की दूरी मालूम होने से हम यह कह सकते हैं कि ख से क अमुक दूरी पर १०.१′ ऊंचा है।

मान लो उपर्युक्त स्थान में हमें सड़क बनाना है या नहर काटनी है तो हमें कहीं से मिट्टी काटनी होगी और कहीं भरनी होगी। कहां से कितनी मिट्टी कटेगी और कहां कितनी भरेगी यह निम्नलिखित चित्र से भली-भांति ज्ञात होगा।

इस कार्य के लिए हम ऐसी सीधी रेखा मान लेते हैं जो उपर्युक्त स्थानों की ऊंचाई या गहराई से अधिक गहरी हो। उपर्युक्त अंक से हम जानते हैं कि ख क से १०.१ फुट नीचा है तो हम ऐसी रेखा मानते हैं जो ख स्थान पर ५ फुट गहरी हो। ऐसी मानी हुई रेखा को 'डेटम' [१] रेखा कहते हैं। इस रेखा से प्रत्येक स्थान की ऊंचाई की गणना की जाय तो उतार-चढ़ाव का पता सरलता से लग जायगा।

---

१. यथार्थ में 'डेटम' रेखा उस मानी हुई रेखा या सतह को कहते हैं जिसके आधार पर ऊंचाई दिखलाई जा सके।

यदि हम क और ख स्थान को जोड़ दें तो हमें यह ज्ञात होगा कि कौन-

कौन से स्थान से मिट्टी कटेगी और कौन-कौन से स्थान में भरेगी। दोनों स्थानों की दूरी १३५०' है तो इस चित्र में ढाल १३५० फुट में १०.१ फुट का हुआ। अब हम जितना ढाल देना चाहें वैसी क ख रेखा बनाकर गणना करके मिट्टी काट या भर सकते हैं।
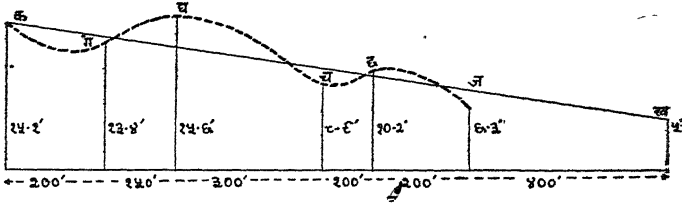
यह रीति सड़क या नहर बनाने के काम आती है परन्तु जहां पोखर या तालाब बनाना हो अथवा एक खास स्थान में कई जगह की ऊंचाई या गहराई जानना हो तो उसके लिए कई जगह यंत्र रखकर उन स्थानों की ऊंचाई निकालते हैं और सम ऊंचाईवाले स्थानों की रेखाओं से जोड़ते हैं। ऐसी रेखाएं कॉन्टूर कहलाती हैं। कॉन्टूर रेखाओं की जानकारी पहाड़ों की ऊंची-नीची भूमि पर बगीचों के पेड़ लगाने तथा उनकी सिंचाई के लिए नालियां बनाने में भी अच्छा काम देती है।

निम्नांकित तीन चित्रों से ज्ञात होगा कि पहले में ढाल एक कोने की ओर है। दूसरे में बीच की भूमि ऊंची है और तीसरे में बीच की भूमि नीची है। तीनों में क, ख, ग कॉन्टूर सम ऊंचाई के स्थानों को मिलाते हैं। इन कॉन्टूरों पर यदि सिंचाई की नाली बनाई जाय तो पानी उनसे नीचे की ओर जा सकेगा। यदि पेड़ लगाये जायं तो उस कॉन्टूर पर बनाई हुई नाली से सब पेड़ों को पानी मिलेगा।

ऐसे चित्रों से ऊंची-नीची भूमि को समतल करने अथवा ढालू बनाने में सहायता मिलती है।

समतल क्रिया भू-संरक्षण में भी आवश्यक होती है। कृषकों के

खेतों की उपजाऊ भूमि वर्षा के पानी द्वारा बह जाती है और कहीं-कहीं प्रकृति द्वारा यह क्रिया इतने वेग से भी होने लगती है कि खेतों में पानी से पहले छापरे
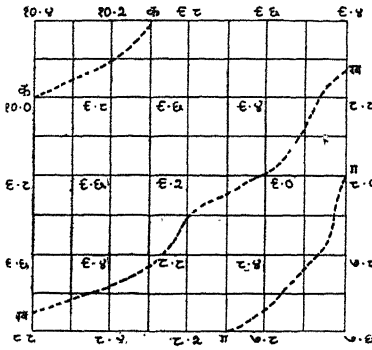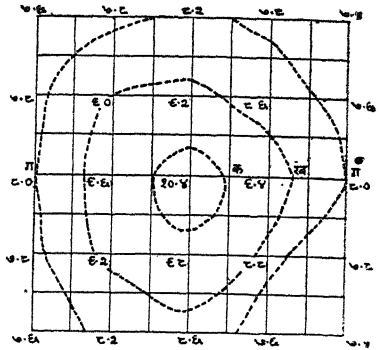
चित्र १ चित्र २
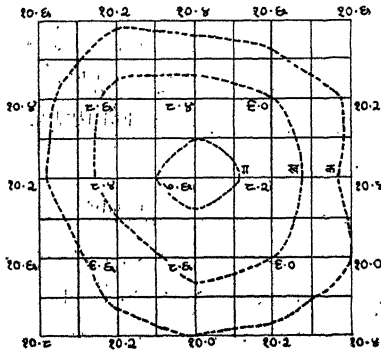
चित्र ३

और बाद में धीरे-धीरे छोटे नाले तक बन जाते हैं। ऐसी क्रियाओं से होनेवाली हानि को रोकना बहुत आवश्यक है। इसके लिए खेतों में जगह-जगह कॉन्टूर-बांध बांधने पड़ते हैं अर्थात् सम ऊंचाई-वाले स्थानों पर आवश्यकतानुसार फुट-डेढ़ फुट ऊंची पारियां बनाना होती हैं ताकि पानी के बहाव में कुछ रुकावट हो। वह संकड़ी जगह से न बहकर फैल कर बहे और चूंकि पारी के ऊपर से बहने से बहने के पहले उसके भूमिकण नीचे जम जायं। कहीं-कहीं ढाल पर समानान्तर पारियां बनानी होती हैं जिनपर घास जमने दी जाती है या फसलें (strip cropping) उगानी होती हैं। इन सबमें समतल करने की क्रियाओं की आवश्यकता होती है।

: ६ :

मकान और सड़कों-सम्बन्धी कुछ साधारण जानकारी

कृषि फार्म पर कुछ कच्चे-पक्के मकान, सड़कें, छोटी-छोटी पुलें, पक्की नालियां, अनाज भरने की भखारियाँ या खत्तियां इत्यादि बनवाना पड़ते हैं। इनकी लिपाई-पुताई या सफेदी कराने में कितने वर्गफुट काम होगा यह पीछे दिये हुए क्षेत्रफलों से निकाल सकते हैं और बनावट में कितने घन-फुट काम हुआ यह घन-फुट निकालने के सूत्रों से जाना जा सकता है। इनके सिवाय अन्य वस्तुओं की आवश्यकता का अनुमान निम्नलिखित जानकारी से हो सकता है।

ईंट—जिस नाप की चाहें बना सकते हैं। साधारणतः ९"×४" ×२.५" होती है।

१०० घन फुट की चुनाई के लिए उपर्युक्त नाप की १३०० से १४०० तक ईंट लगती है, जिसमें टूट-फूट शरीक है।

चूना—चूने का पत्थर जलाकर चूना बनाया जाता है। जिससे उन कंकरों में से कार्बन-डाइ-आक्साईड नाम की गैस निकल जाती है

बुझा हुआ चूना—पानी से ठंडा किया हुआ चूना।

कांक्रीट—लगभग डेढ़ इंच के छेद द्वारा गिर जानेवाले पत्थर के टुकड़े कांक्रीट होंगे।

नीम में भरने के लिए कांक्रीट चूने में मिलाकर भरी जाती है। इसके लिए एक भाग चूना, दो भाग रेत और चार भाग कांक्रीट मिलाकर आवश्यकतानुसार पानी से गीली करके काम में लानी चाहिए।

सीमेन्ट-कांक्रीट—एक भाग सीमेन्ट, तीन भाग रेती और छः भाग कांक्रीट।

ईंटों की चुनाई के लिए चूना—एक भाग चूना और दो भाग रेत मिलानी चाहिए।

सुर्खी-चूना मिश्रण—दो भाग चूने के साथ चार-पांच भाग सुर्खी मिलानी चाहिए। सुर्खी ईंट के टुकड़े पीसकर बनाई जाती है, अथवा मिट्टी के ढेले पकाकर बना लेते हैं।

दीवाल का प्लास्टर—सीमेंट एक भाग और महीन रेत चार भाग।

फर्श का प्लास्टर—सीमेंट एक भाग, रेत दो भाग, और बजरी चार भाग, मिलानी चाहिए।

१०० वर्गफुट प्लास्टर के लिए ३.२५ घन-फुट सीमेंट लगेगा। एक घन-फुट सीमेंट का वजन लगभग ४५ सेर होता है।

चूना या सफेदी कराना—एक मन चूने में ५००० वर्गफुट की सफेदी हो जाती है।

एक मन चूने में लगभग छः मन पानी, एक सेर गोंद और आधी छटांक नील डालनी चाहिए।

दो राज (सिलावट) और छः औरतें एक दिन में १०० घन-फुट चुनाई कर देंगे।

एक राज दो मजदूर के साथ १५० वर्गफुट का प्लास्टर कर सकता है।

एक मज़दूर ३०० वर्गगज़ की सफेदी एक दिन में कर सकता है।

सड़कें

फार्म पर कच्ची-पक्की सड़कें बनाना पड़ती हैं ताकि खेतों में खाद डालने अथवा फसल हटाने के लिए गाड़ियां या जुताई के भारी यंत्र खेतों में आसानी से जा सकें। ऐसी सड़कों पर कंकर-पत्थर डालकर उन्हें ऐसी बना लेनी चाहिए जिससे आवश्यकता पड़ने पर बरसात में भी काम दे सकें।

फार्म की सड़कें बनाने में इतना ध्यान रखना चाहिए कि वे सीधी, कम-से-कम लम्बाईवाली तथा प्रत्येक खेत के लिए उपयोगी हों। यदि कोई नाला बीच में पड़ जाय तो वहां उचित ढाल देने के लिए कुछ टेढ़ी करनी

पड़ती हैं। कहीं-कहीं ऐसे नालों में पत्थर की रफ्टे भी बनाना पड़ती है ताकि थोड़ा पानी उनपर से बहता रहे और गाड़ियां या कृषि के यंत्र भी सरलता से पार किये जा सकें।

सड़क-निर्माण के लिए फार्म पर घूमते हुए पहले नक्शे में उसके निशान लगा लेने चाहिए। फार्म की सड़कें आठ फुट चौड़ी काफी होगीं। सड़कों के दोनों ओर डेढ़-दो फुट घास जमने देनी चाहिए, ताकि सड़कें कट नहीं। घास के बाद बरसाती पानी के बहाव की नालियां भी होनी चाहिए। ऐसी नालियां दो-ढाई फुट चौड़ी और न्यूनाधिक वर्षानुसार गहरी होनी चाहिए। साधारणतः फुट-डेढ़ फुट चौड़ी काफी होंगी। नालियों की बाजू का ढाल वहुत हलका-सा होना चाहिए ताकि वे कटें नहीं। सड़क बीच में से कुछ ऊंची होनी चाहिए, जिसमें पानी न रुककर बगल की नालियों में बह जाय।

सड़क बनाते समय नालियों की मिट्टी सड़क पर डालनी चाहिए, ऐसी मिट्टी जब बरसात में अच्छी तरह से जम जाय तब बीच की आठ फुट तक की चौड़ाई की मिट्टी करीब छः इंच गहरी खुदवाकर उस स्थान पर तीन-चार इंच व्यास के पत्थरों का छः इंच मोटा तह देकर उसे रोलर से दबा देना चाहिए। इसके बाद तीन इंच मोटा गिट्टी का तह डालकर उसे भी दबाना चाहिए। गिट्टी डालकर दबाने के पहले उसपर कुछ बालू (रेत) या मोरम भी डालना चाहिए ताकि वह बंधकर अच्छी जम जाय।

सड़क की नालियां या सिंचाई की नालियां पार करने के लिए छोटी पुलिया (Culvert) बनानी होती है। इनके लिए अच्छी नींव भरकर ईंट-चूने से बनाना अच्छा होगा। जहां व्यय कम करना हो, लोहे के नल डालकर उनपर मिट्टी डाली जा सकती है अथवा लकड़ी की पुलें बन सकती हैं।

बरसात के पहले या बाद में सड़कों की मरम्मत का भी ध्यान रखना चाहिए। जहां कहीं बैठ जाय या कट जाय तो बैठने की जगह कुछ खोदकर भर देनी चाहिए। जहां कट जाय वहां तुरन्त मरम्मत कर देनी चाहिए।

मुद्रा, नाप, तोल, गणना-सम्बन्धी उपयोगी सारणियां

मुद्रा

भारतीय मुद्रा

३ पाई = १ पैसा
४ पैसा = १आना या १अन्नी
२ अन्नी = १ दोअन्नी
२ दोअन्नी = १ चौअन्नी
२ चौअन्नी = १ अठन्नी
२ अठन्नी = १ रु. या १६ आना

पाई और पैसे तांबे के और अन्य सिक्के मिश्रित धातु के होते हैं। महाजनी लिखावट में निम्नलिखित चिह्न काम में लाये जाते हैं)। पैसा,)॥ दो पैसा,)॥। तीन पैसा, -)एक आना, =)दो आना, ≡) तीन आना, ।) चार आना, ॥) आठ आना, ॥।) बारह आना, १) रुपया यदि। हमें पांच रुपये पन्द्रह आने ग्यारह पाई लिखना है तो वह ५॥।≡)॥।२ लिखा जायगा।

प्रचलित कागजी मुद्रा

नोट १), २), ५), १०), १००), १,०००), ५०००), १०,०००), रुपया

विदेशी मुद्राओं का भारतीय मुद्रा में मूल्य विनिमय

		भारतीय मुद्रा
१ अंग्रेजी पौंड	=	१३=)
१ अमेरिकन डालर	=	४॥।)॥
१०० फ्रांसीसी फ्रेंक	=	१।-)॥।
१०० इटली का लीरा	=	॥।)।

		भारतीय मुद्रा
१ पश्चिमी जर्मनी का मार्क	=	१=)
१ मिश्र का पौंड	=	१३।।।-)
१०० जापान के येन	=	१।)।।
१ रूस का रूबल	=	१) लगभग

नाप

लम्बाई

८ पड़े जौ=१ इंच (आठ जौ को बराबर मिला कर रखने में जितनी दूरी आजाय=१ इंच मानी जाती है)

१२ इंच	=१ फुट
३ फुट	=१ गज
२२० गज	=१ फर्लांग
८ फर्लांग या १७६० गज	=१ मील

साधारण लम्बाई नापने के लिए १०० फुट की जरीब जिसमें १०० कड़ियां होती हैं काम में लाई जाती है। खेतों की नपती के लिए ६६ फुट की जरीब काम में आती है और १० वर्ग जरीब=१ एकड़ होती है। इसमें भी कड़ियां १०० होती हैं।

क्षेत्रफल का नाप

१४४ वर्ग इंच	=१ वर्ग फुट
९ वर्ग फुट	=१ वर्ग गज
४८४० वर्ग गज	=१ एकड़
९४० एकड़	=१ वर्ग मील

यद्यपि भूमि का क्षेत्रफल अब एकड़ों में ही नापा जाने लगा है, परन्तु कहीं-कहीं बीघे में भी नापा जाता है। बीघा सब जगह का समान नहीं होता, इसलिए पाठकों की जानकारी के लिए मुख्य-मुख्य भागों के बीघे

का मान वर्गगज और एकड़ में नीचे दिया जाता है:—

प्रांत	एकड़		बीघा	बीघा		वर्ग गज
बंगाल	१	=	३.०२	१	=	१६००
पंजाब	१	=	२.००	१	=	२४२०
उत्तर प्रदेश	१	=	१.६०	१	=	३०२५
मद्रास	१	=	१.४३	१	=	३४००
बम्बई	१	=	१.२३	१	=	३९२७
बिहार	१	=	१.२०	१	=	४०३३

कपड़े का नाप

३ अंगुल =१ गिरह

८ गिरह =१ हाथ=१८ इंच

२ हाथ =१ गज =३६ इंच

सूत का नाप

१ स्कीन =१२० गज

७ स्कीन =१ हेंक

१८ हेंक =१ स्पिंडल

एक पौंड (आधा सेर) रुई में जितने हेंक बनते हैं वे काउन्ट कहलाते हैं। अधिक लम्बे रेशेवाले कपास से अधिक काउन्ट निकलते हैं और जितने अधिक काउन्ट निकलेंगे उतना ही मुलायम (फाइन) कपड़ा बनेगा।

कोण का नाप

६० सेकण्ड =१ मिनिट

६० मिनिट =१ डिग्री

९० डिग्री =१ समकोण

कभी-कभी लम्बाई का नाप मीटर से भी होता है जिसका मान निम्न लिखित है।

१ मीटर=१० डेसीमीटर=१०० सेंटीमीटर=१००० मिली-मीटर।

१ कीलोमीटर=१० हेक्टामीटर= १०० डेकामीटर=१००० मीटर ।

१ मीटर=३९. ३७०७९ इंच

सूखे पदार्थों का नाप

भारत में कई जगह अनाज की बिक्री नाप से होती है, परन्तु अब धीरे-धीरे तोल का प्रचार बढ़ रहा है, इसलिए जगह-जगह के नाप का ब्योरा स्थानाभाव के कारण नहीं दिया जाता । सिर्फ एक 'बुशल' का विवरण दिया जाता है क्योंकि अमेरिका की पुस्तकों में बुशल का हिसाब दिया जाता है ।

१ बुशल	= १.२८५ घन फुट	१ बुशल जौ	= २४ सेर
१ बुशल गेहूं	= ३० सेर	,, मक्का	= २८ सेर
१ बुशल जई	= १६ सेर	,, आलू	= ३० सेर

इतना स्मरण रहे कि अनाज के बीज जाति अनुसार हलके-भारी भी होते हैं । इससे उपर्युक्त मान में कुछ थोड़ा-सा अन्तर हो सकता है ।

साधारणतः कभी-कभी औषधियों के नाप चम्मच के रूप में भी दे देते हैं । उसका मान निम्नलिखित है ।

३ चाय-चम्मच =१ टेबल चम्मच

१६ टेबल चम्मच =१ कप

२ कप =१ पाईन्ट

२ टेबल चम्मच मैदा =$\frac{1}{2}$ छटांक

तरल पदार्थों के नाप

दवाई का नाप—

६० मिनिम =१ ड्राम १ चाय चम्मच ।

८ ड्राम =१ औंस

२० औंस =१ पाईन्ट

विज्ञानशालाओं में तरल पदार्थों की इकाई मिलीलिटर में होती है ।

जिसे सी. सी. अर्थात् क्यूबिक (घन) सेंटीमीटर भी कहते हैं ।

१००० मिलीलिटर	=	१ लिटर
५ औंस	=	१ जिल (Gill)
४ जिल	=	१ पाइन्ट
२ पाइन्ट	=	१ क्वार्ट
४ क्वार्ट	=	१ गैलन—२७७·२७४ घन इंच
६.२५ गैलन	=	१ घन फुट
१ गैलन पानी	=	१० पौण्ड

तोल

महाजनी तोल

८ रत्ती	=	१ माशा
१२ माशा	=	१ तोला=१ रु.
५ तोला	=	१ छटांक ऽ–
४ छटांक	=	१ पाव ऽ।
४ पाव या १६ छटांक	=	१ सेर ऽ१
५ सेर	=	१ पंसेरी ऽ५
८ पंसेरी	=	१ मन १ऽ
६ मन	=	१ मानी

जौहरियों का तोल

८ रत्ती ऽऽ ८	=	१ माशा १ ऽऽ
१२ माशा	=	१ तोला=१ रुपये भर

अंग्रेजी महाजनी तोल

२७.३४ ग्रेन	=	१ ड्राम
१६ ड्राम	=	१ औंस
१६ औंस	=	१ पौंड

११२ पौण्ड	=१ हंड्रेडवेट
२० हं०	=१ टन

टन दो प्रकार के माने गये हैं

लाँग टन	=२२४० पौ.
अमेरिकन शार्ट टन	=२००० पौ.

दवाईयों का तोल

२० ग्रेन	=१ स्क्रुपल
३ स्क्रुपल	=१ ड्राम
८ ड्राम	=१ औंस
१२ औंस	=१ पौण्ड

बिज्ञानशालाओं के तोल

१० मिली ग्राम	=१ डेसी ग्राम
१० डेसी ग्राम	=१ सेंटी ग्राम
१० सेंटी ग्राम	=१ ग्राम
१० ग्राम	=१ डेका ग्राम
१० डेका ग्राम	=१ हेक्टा ग्राम
१० हेक्टा ग्राम	=१ किलो ग्राम
१ किलो ग्राम	=२.०५ पौ०=७००० ग्रेन
१ ग्राम	=१५.४२३ ग्रेन
१ ग्रेन	=०.०६५ ग्राम
१ पौ.	=४५३.६ ग्राम
१ तोला	=११.६६१ ग्राम

गणना

वस्तुओं की गणना

२० इकाई	= १ कोड़ी
१२ इकाई	= १ दर्जन (डज़न)

१२ दर्जन	=१ ग्रास

कागज की गणना

२४ कागज	=१ दस्ता
२० दस्ता	=१ रीम

समय की गणना

भारतीय

६० अनुपल	=१ विपल
६० विपल	=१ पल
६० पल	=१ घड़ी
६० घड़ी	=१ दिन
१५ दिन	=१ पक्ष
३० दिन	=१ महीना
१२ महीना	=१ वर्ष
१२ वर्ष	=१ युग
१०० वर्ष	=१ शताब्दी
२॥ घड़ी	=१ घंटा
३ घंटा	=१ प्रहर

अंग्रेजी

६० सेकन्ड	=१ मिनिट
६० मिनिट	=१ घंटा
२४ घंटा	=१ दिन रात
७ दिन	=१सप्ताह
५२ सप्ताह	=१ वर्ष=३६५ दिन

एक प्रकार के मान को दूसरे में बदलना

निम्नांकित अंकों से गुणा करने से मान बदले जा सकते हैं।

	सीधा	उलटा
घन फुट से मन (जल)	× ०.७५५	× १.३२४
घन फुट से टन ,,	× ०.०२७८	× ३५.९
घन फुट से पौण्ड	× ६२.२७८६	× ०.०१६०५
घन फुट से गैलन	× ६.२२८	× ०.१६०५
घन फुट से लिटर	× २८.३३	× ०.०३५३२
लिटर से गैलन	× ०.२२	× ४.५४३
घनफुट से बुशेल	× ०.७७८	× १.२८५
पौण्ड से किलोग्राम	× ०.४५३६	× २.२०५
एकड़ से वर्ग गज	× ४८४०	× ०.०००२०७
मील से गज	× १७६०	× ०.००५६८

कोठे, कोठी, या भखारी में भरे हुए अनाज का वजन [1] मालूम करने अथवा वजन मालूम हो तो उसके लिए कितना स्थान लगेगा इसकी जानकारी निम्नांकित अंकों से गुणा करने से होगी।

---

१. मेरे मित्र देवनारायणजी ठाकुर ने अनाज नाप तोल करके जो अंक भेजे उनके आधार पर।

चूंकि एक ही प्रकार के अनाजों में जाति तथा स्थानानुसार घनत्व में थोड़ा-सा अन्तर हो जाता है, इसलिए उपर्युक्त अंकों से दूसरे स्थानों में बहुत ही थोड़ा अन्तर हो सकता है।

	घन-फुट से वजन मन में	वजन मन से घन-फुट
गेहूं	×०.६२९	×१.५९
मक्का	×०.६०४	×१.६६
ज्वार	×०.५५९	×१.७९
बाजरा	×०.६००	×१.६७
जौ	×०.५३१	×१.८९
धान	×०.४७७	×२.१०
जई	×०.३७५	×२.६९
चना	×०.६२५	×१.६०
उड़द	×०.६१८	×१.६२
मूंग	×०.५४३	×१.८४
तूर	×०.६३३	×१.५८
मटर	×०.५७८	×१.७३
सायबीन	×०.५५६	×१.८०
मेथरा	×०.५७८	×१.७३
बरसीम	×०.५८१	×१.७२
सन के बीज	×०.५३४	×१.८७
अलसी	×०.५२५	×१.९१

एक वर्गगज की उपज से एक एकड़ का अनुमान

किसी खेत में एक-एक वर्ग गज की फ़स्ल को पांच-सात जगह से काट-कर उसकी औसत निकाल ली जाय तो वह उपज एक वर्गगज की होगी। उससे एक एकड़ की उपज निम्नलिखित सारिणी से जानी जा सकती है।

उपज प्रति वर्ग गज	उपज प्रति एकड़		
	मन	सेर	छ०
१ छटांक	७	२२	८
२ ,,	१५	५	—
३ ,,	२२	२७	८
४ ,,	३०	१०	—
५ ,,	३७	३२	८
६ ,,	४५	१५	—
७ ,,	५२	३७	८
८ ,,	६०	२०	—
९ ,,	६८	२	८
१० ,,	७५	२५	—
११ ,,	८३	७	८
१२ ,,	९०	३०	—
१३ ,,	९८	१२	८
१४ ,,	१०५	३५	—
१५ ,,	११३	१७	८
१ सेर	१२१	—	—
२ ,,	२४२	—	—
३ ,,	३६३	—	—
४ ,,	४८४	—	—
५ ,,	६०५	—	—

पौधों की दूरी और प्रति एकड़ संख्या

गिनती निकालने का सूत्र

$$\frac{४३५६०}{(\text{पंक्तियों का अन्तर फुट में}) \times (\text{पौधों का अन्तर फुट में})} = \text{संख्या पौधे प्रति एकड़}$$

उदाहरण $\frac{४३५६०}{२' \times २'} = १०,८९०$

अन्तर पंक्तियों में		अन्तर पौधों में		
फुट	इंच	फुट	इंच	संख्या प्रति एकड़
०	६	०	६	१७४,२४०
०	९	०	९	७७,४४०
१	०	०	६	८७,१२०
१	०	१	०	४३,५६०
१	६	०	६	५८,०८०
१	६	१	०	२९,०४०
१	६	१	६	१९,३६०
२	०	०	६	४३,५६०
२	०	१	०	२१,७८०
२	०	१	६	१४,५२०
२	०	२	०	१०,८९०
३	०	०	६	२९,०४०

अन्तर पंक्तियों में		अन्तर पौधों में		
फुट	इंच	फुट	इंच	संख्या प्रति एकड़
३	०	१	०	१४,५२०
३	०	१	६	९,६८०
३	०	२	०	७,२६०
३	०	२	६	५,८०८
३	०	३	०	४,८४०
४	०	०	६	२१,७८०
४	०	१	०	१०,८९०
४	०	१	६	७,२६०
४	०	२	०	५,४४५
४	०	३	०	३,६३०
४	०	४	०	२,७२२
५	०	५	०	१,७४२
६	०	६	०	१,२१०
८	०	७	०	६८०
१०	०	१०	०	४३५
१५	०	१५	०	१९४
२०	०	२०	०	१०९
२५	०	२५	०	७०
३०	०	३०	०	४८

: ११ :

क्षेत्रफल और घनफल निकालने के सूत्र

१—क्षेत्रफल निकालने के सूत्र
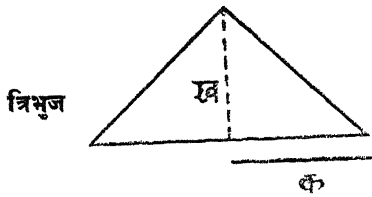
आधार की आधी लम्बाई × आधार के संमुख कोण तक की ऊंचाई।

क × ख

क
ख
ग
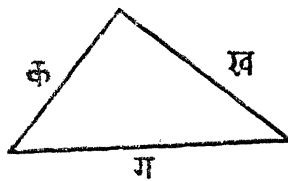
जहां तीनों भुजाओं की लंबाई मालूम हो और ऊंचाई नहीं मालूम हो

$\sqrt{घ\ (घ-क)\ (घ-ख)\ (घ-ग)}$

$घ = \frac{क}{२} + \frac{ख}{२} + \frac{ग}{२}$

क × ख

क × ०·४३३ (क = बराबर एक भुजा)
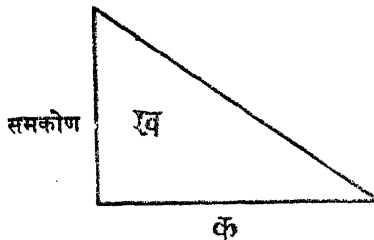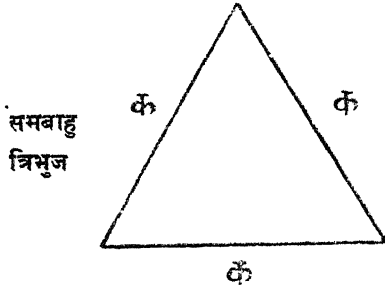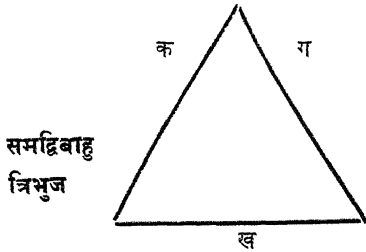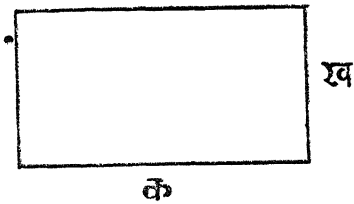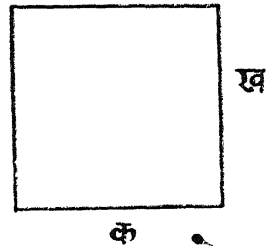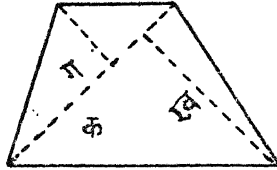
चतुर्भुज क्षेत्र

कर्ण क × कर्ण के सम्मुख कोणों की दूरी का योग ख + ग

समानान्तर चतुर्भुज क्षेत्र
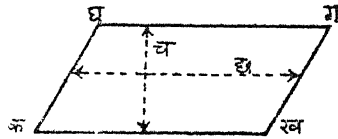
एक भुजा × समानान्तर भुजाओं की दूरी

कख × च
या कघ × छ।

सम चतुर्भुज

$\frac{1}{2}$ (कर्ण$_1$, कर्ण$_2$)
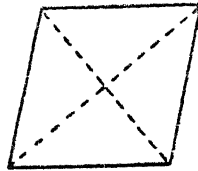
समलम्ब चतुर्भुज
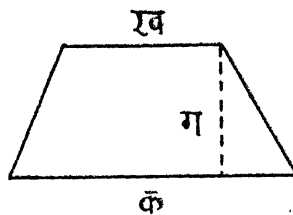
$\frac{1}{2}$ (क + ख) × ग
भुजाओं की दूरी

समबाहुपंच या अधिक कोणक्षेत्र
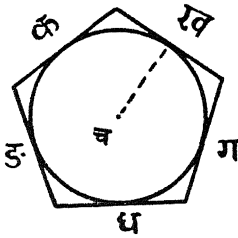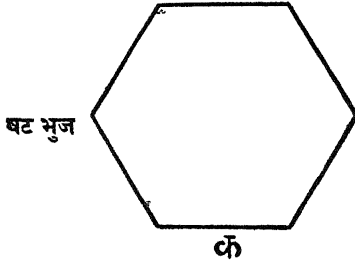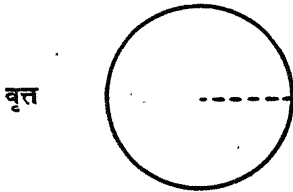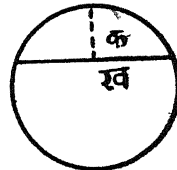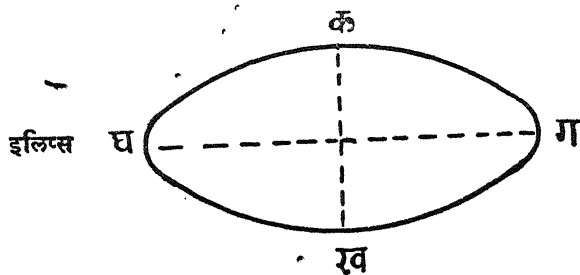
$$\frac{कख}{२} \times \frac{गघ}{२} \times \frac{२२}{७}$$

जिस खेत का आकार टेढ़ा-मेढ़ा हो—
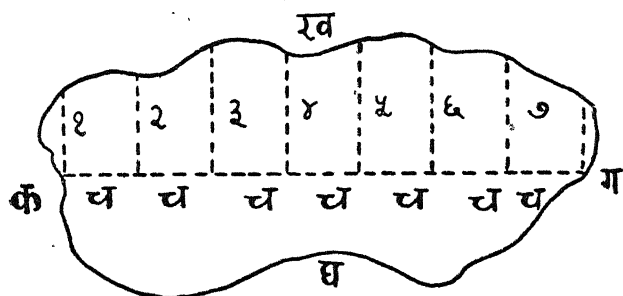
च—बराबर दूरी

१,२ ...८—आफ सेट

$\frac{१}{३}$ पहले और आखिरी आफसेट की लम्बाई का योग

+२ (बचे हुए में से विषम संख्या के आफसेट की लम्बाई का योग)

+४ (बचे हुए में से आफसेट की लम्बाई का योग)

$\frac{१}{३}$ (१+८)+२ (३,५ और ७ की लम्बाई)+४ (२,४,६, आफसेट की लम्बाई ।

उपर्युक्त सूत्र से क ख ग का क्षेत्रफल निकलेगा । उसी रीति से क घ ग का भी निकाल लेना चाहिए ।

यदि खेत बहुत बड़ा हो तो उसका क्षेत्रफल त्रिभुज तथा सम लम्ब चतुर्भुज आकृतियों से निकाला जा सकता है।
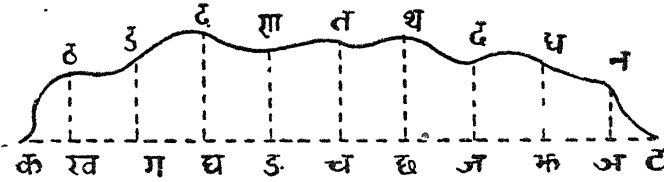
क, ख ठ, और ञ, ट, न का क्षेत्रफल त्रिभुजों के क्षेत्रफलों के सूत्र से निकाला जा सकता है। शेष का ख ग ठ ड, ग घ ढ़ ड इत्यादि सम लम्ब चतुर्भुजों के सूत्र से निकाल सकते हैं।

२—घनफल निकालने के सूत्र

नालियां, नहर या कुओं की खुदाई, सड़क तथा मकानों की बनावट ईंट, चूना, पत्थर इत्यादि के अन्य काम और अनाज, भूसा, खाद इत्यादि के नाप, वजन वगैरह इन सूत्रों से निकाले जा सकते हैं। घनफल के सूत्रों के साथ उनकी सतहों का क्षेत्रफल निकालने के सूत्र भी दिये गये हैं।
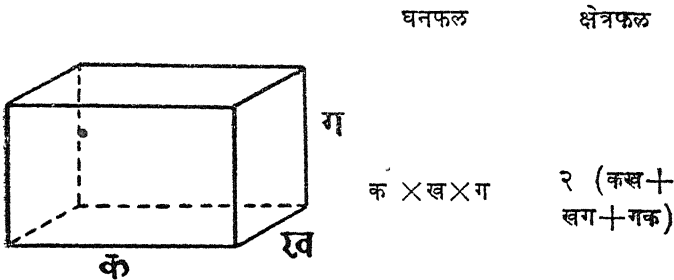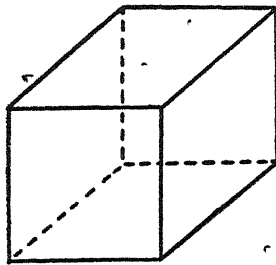
	घनफल	क्षेत्रफल
	क × ख × ग	२ (कख + खग + गक)

सरल रेखांकित घन

घन—जिसकी छः सतह बराबर हों
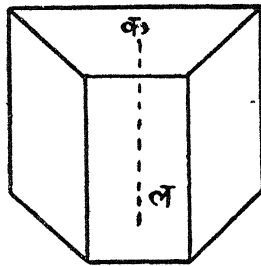
त्रिपार्श्व—जिसकी सतह समानांतर चतुर्भुज क्षेत्रों से बनी हों
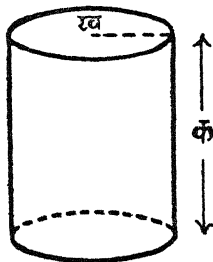
बेलन

---

* Perimeter of the cross section
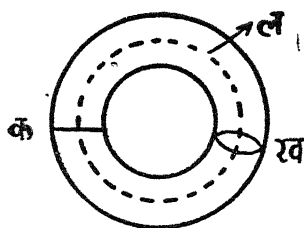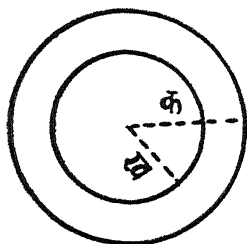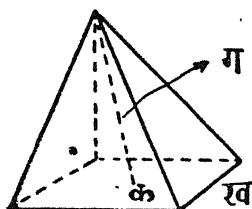
सूची स्तम्भ—वह ठोस पदार्थ जिसका आधार सरल रेखान्तरित क्षेत्र हो और बाजुएं त्रिभुजों द्वारा बनी हुई हों और त्रिभुजों के शीर्षक एक स्थान पर मिलते हों।
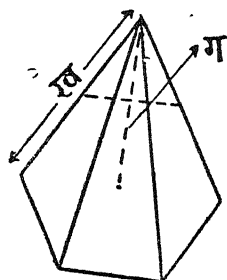
	घनफल	क्षेत्रफल
	$\frac{१}{३}$ क × ग का क आधार का क्षेत्रफल ग ऊंचाई	क + $\frac{१}{२}$ आधार के घेरे की लंबाई × ढाल की ऊंचाई ख

सम शुचि स्तम्भ
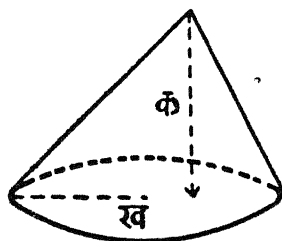
$\frac{१}{३} \times \frac{२२}{७}$ × ख^{२} × क	आधार का क्षेत्रफल + परिधि × $\frac{१}{२}$ तिरछी ऊंचाई

शंकु—उस शुची स्तम्भ को कहते हैं जिसका आधार गोल हो

$\frac{१}{३} \times \frac{२२}{७}$ × ख^{२} × क	आधार का क्षेत्रफ़ल + परिधि × $\frac{१}{२}$ तिरछी ऊंचाई

सम शंकु
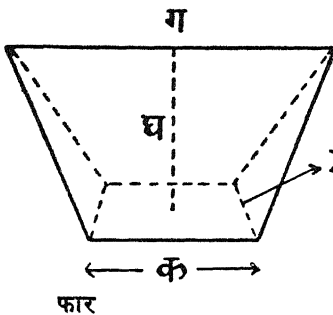
*Frustum of circular cone बाल्टी जैसे बर्तन में तरल पदार्थ भरा हो तो उसके घनफल की गणना ऐसे सूत्र से हो जाती है।

: १२ :

भारतीय भूमि का क्षेत्रफल'

नाम प्रान्त	सर्वेअर जनरल द्वारा अनुमानित कुल क्षेत्रफल '००० एकड़	वह क्षेत्रफल जो बोया गया '००० एकड़	वह क्षेत्रफल जो एक बार से अधिक बार बोया गया '००० एकड़	कुल '००० एकड़	सिचाई का क्षेत्रफल. '०००एकड़
आंध्र	४०,७११	१५,५०९	१,८९९	१७,४०८	५,००१
आसाम	५४,४०८	५,४९९	८१४	६,३१३	१,३३९
बिहार	४५,०११	२२,११५	४,८८२	२६,९९७	५,५९५
बम्बई	७१,२१३	४१,१४५	१,४५८	४२,६०३	२,२२४
मध्य प्रदेश	८३,३७५	२९,६६९	२,५०३	३१,१७२	२,०७०
मद्रास	३८,६३२	१४,८७९	२,२०१	१७,०८०	५,४१९
उड़ीसा	३८,४८७	१२,१५४	३,२८२	१५,४३६	२,३४५
पंजाब	२३,९२२	१२,४११	२,२३५	१४,६४६	५,१४४
उत्तर प्रदेश	७२,५९७	४०,१०८	९,२१४	४९,३२२	१३,८९६
पश्चिमी बंगाल	१९,६९६	११,७३०	१,५०४	१३,२३४	२,४९३
हैदराबाद	५२,५७२	२४,०७७	२८७	२४,३६४	१,५६२

जम्मू और काश्मीर (पुरा)	५९,३७९	१,५३६	६४	१,६००	६५१
मध्य भारत	२९,७८५	१०,९३२	५२०	११,४५२	५५७
मैसूर	२१,३१६	८,२३७	२५९	८,४९६	१,०५८
पेप्सू	६,४३१	४,४०२	८६७	५,२६९	२,२८३
राजस्थान	८३,३२७	२३,६२२	१,१७०	२४,७९२	३,११९
सौराष्ट्र	१३,६५५	३,५४०	१५०	३,६९०	१८९
ट्रावनकोर-कोचीन	५,८५२	२,७६०	४१०	३,१७०	९१७
अजमेर	१,५४७	३८५	७३	४५८	१३५
भोपाल	४,४०२	१,५७३	२९	१,६०२	२१
विलासपुर	२९०	७५	४२	११७	८
कुर्ग	१०१५	१७२	१	१७३	८
दिल्ली	३७०	२३२	४६	२७८	७८
हिमाचल प्रदेश	६,६९२	५६२	३२४	८८६	१५६
कच्छ	१०,८६४	७७८	२७	८०५	८५
मनीपुर	५,५१८	२१०	—	२१०	—
त्रिपुरा	२,५८०	३९०	८२	४७२	—
विंध्य प्रदेश	१५,१०४	३,८८३	६००	४,४८३	२०४
अंडमान निकोवार	२,०५८	१०	—	१०	—
कुल[1]	८१०,८०९	२९१,५९५	३४,९४३	३२६,५३८	५५,५५७

1. Agricultural situation in India Vol VIII No 1 Dec., 1953 p. 706 (Provisional)

: १३ : विभिन्न प्रकार की फसलों का क्षेत्रफल और उपज[1]

	नाम फसल	क्षेत्रफल '००० एकड़		उपज '०००टन (१टन=२७.२मन)	
		१९५१–५२[2]	१९५२–५३[3]	१९५१–५२[2]	१९५२–५३[3]
धान्य	गेहूं	२३,४५०	२४,०४१	६,०३९	६७,६२
	चावल	७३,६६५	७४,६७४	२०७४१	२३,४२४
	जव	७८,३५	७,५००	२,२९३	२,६६४
	जुवार	३९,१४४	४१,९४५	५९,४४	६,०३८
	बाजरा	२२,८३९	२५,२८२	२,२९९	२,९२२
	मक्का	८,०७३	८,७९६	२,०२१	२,६०७
	रागी	५,३९९	५,३८८	१,२१२	१,२३५
	छोटे धान्य	११,८३४	१२,१७०	१,८९१	१,९३२
	कुल	१९२,२३९	१९९,७९६	४२,४४०	४७,५८४
दलहन	उड़िद	३,१३५	२,९३०	३६६	३०५
	कुलथी	२,५३१	२,७११	१८२	१८६
	खिसारी	१,७५९	१,७७८	२२१	२४६
	चना	१६,८५७	१७,२६७	३,२९३	३,७७१
	तूर (अरहर)	६,०४५	५,८५२	१,९०१	१,६०२
	मटर	२,३५२	२,२४२	६१८	६१२
	मसूर	१,१०७	१,०९९	१८४	१९१

: १५ : नौकरों को माहवारी वेतन चुकाने की सारणी

वेतन दर	माह २८ दिन का		माह २९ दिन का		माह ३० दिन का		माह ३१ दिन का	
माहवारी रु.	१ दिनका	१ सप्ताहका	एक दिनका	एक सप्ताहका	एक दिनका	एक सप्ताहका	एक दिन का	एक सप्ताह का
१	)॥१	।)	)॥१	≡)॥१	)॥	≡)॥२	)॥	≡)॥१
२	–)२	॥)	–)१	।≡)॥	–)१	।≡)॥	–)	।≡)।
३	–)॥	॥)	–)॥२	॥≡)॥१	–)॥१	॥≡)२	–)॥१	॥=)॥१
४	=)।	१)	=)२	॥≡)।२	=)२	॥=)॥२	=)१	॥=)।२
५	=)॥१	१।)	=)॥	१≡)।१	=)॥२	१=)॥२	=)॥१	१=)१
१०	।–)॥	२॥)	।–)॥	२।=)॥१	।–)।१	२।–)।१	।–)२	२।)२
२०	॥≡)२	५)	॥≡)	४॥–)।	॥=)॥२	४॥=)॥२	॥=)।१	४॥)।
३०	१–)।२	७॥)	१)॥१	७≡)॥१	१)	७)	॥≡)॥	६॥)।२
४०	१।=)॥१	१०)	१।=)१	९॥=)॥	१।–)।१	९।–)।१	१।)॥२	९)॥
५०	१॥)॥१	१२॥)	१॥≡)॥१	१२–)१	१॥=)॥२	११॥=)॥२	१॥–)॥१	११।)॥२
१००	३॥–)२	२५)	३।≡)२	२४=)२	३।–)।१	२३।–)।१	३≡)॥१	२२॥–)३
२००	७=)।	५०)	६॥=)।१	४८।)।२	६॥=)॥२	४६॥=)॥२	६।≡)।	४५=)॥१
३००	१०॥≡)।२	७५)	१०।–)॥	७२।=)॥१	१०)	७०)	९॥=)॥१	६७॥≡)॥१
४००	१४।)॥१	१००)	१३॥)॥२	९६॥)॥१	१३।–)।१	९३।–)।१	१२॥=)।२	९०।–)२
५००	१७॥–)॥	१२५)	१७≡)॥१	१२०॥≡)	१६॥=)॥२	११६॥=)॥२	१६=)१	११२॥=)।२
६००	२१।=)॥१	१५०)	२०॥≡)	१४४॥–)।	२०)	१४०)	१९।–)॥२	१३५।≡)॥
७००	२५)	१७५)	२४=)२	१६८॥≡)२	२३।–)।१	१६३।–)।१	२२॥–)।	१५८–)
८००	२८॥–)२	२००)	२७॥–)।२	१९३–)॥२	२६॥=)॥२	१८६॥=)॥२	२५॥)॥२	१८०॥=)।१
९००	३२=)	२२५)	३१)॥१	२१७≡)॥१	३०)	२१०)	२९)॥	२०३≡)॥१
१०००	३५॥≡)।२	२५०)	३४।≡)॥	२४१।=)१	३३।–)।१	२३३।–)।१	३२।)२	२२५॥)॥२